नीरज परिकल्पना

प्रस्तुति

मिस यूथ - 2012

(कहानी संग्रह)

मैत्री पब्लिकेशन्स, लखनऊ

मिस यूथ - 2012

(कहानी संग्रह)

लेखक :

डॉ. डी.एस. शुक्ला

मैत्री पब्लिकेशन्स, लखनऊ

प्रकाशक :

मैत्री पब्लिकेशन्स

17, अशोक मार्ग, लखनऊ

दूरभाष : 0522-2288381, 09415102821

4041222, 9044074554

© कृति स्वाम्य : लेखक

प्रथम संस्करण : 2018

ISBN : 978-93-84849-11-5

मूल्य : ₹ 200.00

मुद्रक

ए.पी.पी. लखनऊ

MISS YOUTH - 2012

by **Dr. D.S. Shukla**

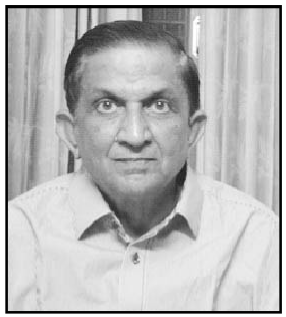

स्व० डॉ० उमा दत्त शुक्ला

समर्पण

प्रस्तुत पुस्तक मेरे परमप्रिय चाचा डॉ. उमा दत्त शुक्ला की स्मृति को समर्पित है। चाचाओं में सबसे छोटे होने के कारण मैं उन्हें 'नान चाचा' पुकारता था। मुझसे कुछ वर्ष ही बड़े होने के बावजूद मेरे 'गुरु, अभिभावक, बंधु, सखा' सभी कुछ (आल इन वन) थे। उनके एकाएक चले जाने से जीवन में रिक्तता आ गई। इस रिक्तता को भरने के प्रयास में, उनकी स्नेहमयी यादों को यह पुस्तक ही समर्पित कर सकता हूँ...विवशता है-

चाचा जी 'वाणी' पत्रिका के एक रचनाकार तिलक शुक्ल, रायबरेली से बहुत प्रभावित थे। हर अंक में उनकी रचनाओं हेतु साधुवाद देते। मुझे अफसोस है कि मैं उनको तिलक शुक्ल से नहीं मिला सका, जिससे वह मिलने को बहुत उत्सुक थे।

-डॉ. डी.एस. शुक्ला

कथामुख

अनुभूतियाँ सभी को होती हैं। इन्हीं अनुभूतियों (अच्छी या बुरी) से हमारा व्यक्तित्व बनता है। जब कोई विशेष अनुभूति संवेदनात्मक रूप से मन में घर कर जाती है तो वह अन्तर्मन में संग्रहीत हो जाती है। अन्तर्मन में संग्रहीत यही संवेदनायें अनुकूल परिस्थितियों में अभिव्यक्ति के माध्यम से निर्झरित हो पड़ती हैं। कभी काव्य के रूप में, कभी कहानी के रूप में।

मेरे साथ भी कुछ ऐसा ही हुआ। अन्तर्मन में समाहित घटनायें अवकाश प्राप्ति के बाद स्वत: कागज़ पर उतरने लगीं। मेरी रचनाओं के अधिकतर पात्र वास्तविक हैं। अभिज्ञान न हो, इस उद्देश्य से कल्पना से आच्छादित कर दिया है। फिर भी मूल घटनायें मन में अभी भी जस की तस अंकित हैं।

पिछली पुस्तक 'हंसनी' में छपी 'उर्मिला' लेखन की प्रारम्भिक कहानियों में से एक है। वास्तविक पात्र 'उर्मिला' की करुण-कथा (ट्रैजिक-स्टोरी) बचपन से ही मेरे मन में अंकित थी।

ईश्वर ने मानव की रचना करने में स्त्री और पुरुष दो वर्ग ही बनाए थे। समयान्तर में हमने अमीर और गरीब की रेखा खींच दी। इस रेखा के नीचे वालों को नीचा मानने लगे। वहीं विधना की गलती से कुछ ऐसों का भी जन्म हो गया जो न स्त्री थे, न पुरुष। ऐसे लोगों को हमने 'किम् नर?' अथवा किन्नर कहकर समाज से बहिष्कृत कर दिया।

ध्यातव्य है कि शास्त्रों ने इनको 'देव-श्रेणी' प्रदान की, क्योंकि वह 'अमर' हैं'। धर्मग्रंथ इन किन्नरों कि स्तुति से भरे पड़े हैं।

ऐसी दिव्यांग पर आधारित कहानी ही इस कहानी-संग्रह का शीर्षक बनी। आशा है कि इस कहानी से ऐसे दिव्यांगों के बारे में हम अपनी रूढ़िवादी अभिमत बदल सकेंगे।

पिछली दो पुस्तकों की भांति इस पुस्तक के कलेवर को निखारने में सर्वश्री रमेश चंद्र श्रीवास्तव एवं दिव्यरंजन पाठक का बहुमूल्य योगदान रहा है। मैं सच्चे हृदय से उनका आभारी हूँ।

मैं इस पुस्तक के प्रकाशन हेतु 'मैत्री पब्लिकेशन्स, लखनऊ' को धन्यवाद ज्ञापित करता हूँ।

और अंत में मैं अपनी सहचरी का गुणगान करता हूँ, जिसने अपने व्यक्तिगत समय के एक बड़े हिस्से को मेरे लेखन हेतु साझा किया।

कृति की असली कसौटी तो पाठक ही होते हैं। पाठकों द्वारा स्वीकृति की अपेक्षा और प्रतीक्षा हर रचनाकार को होती है, मुझे भी है-

डॉ. डी.एस. शुक्ला

शुभाशंसा

आज डॉ. डी.एस. शुक्ला की नवीनतम कृति 'मिस यूथ - 2012' हमारे हाथों में है। यह हर्ष और सौभाग्य का विषय है। चिकित्सक के रूप में विख्यात डॉ. शुक्ल अब साहित्य जगत में एक स्थापित लेखक हैं जो निरंतर अपने जीवनानुभव का कथानुभव के रूप में विलक्षण उपयोग कर रहे हैं।

मुझे स्मरण है 'हंसनी' नामक उनके कथा-संग्रह का लोकार्पण समारोह। कथा प्रेमियों की अच्छी-खासी भीड़ और समारोह के अंत होते ही डॉ. शुक्ला ने 'हंसनी' की जितनी प्रतियाँ विक्रय हेतु रखी थीं, सभी की सभी कथा प्रेमियों के हाथों में चली गईं और आगे भी इसकी माँग बनी रही। मैंने 'हंसनी' पर अपना अभिमत देते हुए लिखा था-

''कहानीकार के रूप में डॉ. डी.एस. शुक्ला एक सिद्धहस्त रचनाकार हैं वह जीवन के आस-पास बिखरी घटनाओं और बिखरे पात्रों में अपने कथा-सूत्र को सुगमता से ढूँढ़ लेते हैं और फिर ऐसी विलक्षण कहानी रचते हैं। जो हमें बहुत देर तक और दूर तक प्रभावित किये बिना नहीं रहती। कई बार तो उनकी कहानी उनके जीवन में घटित सत्य घटना पर ही आधारित होती है। जिनके संबंध में उनके सुपरिचित अनुमान लगा लेते हैं कि सिर्फ पात्रों और स्थानों के नाम बदले हुए हैं। अनुभव की प्रामाणिकता को अपने कथा-लोक के अभिन्न अंग बनाने के कारण उनकी कहानियाँ अत्यंत विश्वसनीय एवं स्वाभाविक हो उठती हैं और उनकी उत्तप्त जीवन्तता हमारे मर्म को गहराई तक छू जाती है।

कहते हैं कि हर जीवन शेष होता है तो बचती है-एक कहानी! भारतेन्दु हरिश्चन्द्र ने लिखा है कि एक दिन सभी साश्रु नयन स्मरण करेंगे और (उनके) प्रिय हरिश्चन्द्र की कहानी ही शेष रह गई है-

''कहेंगे नैनन नीर भरि-भरि सबै,
प्यारे हरिश्चन्द्र की कहानी रह जायेगी।''

कई व्यक्तियों के जीवन में इतनी घटनाएँ एवं इतने पात्र गुँथे होते हैं कि

उनके जीवन में औपन्यासिक विस्तार में कई कहानियाँ समा जाती हैं। बस दिन ढलते ही एक कहानी शुरू होती है, जो रात की गहराइयों में खो जाती है और जिसका अंत 'अज्ञात' ही रह जाता है। सुकवि 'बच्चन' की निम्न पंक्तियों पर दृष्टि डालें-

पूर्ण कर दे वह कहानी
जो शुरू की थी सुनानी
आदि जिसका हर निशा में,
अंत चिर अज्ञात।
साथी सो न, कर कुछ बात।

कहते हैं कि साहित्यकार एक नहीं, कई जीवन जी लेता है। यह कथन डॉ. शुक्ला के साथ अक्षरशः सत्य है। उन्हें जो कुछ भी अनुभव के रूप में मिला, जितने पात्र उनके जीवन में आये, जितनी घटनायें उनके जीवन में या आस-पास घटित हुईं इन सबको डॉ. शुक्ला ने जिया ही नहीं अपितु कथानुभव के रूप में सृजनधर्मिता के साथ विलक्षण रूप में जीवंत किया है।

इस तारतम्य में 'मिस यूथ - 2012' की कहानियाँ एक जीवंत प्रमाण हैं।

'कंकाल' शीर्षक कहानी में 'खण्डित व्यक्तित्व' की मनोव्याधि का प्रभाव पूर्ण चित्रण हुआ है। ''केज्ड बर्ड' में नारी की विवशता का चित्रण लेखक एक प्रतीक के माध्यम से करता है जो 'पराधीन सपनेउँ सुख नाहीं' की प्रभावशाली पुष्टि है। कहानी में पिंजड़े में कैद एक चिड़िया आजाद कर दी जाती है, किन्तु वह जैसे ही बाहर निकलती है, एक कौआ उस पर झपट पड़ता है परिणामतः अपनी जान बचाने हेतु चिड़िया उस पिंजड़े में वापस आ जाती है और फिर से बंधन को अनन्योपाय स्थिति में स्वीकार कर लेती है। जीवन जीने की यह शर्त कितनी कठिन है। भला, पिंजड़े के पंछी के दर्द को, जो प्रकारान्तर से नारी मन का दर्द है, कौन समझ सकता है ? कहानी 'किशोर मन' में नारी की देह के प्रति एक किशोर के यौनाकर्षण को विलक्षण रीति से चित्रित किया गया है। किशोर को जब ज्ञात होता है कि वह जहाँ शृंगार ढूँढ़ रहा है, वहाँ तो मातृत्व की उपस्थिति है, तब वह ग्लानि से भर जाता है और घर जाकर अपनी माँ के आँचल में आँसू बहाकर इस अपरोध-बोध से मुक्ति पाने का प्रयास करता है।

'हम सबके अन्दर शैतान जिन्दा है' वस्तुत:, एक धर्मपालक पादरी के अन्दर पल रहे स्वार्थ, लोभ एवं द्वेष की कहानी है, जो अपनी रोजी-रोटी और 'दुकान' चलाने हेतु एक मरणासन्न शैतान की सहायता करता है तब शैतान पादरी के अन्तर्मन को पहचानता हुआ उससे कहता है; मैं तुम्हारे अन्दर जिन्दा हूँ, सदैव जिन्दा रहूँगा।' कहानी में अन्तर्निहित व्यंग्य हमें अन्दर तक बेध जाता है।

'गोलियाँ हाजमोला की' आज के समाज में व्याप्त छल, विकृति एवं विडम्बना को अत्यन्त तीखे ढंग से उजागर करते हैं। कहानी में 'डेवलपमेन्ट' विभाग का एक बाबू अधिकारियों को कामोद्दीपक गोलियाँ खिलाकर अपनी स्थिति को मजबूत बनाये हुए है तथापि बाद में यह सत्य उजागर होता है कि गोलियाँ वस्तुत: हाजमोला की थीं और बाबू स्वयं नपुंसक था।

मिस यूथ -2012 में एक सर्जन एवं एक सुन्दरी की प्रेम-गाथा के आस-पास कहानी का ताना-बाना बुनते हुए रक्त संबंध से बाहर 'सरोगेसी' के तथ्य को उजागर किया गया है। पूरी कहानी अत्यन्त तीव्रता के साथ घटनाओं के चढ़ाव-उतार को लेकर चलती है। इसमें प्रेम के अत्यन्त संवेदनशील प्रसंग तथा पूरी नाटकीयता के साथ न्यायालय के दृश्यों का भी चित्रण है। यह कहानी एक फिल्मी पटकथा की भाँति है, अत: लेखक ने यह दिखलाया है कि इसके कथानक पर एक अत्यन्त हिट फिल्म भी बनती है। इस कृति का नामकरण भी इसी कहानी के शीर्षक पर आधारित है।

कहानियाँ तो कई हैं, जिनका उल्लेख प्रासंगिक प्रतीत होता है, तथापि एक सत्यकथा का उल्लेख मैं अवश्य करना चाहूँगा जिसका शीर्षक है, 'खिचड़ी राधा-कृष्ण की'। राधा-कृष्ण के प्रेम में अनुरक्त रायबरेली के जिस मुस्लिम व्यक्ति को लेकर यह कहानी लिखी गई है (जो खिचड़ी के चावल में 'राधा' तथा काले उरद में कृष्ण के दर्शन करता है), वह व्यक्ति कोई कल्पित चरित्र नहीं है और पूरा वृतांत एक सत्यकथा है। इसी प्रकार 'नकली जिलाधीश' एवं कतिपय अन्य कहानियाँ भी सत्यकथाएँ हैं।

कहते हैं, कभी-कभी सत्य भी कल्पना की परिधियों से कहीं आगे बढ़ जाता है। डॉ. शुक्ला ने ऐसी कई सत्य घटनाओं को, जो कल्पना से

अधिक विचित्र हैं, इस कृति में यथावत् स्थान दिया है। शेष कहानियों में पात्रों के नाम-पते आदि बदल दिये हैं, तथापि यह सत्य है कि डॉ. शुक्ला जीवनानुभव को कथानुभव में परिवर्तित कर कथा-लेखन में सिद्ध हस्त हैं।

इस कृति की कहानियों में जहाँ एक ओर विलक्षण कथात्मकता, प्रभावपूर्ण संवाद एवं सराहनीय घटना संयोजन दृष्टिगत होता है, तो दूसरी ओर इसकी भाषा अत्यन्त सजीवता एवं लालित्य के साथ प्रभावपूर्ण है। कथ्य एवं शिल्प की श्रेष्ठता के साथ प्रत्येक कहानी अपने अप्रतिम सम्मोहन में हमें बाँधे रहती है।

आशा है, साहित्य संसार में इस कृति का सर्वत्र स्वागत एवं समादर होगा तथा डॉ. शुक्ला भविष्य में भी अपनी श्रेष्ठ सृजनधर्मिता के साथ साहित्य की भी सम्पदा में अभिवृद्धि करते रहेंगे।

अपरिमित शुभकामनाओं के साथ,

दिनांक 22.08.2018
1/60, विशाल खण्ड
गोमती नगर, लखनऊ

डॉ० (शम्भु नाथ)
पूर्व कार्यकारी अध्यक्ष,
उ0प्र0 हिंदी संस्थान, लखनऊ

डॉ. सूर्यप्रसाद दीक्षित
सभापति
हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग
12, सम्मेलन मार्ग, इलाहाबाद-3

'साहित्यिकी'
डी० 54, निरालानगर
लखनऊ- 226020
फोनः 0522-2788452
मो.: 945422525

शुभाशंसा

डॉ. डी.एस. शुक्ला द्वारा लिखित मिस यूथ-2012 की ये चौदह कहानियाँ कई दृष्टियों से महत्त्वपूर्ण हैं। अधिकतर कहानियों में युवा पीढ़ी की राग-विराग चेतना से संबंधित घटनायें हैं। इनमें चित्रित अधिकतर पात्र मेडिकल क्षेत्र से जुड़े हुये हैं। डॉ. शुक्ला चूँकि स्वयं एक वरिष्ठ सर्जन हैं, इसलिये संग्रह की कई कहानियों की कथावस्तु मेडिकल समस्याओं से जुड़ी हुई हैं। पहली कहानी 'कंकाल' के पात्र गीता और नारायण गलतफहमी के कारण ट्रैजडी के शिकार हो जाते हैं। गीता की मृत्यु हो जाती है और नारायण अपराध बोध के कारण 'सीजोफ्रेनिया' से ग्रस्त हो जाता है। कालांतर में उसके विद्यार्थियों को पता चलता है कि गीता के कंकाल को पढ़ाते-पढ़ाते मनोव्याधियों का वो इतना बड़ा विशेषज्ञ हो गया। 'केज्ड बर्ड' नामक कहानी एक ऐसी युवती की कहानी है, जो अपने अपहर्ता को मौका पाकर चाकू मारकर भागती है, किन्तु तन के बंधन और पेट की क्षुधा के साथ ही सांसारिक विपदा से आशंकित होकर पुनः उसी के पास लौट आती है। 'किशोर मन' का युवक निर्माणाधीन स्त्री मूर्ति को देख कर उत्तेजित हो जाता है, किन्तु अगली बार उसके पेट का उभार देखकर उसके मन में अपराध बोध पैदा होता और वह माँ के आँचल में जा छिपता है।

'कहानी बालिगों के लिये' में एक ऐसे पिता का चित्रण किया गया है, जिन्होंने खूंखार कुत्ता पाल लिया है, ताकि कोई उनकी युवा बेटी के निकट न आ सके। एक युवक श्वान सुंदरी की सहायता से उसके घर तक पहुँच जाता है। पिता दोनों को शूट कर देता है, नायक की आत्मा को देखकर स्वर्ग में प्रसन्न हैं कि दोनों नर-मादा श्वान परस्पर सुख भोग

कर रहे हैं। 'मिस यूथ-2012' भी एक प्रेम कथा है। इसमें सरोगेसी के कानूनी पक्षों का द्वन्द्व दिखाया गया है। इसी प्रकार की आनुवांशिक विकलांगता का वर्णन 'बाँझ' नामक कहानी में हुआ है। 'गोलियां हाजमोला की' नामक कहानी में बाबू अधिकारियों को कामोत्तेजक औषधि के नाम पर हाजमोला खिलाकर स्वार्थ सिद्ध करता रहता है। ये सभी कहानियाँ प्रेम, कुंठित दाम्पत्य, पुनर्विवाह, पुंसत्व और सामाजिक वर्जनाओं से संबंधित हैं।

इसमें दो पौराणिक कथाएं हैं। एक 'बुतपरस्ती या हाइपोक्रेसी' जिसमें सीता के साथ की गई जयंत की कुचेष्टा वर्णित है। दूसरी 'नवम् रात्रि' जिसमें महाभारत के भीष्म का पराक्रम वर्णित है। इसी प्रकार 'हम सबके अंदर शैतान जिंदा है; में एक पादरी की स्वार्थ लिप्सा का चित्रण किया गया है और 'खिचड़ी राधा-कृष्ण की' कहानी में रायबरेली के 'रशीद मियां' के हृदय परिवर्तन की घटना दी गई है। 'नकली जिलाधीश' में एक विक्षिप्त प्रोफेसर की घटना है। 'लाचार' में फालिजग्रस्त किंतु इलाके के दबंग को चित्रित किया गया है। 'ब्रह्मदत्त' में एक ईमानदार जज का आदर्श चित्र प्रस्तुत किया गया है। ये कहानियाँ पर्याप्त प्रेरक और मनोहारी हैं। और इसके लिए डॉ. शुक्ला जी बधाई के पात्र हैं।

(सूर्यप्रसाद दीक्षित)

शुभाशंसा

(विचार करने को विवश करती कहानियाँ)

'कही-अनकही', 'हंसनी' कहानी संग्रह के बाद डॉ. डी.एस. शुक्ला का नवीन संग्रह 'मिस यूथ-2012' शीर्षक से प्रकाशित होने जा रहा है। इस संग्रह की कहानियाँ पिछले दो संग्रहों की कहानियों से आगे का कदम कही जा सकती हैं। संग्रह में चौदह कहानियाँ हैं जिनके शीर्षक, पारम्परिक शीर्षकों से भिन्न हैं जैसे- 'केज्ड बर्ड', 'बुतपरस्ती या हाइपोक्रेसी', 'लाचार ?', 'गोलियाँ हाजमोला की' और 'मिस यूथ-2012' ये कहानियाँ अपने शीर्षक से ही आकर्षित करती हैं।

'मिस यूथ-2012' कहानी को डॉ. शुक्ला ने शीर्षक कहानी बनाया है। इस कहानी का नायक एक सर्जन है, डॉक्टर है। उसे 'मिस यूथ-2012' से प्रेम हो जाता है। वह अपूर्व सुन्दरी है लेकिन पूर्ण नारी नहीं है। यह जानकर भी कि मंगला एक अपूर्ण नारी है, डॉ. विकास उससे विवाह करता है और 'सरोगेसी अधिनियम' में संशोधन कराने हेतु कानूनी लड़ाई लड़ता है और जीतता भी है। इस कहानी को पढ़ते हुए मुझे सुप्रसिद्ध कहानीकार-उपन्यासकार गौरापन्त 'शिवानी' की कहानी 'मोहब्बत' याद आती है जिसमें किन्नरों की सामाजिक स्वीकार्यता पर प्रश्न उठाये गये थे तो समाधान की तलाश में कहानीकार को अनेक बीहड़ वन-प्रान्त में भ्रमण करना पड़ा था। फिर याद आया मुझे चर्चित कथाकार- उपन्यासकार महेन्द्र भीष्म का उपन्यास 'किन्नर कथा' और 'मैं पायल हूँ'।

इस उपन्यास के लोकार्पण समारोह में मैं मंच पर उपस्थित थी। इस उपन्यास की नायिका 'पायल' साक्षात् उपस्थित थीं मंच पर। उन्होंने माँग में सिंदूर लगा रखा था एक सधवा स्त्री की भाँति उनके हाथों में भर-भर चूड़ियाँ थीं पाँव में पायल बिछुआ भी। सुन्दर सी साड़ी में उनको देखकर एक आदर्श भारतीय नारी की छवि मस्तिष्क में कौंध रही थी। मेरे निकट बैठे एक प्रतिष्ठित साहित्यकार, जो उस समारोह के प्रमुख वक्ता थे, ने धीरे से प्रश्न किया- 'क्या पायल जी विवाहित हैं, उन्होंने यह प्रश्न

यद्यपि बहुत धीरे से किया था परन्तु उनकी जिज्ञासा पायल जी के कानों तक पहुँच गयी थी। उन्होंने अपने वक्तव्य में कहा था- 'हम भगवान् शिव को मानते हैं। उनके अर्द्धनारीश्वर रूप के उपासक हैं। हमारा ब्याह भगवान् से होता है। संसार में और कौन है जो हमें अपनायेगा ?'

इस मार्मिक प्रश्न- 'संसार में और कौन है जो हमें अपनायेगा' का उत्तर डॉ. डी.एस. शुक्ल की कहानी 'मिस यूथ-2012' में मिलता है जहाँ एक सफल-प्रतिष्ठित सर्जन न केवल मंगला को अपनाता है बल्कि उसको मातृत्व का सुख देने के लिए कानूनी संघर्ष भी करता है। विचित्र मानसिक द्वन्द्व को दर्शाती है यह कहानी। यह कहानी बड़े फलक की कहानी है, इसे और अधिक विस्तार देकर डॉ. शुक्ला 'उपन्यास' में भी परिवर्तित कर सकते हैं।

साहित्यकार का दायित्व केवल समस्याओं को रेखांकित करना मात्र नहीं है, यदि एक भी कहानी से किसी का जीवन निराशा की गर्त से निकलकर सकारात्मकता की ओर दो कदम भी आगे बढ़ सके तो रचनाकार की कलम सार्थक हो जाती है। मेरा विश्वास है कि डॉ. शुक्ला की कलम को सार्थकता अवश्य मिलेगी।

इस कहानी की पृष्ठभूमि पर मुझे युवा उपन्यासकार भगवन्न अनमोल की कृति 'जिन्दगी फिफ्टी-फिफ्टी' की याद आयी। यह उपन्यास एक ही परिवार की दो पीढ़ियों में पैदा हुए दो किन्नरों की कथा है। समय बदलने के साथ मानसिकता भी बदली है, कानून भी बने हैं परन्तु सामाजिक और व्यवहारिक धरातल पर स्थितियाँ बहुत सुखद नहीं हैं। डॉ. शुक्ला की कहानी उस वातावरण को सुखद बनाने की दिशा में एक दृष्टिकोण देती हैं।

'मिस यूथ-2012' कहानी संग्रह की अन्य कहानियाँ भी जीवन के अनेक ऐसे प्रसंगों का संस्पर्श करती हैं जहाँ से समाज की विसंगतियाँ, विद्रूपता और मरती हुई संवेदनाओं के बीच से सामाजिक उन्नति का नया मार्ग प्रशस्त होता है, यह विश्वास दृढ़ होता है कि समाज में अभी अच्छे लोगों की कमी नहीं है।

डॉ. डी.एस. शुक्ला की इन चौदह कहानियों की भाषा, आधुनिक जीवन-शैली की भाषा है जिसमें विचारों का अभिव्यक्त करने के लिए सम्प्रेषणीयता अनिवार्य शर्त है। 'गोलियाँ हाजमोला की' की भाषा दृष्टव्य है-

'खासियत प्रकट करने में लौटन प्रसाद जी ने अधिक समय नहीं लिया। सबसे पहले उन्होंने अपने सेवा-निवृत्ति के मुंडेर पर लटके कार्यालयाध्यक्ष को अपना मुरीद बनाया। उसके बाद लंच टाइम में

बी.डी.ओ. साहब के चैंबर में पहुँचे। कुछ देर तक बी.डी.ओ. साहब की कार्यकुशलता की ऊर्जा की प्रशंसा की। बी.डी.ओ. साहब के जींस में भी चापलूसी में किए गुणगान को सत्य मान लेने का वायरस पहले से मौजूद था। लौटन प्रसाद की चापलूसी ने उसे जाग्रत कर दिया। स्तुति से प्रसन्न, उन्होंने मंद-मंद मुस्कराते हुए लौटन प्रसाद को लंच शेयर करने का न्योता दिया। लौटन प्रसाद जी ने बड़ी ही विनम्रता के साथ मना कर दिया। उन्होंने बताया कि वह मंगलवार को व्रत रखते हैं। लौटन प्रसाद की चापलूसी, जो अधिकारी को खाने में स्वीट डिश का आनंद दे रही थी, जारी रही।'

वहीं महाभारत की पृष्ठभूमि पर आधारित कहानी 'नवम् रात्रि' की भाषा बिल्कुल भिन्न है-

''अपने पिता और बहन की पीड़ा को स्मरण कर शकुनि के सारे शरीर से मानों ज्वालायें निकलने लगीं। उसे अग्नि-पात्र का ताप असह्य हो उठा। उसने एक ही चरण प्रहार से अग्नि-पात्र को दूर फेंक दिया। तप्त अग्नि-पात्र से उसका पैर भी अवश्य जला होगा, परन्तु मन में उमड़ते ज्वालामुखी के सम्मुख वह कुछ भी नहीं था। उसे जलन का आभास भी नहीं हुआ। जब तक सेवक धधकते हुए अंगारों को समेटे, शकुनि बड़ी व्यग्रता से लंगड़ाते हुए दुर्योधन के शिविर को चल पड़ा।

डॉ. डी.एस. शुक्ला एक कुशल सर्जन हैं, चिकित्सा के क्षेत्र में उनका नाम है। एक सर्जन की कुशलता उनके लेखन में दृष्टिगोचर होती है आप शब्दों की शल्यक्रिया भी उसी दक्षता और सावधानी से करते हैं जितनी वे मानव शरीर के साथ करते हैं, अभिव्यक्ति की दृष्टि से उनकी कहानियाँ सशक्त हैं और पाठक के मन को गहराई तक संस्पर्श करने वाली हैं।

'मिस यूथ-2012' के रूप में तीसरे कहानी संग्रह के प्रकाशन पर अग्रिम शुभकामनाएं। आशा ही नहीं पूर्ण विश्वास है कि यह कहानी संग्रह उनको यथेष्ट यश-कीर्ति प्रदान करने वाला सिद्ध होगा।

डॉ. अमिता दुबे
सम्पादक,
उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान
6, महात्मा गांधी मार्ग,
हजरतगंज, लखनऊ।
मो0 नं0 - 9415551878
email- amita.dubey09@gmail.com.

गहन अवलोकन की मोहक शब्दाभिव्यक्ति

सुख्यात लेखक डॉ. दुर्गा शंकर शुक्ला के कथा संग्रह 'मिस यूथ-2012' की पांडुलिपि मैंने पढ़ी। संग्रह की अधिकांश कहानियाँ अनोखी, रोमांचक एवं उद्वेलक लगीं। अनेक कहानियां चिकित्सकीय जीवन के असामान्य अनुभवों का असामान्य चित्रण हैं। कहानियों में एक सहज तारतम्य है और प्रवाह में कहीं भी व्यवधान नहीं होता है। परिस्थिति की मांग के अनुसार तथ्य एवं कल्पना का समुचित मिश्रण किया गया है। कुछ कहानियाँ दाम्पत्य जीवन की सामान्य समस्यायों की हैं परंतु पारस्परिक निष्ठा और समझदारी से उन्हें हल कर लेने का मार्ग प्रशस्त करतीं है। 'गोलियाँ हाज़मोला की' जैसी कहानियों में तीखा व्यंग्य विद्यमान है।

पाठक वर्ग में किसी कथा की स्वीकार्यता के तीन प्रमुख आधार होते हैं - कथानक में नवीनता एवं रोमांच उत्पन्न करने की क्षमता, कथा के दुर्गम दृश्यों का शालीन, सरल एवं सरस भाषा में प्रस्तुतीकरण तथा परिस्थिति के अनुसार यहां-वहां मनोवैज्ञानिक तथा दार्शनिक तत्वों का समावेश एवं उनकी सरल-सुस्पष्ट अभिव्यंजना। इस कसौटी पर मैं डॉक्टर शुक्ला की अधिकांश कहानियों को खरा पाता हूँ। उदाहरणार्थ-

'मिस यूथ- 2012' शीर्षक कहानी की नायिका, जो युवा-सुंदरी चुनी जा चुकी है, की दैहिक स्थिति असामान्य है और उससे भी अनोखा है कथा का नायक, जो सब कुछ जान जाने के पश्चात भी उससे विवाह कर लेता है तथा उसे मातृत्व की गरिमा प्रदान करने हेतु लम्बी कानूनी लड़ाई लड़कर विजयी होता है-

''जब वह (नायिका मंगला) बोली तो (नायक डॉक्टर) विकास को लगा कि उसकी आवाज़ दूर कहीं बहुत दूर किसी गुफ़ा से आ रही थी- 'हाँ विकास, मैं पूर्ण नारी नहीं हूँ। मेरी पूरी काया, यष्टि, मन सभी से मैं नारी हूँ। परंतु मैं दाम्पत्य जीवन हेतु...कैसे कहूँ...निष्प्रयोज्य हूँ। विधना मेरे नीचे के अंग बनाना ही भूल गया,'...जज साहब ने बोलना शुरू किया, 'एक मन और शरीर से स्त्री, जो सुंदरता के झंडे गाड़ चुकी

है, प्रकृति की ज़रा सी भूल के कारण पूर्ण नारी होने से वंचित रह गई। सर्जन (उससे विवाह कर) उसे प्लास्टिक सर्जरी द्वारा दाम्पत्य जीवन जीने योग्य तो बना लेता है, परंतु फिर भी वह स्त्री माँ बनने में अक्षम रहती है...अत: यह अदालत सरोगेसी अधिनियम में रक्त सम्बंधी शर्त को शिथिल करते हुए सरोगेसी की अनुमति प्रदान करती है।''

'कहानी (केवल बालिगों के लिये)' शीर्षक कहानी में एक युवा श्वान का एक प्रेयसी से प्रथम मिलन सिद्धहस्त लेखक द्वारा बड़े रोचक परंतु शालीन शब्दों में वर्णित किया गया है-

'शेरू (कुत्ता) पहले तो जूही (कुतिया) को देखकर गुर्राया,... पर जूही ने शेरू को देखकर कुछ ऐसी अदा से पूंछ हिलाई कि शेरू के हाव-भाव में उत्सुकता आ गई। वह हल्की सी सीत्कार के साथ जूही के पास आया। जूही ने उसे अपना पूरा मुआइना करने दिया। इसके पहले कि कुछ बेतकल्लुफ़ी हो पाती, शेरू अपनी मालकिन की आवाज़ पर जूही को छोड़ आगे बढ़ गया।''

'कंकाल' शीर्षक कहानी में प्रेम के यूटोपियन एवं मांसल पक्ष तथा उसकी परिणति को बड़ी विद्वतापूर्ण अभिव्यक्ति प्रदान की गई है-

''श्रद्धा और मांसल भाव एक दूसरे के विरोधी होते हैं। इन दोनों का साथ कुछ समय के लिये तो चल पाता है, परंतु अंततोगत्वा एक को तिरोहित होना पड़ता है। यदि मांसल भाव तिरोहित होता है, तो थोड़े दिनों के विषाद और शर्मिंदगी के बाद फिर से सब कुछ सामान्य हो जाता है। परंतु जब श्रद्धा टूटती है, तो विश्वास ही समाप्त हो जाता है। भलमनसाहत एक अपराध प्रतीत होने लगती है...''

लेखक में काल एवं परिस्थिति के निरीक्षण, विश्लेषण तथा शाब्दिक अभिव्यक्ति की अद्‌भुत क्षमता है। मेरा विश्वास है कि कथानक, कल्पना, भाव, भाषा, शैली एवं सरसता में उच्चस्तरीय होने के कारण ये कहानियाँ पाठकों को मनभावन लगेंगी तथा लेखक का यशोवर्धन करेंगी।

दिनांक : 19 जून, 2018

महेश चंद्र द्विवेदी
'ज्ञान प्रसार संस्थान'
1/137, विवेकखंड, गोमतीनगर,
लखनऊ

अनुक्रमणिका

क्र.	कहानियां	पृष्ठ सं.
1.	कंकाल	1-13
2.	केज्ड बर्ड	14-22
3.	महिमा सुन्दरकाण्ड की (खिचड़ी राधा–कृष्ण की)	23-27
4.	किशोर मन	28-30
5.	कहानी बालिगों के लिए	31-39
6.	हम सबके अंदर शैतान ज़िंदा है	40-42
7.	मिस यूथ – 2012	43-68
8.	बुतपरस्ती अथवा हाइपोक्रेसी	69-72
9.	लाचार...?	73-78
10.	ब्रह्मदत्त	79-90
11.	बाँझ!	91-101
12.	गोलियाँ हाजमोला की	102-108
13.	नकली जिलाधीश	109-118
14.	नवम् रात्रि	119-131

कंकाल

मेडिकल के कोर्स में सभी छात्रों को फोर्थ ईयर में 15 दिन के लिए, मानसिक रोगों से परिचित होने व सैंपल मानसिक रोगियों से रू-ब-रू होने के लिए, मानसिक चिकित्सालय में पोस्टिंग होती थी। उस समय किसी भी मेडिकल कालेज में मानसिक रोगियों के इलाज का समुचित प्रबंध नहीं था। पूरे उत्तर प्रदेश में मात्र आगरा में ही एक मानसिक चिकित्सालय (मेंटल हास्पिटल) था। अत: प्रदेश के सभी मेडिकल कालेजों के छात्रों को बारी-बारी से गर्मी की छुट्टियों में आगरा जाना होता था। अत: हम लोगों को भी 15 दिन के लिए आगरा जाना पड़ा।

यह यात्रा कुछ लोगों के लिए टूरिज्म का आनंद देती, कुछ को रोमांस का अवसर और कुछ के लिए यह एक आर्थिक कष्ट का अवसर भी होता था।

कानपुर से आगरा जाने के लिए ट्रेन से लगभग 5 घंटे का समय लगता था। खिड़की से बाहर के दौड़ते दृश्यों में कितनी देर मन रम पाएगा? यह सोचकर मैंने बुक-स्टाल से एक कहानी की किताब खरीद ली।

रास्ते में जब यात्रा के उत्साह की जगह ऊब ने लेली, तो सभी ऊँघने लगे। मैंने एक संक्षिप्त झपकी के बाद पढ़ने के लिए खरीदी हुई पुस्तक निकाली। उसके मुख पृष्ठ पर लिखा था। 'भूतों की भवभूति नहीं होती- जो भूतों को मानते हैं वह इसे सुपर-नेचुरल मानते हैं'। फिर लिखा था 'रवीन्द्र नाथ टैगोर ने भी सुपरनेचुरल कहानियाँ लिखी हैं। उनमें से एक है 'पिंजर'।

'गुरुदेव' और भुतैली कहानियाँ!

मैंने सबसे पहले पुस्तक में से वही कहानी पढ़ी। किराए के कमरे में रहते नवयुवक के पास रात में एक भूत की छाया आती है। पहले तो

वह छाया मात्र पिंजर दिखाई पड़ती है परंतु धीरे-धीरे वह एक अतिसुन्दर नारी के रूप में आ जाती है। वह पहले अपनी सुंदरता के बारे में नवयुवक से पूछती है और बाद में अपनी स्वयं की प्रेम कहानी बताती है कि किस प्रकार वह अधूरे प्रणय व प्रणय-ईर्ष्या के चलते, वह अपने प्रेमी को जहर दे देती है और स्वयं भी जहर पीकर मर जाती है। बड़ी हृदयस्पर्शी कहानी थी। कई दिनों तक मेरे दिल और दिमाग पर उसका असर रहा।

मेंटल हास्पिटल पहुँच कर सबसे पहले हमें 15 दिन में पढ़ाये जाने वाले विषयों की एक लिस्ट दी गई। हम सब आश्चर्यचकित थे कि उस लिस्ट में सबसे पहला लेक्चर एनाटोमी (शारीरिकी) का था। यह विषय हम सेकेंड इयर में ही पास कर चुके थे। यह बहुत ही उबाऊ व नीरस विषय माना जाता था। उसे फिर से झेलना पड़ेगा, यह सोच कर हम आतंकित थे। कुछ चुहलबाज़ छात्र प्रसन्न थे कि 'एनाटमी' के टीचर से मसखरी और चुहल करने का मौका मिलेगा।

परंतु ऐसा कुछ भी नहीं हुआ। एनाटमी के टीचर का व्यक्तित्व बहुत ही प्रभावशाली था। कक्षा में आते ही उन्होंने सबसे पहले हम लोगों को बताया कि वह भी हमारी ही तरह कानपुर मेडिकल कालेज के छात्र हैं। इस प्रकार पहले ही वाक्य से हम लोगों से एक तारतम्य स्थापित कर लिया। उसके बाद उनके धाराप्रवाह लेक्चर से हम सभी इस विषय में डूब गए। यह उनकी ही क्षमता थी कि जिस विषय को हम सब नीरस और उबाऊ मानते थे वह एकाएक इतना आकर्षक बन गया था। एकाएक अगली पंक्ति के कुछ कुशाग्र छात्रों में कुछ खुसपुसाहट होने लगी। टीचर ने रुक कर कारण पूछा। छात्रों ने बताया कि एक तथ्य जो अभी-अभी आपने बताया वह सही नहीं है। टीचर ने हँसते हुए कहा वेरी गुड, मैं अपने लेक्चर में कुछ तथ्य से हटकर भी बोल देता हूँ। मात्र यह देखने के लिए कि आप सब सो तो नहीं रहे हैं। और हर बार जब छात्र उस गलती को पकड़ कर टोकते हैं तब मैं आश्वस्त होता हूँ कि आप सबका ध्यान लेक्चर पर है।

यह 'शॉक ट्रीटमेंट' सभी छात्रों को बहुत भाया। लेक्चर खत्म होने तक हम सभी उन टीचर के पूर्णरूप से भक्त हो चुके थे। टीचर जब क्लास छोड़कर जाने लगे तब सभी छात्रों ने खड़े होकर उनका अभिवादन किया।

इसके बाद का क्लास मेंटल हास्पिटल के चिकित्सा अधीक्षक का था। उन्हें हमलोगों को मानसिक रोगों के विषय प्रवेश के बारे में बताना था।

अधीक्षक ने क्लास में आते ही छात्रों से प्रश्न किया, ''पिछला क्लास आप सबको कैसा लगा? आप उस टीचर के मूल्यांकन में कितने स्टार देंगे।'' पूरी क्लास ने समवेत स्वर में कहा, ''फोर स्टार'' अधीक्षक प्रसन्नता से हँसे।

उसके बाद अधीक्षक ने मानसिक रोगों का वर्गीकरण समझाया। उन्होंने बताया कि मानसिक रोगों में सबसे ज्यादा जो बीमारी पाई जाती है वह है 'स्किज़ोफ्रेनियाँ'। यह मानसिक असंतुलन विभिन्न तरह से प्रस्तुत होता है। कई बार ऐसा भी होता है कि इस रोग से ग्रसित रोगी हमसे मिलता है तो भी हम उसे पहचान नहीं पाते। फिर एकाएक उन्होंने मुस्कराते हुए पूछा, ''क्या आप में से किसी को ऐसे रोगी से रू-ब-रू होने का मौका मिला है?''

सभी छात्रों ने नकारते हुए अपना 'न' में सिर हिलाया।

अधीक्षक ने और भी अधिक मुस्कराते हुआ कहा, ''पिछली क्लास के आपके विद्वान टीचर स्वयं इस रोग से ग्रसित हैं और पिछले आठ सालों से इस अस्पताल में भर्ती हैं।''

हम सभी छात्रगण इस रहस्योद्घाटन से हतप्रभ थे। इस शॉक से ऊभ-चूभ हो रहे थे बाहर निकल भी नहीं पाये थे कि अधीक्षक ने कहा, ''आप सभी को यह जानकर आश्चर्य होगा कि हम दैनिक जीवन में जितने लोगों से मिलते हैं उनमें भी कुछ लोग मानसिक तौर पर पूर्ण स्वस्थ नहीं होते हैं। वैसे यह भी सत्य है कि हम सब अपने जीवन में कभी न कभी हताशा, असफलता या किसी प्रिय की मृत्यु की वजह से विषाद (डिप्रेशन) के शिकार हो सकते हैं। परंतु हमारा सामाजिक ढांचा, पारिवारिक सहारा और स्वयं अपना आत्मबल इससे बाहर निकलने में सहायक होता है। यदि यह सपोर्ट सिस्टम प्रभावी न हो, जैसा कि पाश्चात्य समाज में होता है, यह विषाद स्थायी हो सकता है। ऐसा ही कुछ इन डॉक्टर साहब के साथ भी हुआ है।''

''आप लोगों की केस स्टडी में इन्हीं डॉक्टर साहब का केस रखा गया है। थोड़ी ही देर में आपको आपकी सीट पर ही डॉक्टर साहब की केस डायरी उपलब्ध हो जाएगी। इसको आप सभी अपने रूम पर जाकर

आज अध्ययन करें। कल पहले घंटे में हम फिर मिलेंगे और इस केस को डिस्कस करेंगे,'' अधीक्षक ने कहा।

थोड़ी देर में डॉक्टर साहब की केस डायरी की प्रति हम सबको उपलब्ध करा दी गई।

डॉक्टर साहब की केस डायरी लेकर हम सब अपने कमरे पर आ गए। उस डायरी पर भी विभिन्न छात्रों की भिन्न-भिन्न प्रतिक्रिया हुई। पढ़ीस लोग तत्काल ही केस डायरी का पारायण करने लगे, कुछ ने खाने पीने के बाद डायरी निकाली और कुछ मस्त-मौला टाइप छात्र, जिनकी संख्या अधिक थी, ने घूमने, तफरी करने के बाद देर रात तक टेबल लैंप के प्रकाश में उस डायरी का अध्ययन किया। हममें कुछ ऐसे भी थे जो अपने साथी से यह कहकर सो गए कि ''अबे, सुबह क्लास जाते समय रास्ते में इस डायरी का जिस्ट बता देना''।

यहाँ मैं बताना यह आवश्यक समझता हूँ कि यह अंतिम ब्रैंड के छात्र बहुत ही मेधावी होते हैं। एक बार ही सुनकर सभी आवश्यक तथ्य आत्मसात कर लेते हैं। यदि यह छात्र पढ़ाई के प्रति थोड़ा सा और सतर्क हो जाएँ तो मेरिट में उलट-पुलट कर सकते हैं- पर भगवान् सभी को सब कुछ एक साथ नहीं देता।

मैं स्वयं दूसरी श्रेणी के छात्रों में से था। ऐसा नहीं कि मैं पढ़ने में इतना सिन्सियर था। परंतु यह मेरी मजबूरी थी। मुझे 'आगरा एक्सकर्शन' (भ्रमण) के लिए जितना खर्च मिला था वह प्राइवेट रहने और खाने के लिए ही पर्याप्त था। सो 'साइट-सीइंग' सैर सपाटा संभव नहीं था। मजबूरन मैंने भी खाने के बाद डायरी निकाली, और केस डायरी के हर पन्ने को ध्यान से देखा।

मनो-चिकित्सा विभाग की केस डायरी साधारण मेडिकल केस डायरी से अलग होती है। मरीज यदि पढ़ा लिखा होता है तो वह स्वयं अपना और अपनी बीमारी का इतिहास, अपने हस्तलेख में लिखता है। कहते हैं कि लिखने के ढंग से भी विशेषज्ञ को मरीज के बारे में बहुत कुछ जानकारी प्राप्त हो जाती है।

डॉक्टर साहब की राइटिंग बहुत सुंदर थी। वर्तनी की अशुद्धियाँ लगभग नहीं के बराबर थीं। ऐसे लेखन वाला व्यक्ति बहुत स्पष्ट विचार का और लगनशील होता है।

डॉक्टर साहब के सुलेख में उनकी स्वयं कि गाथा कुछ इस प्रकार की थी-

''डॉक्टर साहब फतेहपुर ज़िले के एक मध्यमवर्गीय परिवार से थे। उनका गाँव गंगा नदी के दक्षिण तट पर बसा था। डॉक्टर साहब स्वयं आई.ए.एस. बनना चाहते थे परंतु गाँव में चिकित्सा सेवाओं के नितांत अभावों ने व परिवार के कहने पर वह डॉक्टर बनने को राज़ी हो गए।

सिर्फ राज़ी होने से ही तो डॉक्टर नहीं बना जा सकता। इसके लिए उच्च मेधा की आवश्यकता होती है। यही डॉक्टर साहब का प्लस प्वाइंट था। डाक्टर साहब बहुत मेधावी थे अत: वह पहले ही अटेम्प्ट में सेलेक्ट हो गए। पहले दो तीन महीने तो मेडिकल कालेज की 'रैगिंग' से डॉक्टर साहब का मनोबल काफी गिरा, परंतु रैगिंग खत्म होते ही सहपाठी क्या उनके शिक्षक भी उनकी प्रतिभा के कायल होने लगे।

पहले टर्मिनल एग्जाम से ही डॉक्टर साहब मेरिट में नंबर वन रहने लगे। पढ़ने में कुशाग्र युवकों की ओर मेडिकल कालेज में लड़कियां कुछ जल्दी ही आकर्षित हो जाती हैं। पर हमारे डॉक्टर साहब पढ़ने के अलावा शिष्टता और शऊर के भी धनी थे। लिहाज़ा सभी कन्याएँ उनका सानिध्य पाने व उन्हें आकर्षित करने को उत्सुक रहतीं। उन सुंदरियों के झुंड से अलग एक सीधी-सादी लड़की भी थी, जिसने कभी भी डॉक्टर साहब के निकट आने का प्रयास नहीं किया। वह केवल दूर से ही उन्हें प्रशंसा की दृष्टि से देखती रहती।

कुछ दिन व्यतीत होने के बाद ऐसा हुआ की डॉक्टर साहब उन तितलियों का दिल तोड़कर उस चकोर की ओर आकर्षित होते गए और कुछ ही दिनों में अंतरंग भी हो गए। उस लड़की का नाम गीता था तथा डॉक्टर साहब का नाम नारायण था।

उस ज़माने में ऐसे पौराणिक नाम बैकवर्ड नहीं माने जाते थे।

अपने नामों के पहले अक्षर की वजह से गीता और नारायण एक ही ग्रुप में नहीं थे, परंतु जब भी मौका लगता वह दोनों एक साथ ही देखे जाने लगे। इन मुलाकातों में केवल पढ़ने लिखने की बातें ही होती थीं। उन बातों में निजी या भावनात्मकता का पूर्ण अभाव था। मगर बीतते दिनों के साथ बातें 'पर्सनल' और 'अंतरंग' होने लगी।

गीता एक अनाथ लड़की थी जो एक महिलाओं द्वारा संचालित धार्मिक संस्था में पली और बढ़ी थी। उस संस्था में मात्र साध्वियाँ ही रहती थीं और संस्था का सारा प्रबंधन उन्हीं साध्वियों द्वारा ही निष्पादित किया जाता था। साध्वियों के लिए भी यह गौरव की बात थी कि उनके यहाँ की एक लड़की ने इंटर के बाद ही पी.एम.टी क्लियर कर लिया। साध्वियों की संस्था ही गीता की मेडिकल की पढ़ाई का प्रबंध भी कर रही थी। सरकारी मेडिकल कालेज में ट्यूशन और हास्टल फीस आज के मानकों पर तो 'पीनट्स' (क्षुद्र) मानी जाएगी, वहीं मेडिकल की किताबें, मैनुएल्स, स्केलेटन सेट (अस्थि-तंत्र) समझने के लिए मानव शरीर की सभी हड्डियों का ढांचा काफी खर्चीला हो जाता था।

मेडिकल कालेजों में एक बहुत ही स्वस्थ परंपरा हुआ करती थी। सीनियर्स एक इम्तहान पास करने के बाद अपनी किताबें, स्केलेटन सेट आदि अपने जूनियरों को नि:शुल्क दे देते थे। यह जूनियर भी पास होने के बाद सीनियर्स से प्राप्त यह 'निधि' अपने जूनियर्स को सौंप जाते थे। यह जूनियर सीनियर परंपरा आर्थिक रूप से कम सक्षम छात्रों के लिए वरदान साबित होती है।

टापर होने के नाते नारायण को कालेज लाइब्रेरी से यह सब चीज़ें उपलब्ध हो जाती थीं, वहीं गीता व नारायण के सीनियर्स द्वारा प्राप्त किताबों से गीता का काम चल रहा था।

इंटरवल और लाइब्रेरी में मिलने की स्टेज से कुछ ही दिनों में उनका रेस्त्रां, पिक्चर हाल से पार्क तक में मिलने का सिलसिला चल पड़ा। बातें भी अब निजी, और भावनात्मक स्तर पर पहुँच चुकी थीं।

नारायण के मन में जहां एक ओर शृंगारिकता भाव प्रधान था वहीं गीता में नारायण के लिए सम्मान का। साध्वियों के बीच पली गीता स्त्री-पुरुष के शृंगारिक आकर्षण से एकदम अनभिज्ञ थी। वह नारायण को एक सम्पूर्ण व्यक्तित्व मानती थी। इसी भोलेपन के चलते गीता के मन में नारायण के लिए देवत्व का भाव था।

श्रद्धा और मांसल भाव एक दूसरे के विरोधी होते हैं। इन दोनों का साथ कुछ समय के लिए तो चल पता है पर अंततोगत्वा एक को तिरोहित होना पड़ता है। यदि मांसल भाव तिरोहित होते हैं तो थोड़े दिनों के विषाद और शर्मिंदगी के बाद सब कुछ फिर से सामान्य हो जाता है। परंतु जब

श्रद्धा टूटती है तो- विश्वास, व्यक्तित्व ही समाप्त हो जाता है, भलमनसाहत एक अपराध प्रतीत होने लगता है।

श्रद्धा का बिखरना विरले लोग ही झेल पाते हैं।

एक दिन इन दोनों के साथ भी ऐसा ही हुआ। एकांत के क्षणों में नारायण भावनात्मकता से मांसलता की ओर बढ़ा तो पहले (पुरुष स्पर्श से अपरिचित) गीता को अजीब लगा। उसने नारायण को रोकने की चेष्टा की। मगर नारायण इसे प्रणय का प्राथमिक संकोच मान सीमाएं लांघता गया। और...अंत में जब श्रद्धा बिखरने लगी तब गीता किंकर्तव्यविमूढ़ हो गई। इस आतंक से उसके मस्तिष्क ने कार्य करना बंद कर दिया। वह अर्धमूर्च्छित सी हो गई। उसके अंग-अंग शिथिल हो गए। नारायण ने इसे अच्छा संकेत माना और मनमानी करता गया। उद्वेग शांत होने के बाद नारायण ने देखा कि गीता ने अपने अस्तव्यस्त कपड़ों को ठीक करने का कोई प्रयास न करके वैसे ही अर्धमूर्च्छा में पड़ी है यह देख नारायण को चिंता हुई। उसने स्वयं उसके वस्त्रों को व्यवस्थित किया। गीता की कोई प्रतिक्रिया नहीं...!

नारायण घबराया, उसने सबसे पहले गीता की नब्ज़ देखी- नब्ज़ चल रही थी। गीता सांस भी ले रही थी। नारायण आश्वस्त हुआ कि गीता जीवित है। उसने गीता को आवाज़ दी, झकझोरा फिर पानी की छींटे मुँह पर मारीं तब कहीं गीता चेतन हुई। वह खाली-खाली निगाहों से नारायण को देखते हुए भी नहीं देख रही थी- आखिर, उसका विश्वास टूटा था, श्रद्धा भंग हुई थी। उसके देवता के द्वारा ही उसकी अस्मत लूट ली गई थी। गीता का मस्तिष्क सुन्न था।

नारायण ने उसे सहारा देकर उठाया, वह उठ गई। यंत्रचालित सी नारायण के साथ रिक्शे पर बैठ गई। नारायण ने उसको गर्ल्स हास्टल के गेट पर छोड़ा। नारायण के सौभाग्य से गेट चौकीदार नहीं था, वरना पुरुष मित्र के साथ लौटी गीता के आतंकित और आहत भाव से नारायण के दुष्कर्म को भाँप सकता था। समय आने पर उसके विरुद्ध एक साक्ष्य भी दे सकता था। परंतु ऐसा कुछ नहीं हुआ। गीता डगमगाते पाँवों से हास्टल में प्रवेश कर गई। नारायण अपने हास्टल लौट आया।

श्रद्धा एक ओर जहाँ पसंद, प्रशंसा, अभिभूति से होती हुई जब भक्ति पर पहुँचती है तब नायक को देवत्व प्रदान कर देती है। अधिकतर देवत्व प्राप्त लोग अपने श्रद्धालुओं की अंध-श्रद्धा का लाभ भी उठाते हैं

और उनका शोषण भी करते हैं। श्रद्धा की भ्रांति जब टूटती है तो कुछ लोग चुप रह जाते हैं वहीं कुछ लोग विद्रोह कर उठते हैं। परंतु जब श्रद्धा और विश्वास दोनों टूट जाते है तो आदमी स्वयं टूट जाता है। उसे जीवन निरर्थक लगने लगता है।

मांसलता के भाव के उतरने के बाद नारायण को लगा कि उससे बहुत बड़ा अपराध हो गया है। वह सुबह कैसे गीता के सामने पड़ेगा? यह सोचकर रात भर सो नहीं सका। उसके अपराध बोध ने उसे पलायन को विवश कर दिया। वह सुबह चार बजे की गाड़ी पकड़ अपने घर फ़तेहपुर भाग निकला।

अगले दिन जब प्रातः गीता के कमरे से पूजा की घंटी और अगरबत्ती की सुगंध नहीं आई तो पड़ोसी छात्राओं को आश्चर्य हुआ। मगर शीघ्र ही सब अपने नित्यकर्म में व्यस्त हो गईं। गीता मेस में नाश्ता करने भी नहीं आई और न ही उसने नाश्ता अपने कमरे में लाने को कहा। कालेज चलने के समय जब उसके बैच की लड़कियों ने गीता को साथ ले चलने के लिए दरवाजे पर दस्तक दी तो दरवाजा हल्की थाप से ही खुल गया। लड़कियां अंदर का दृश्य देख कर जड़ हो गईं- कमरे में सीलिंग फैन से गीता का शव लटक रहा था।

जड़त्व से बाहर आकर लड़कियां चीख मारकर भागीं और एक कमरे में घुसकर रोने लगीं। चीख सुनकर चौकीदार भाग कर आया। वह भी दृश्य देखकर चकरा गया। अब तक मेस के चाकर भी एकत्र होने लगे थे। चौकीदार को अपने दायित्व याद आते ही वह वार्डेन को सूचित करने भागा।

लड़कियों के झुंड भी एकत्र होने लगे। कुछ आश्चर्य से हतप्रभ कुछ खुले तौर पर रो-रोकर, सिसक रही थीं।

वार्डेन आईं, कालेज प्रिंसिपल आए। पूछ-तांछ शुरू हुई। पता चला गीता के परिवार में कोई नहीं था। वह एक आश्रम की संवासिनी थी। आश्रम को सूचित किया गया। हास्टल में आत्महत्या का मामला- सो पुलिस को सूचना भेजी गई।

पुलिस ने आकर शव को अपनी सुपुर्दगी में ले लिया। वहीं उपस्थित पाँच लोगों के बयान लेकर पंचनामा तैयार करने के बाद पोस्ट-मार्टम हेतु शव को मार्चरी भेज दिया गया।

इसके बाद पत्रकारों का हुजूम टूट पड़ा। तरह-तरह के प्रश्न। अधिकतर पत्रकार किसी तरह का स्कैंडल खोजना चाह रहे थे। स्त्री की मर्यादा से अधिक उन्हें अपने अखबार की टीआरपी प्यारी थी। सो, चटकारेदार खबरें अगले दिन अखबार में छपीं। कुछ स्तर के समाचार पत्रों ने बहुत ही संयत ढंग से मुख-पृष्ठ पर छापा-

'मेडिकल की छात्रा ने पंखे से लटक कर की आत्महत्या'

अगले दिन जब नारायण ने अपने गाँव में यह खबर पढ़ी तो उसका सिर चकरा गया। वह अखबार लिए ही ज़मीन पर बैठ गया। थोड़ी देर में संयत होने के बाद उसने पूरी खबर को गौर से पढ़ा।

संवाददाता ने लिखा था कि पुलिस आर्थिक और प्रेम-प्रसंग के कोण से इस आत्महत्या की विवेचना कर रही है।

प्रेम प्रसंग पढ़ते ही नारायण की आँखों के सामने हथकड़ी नाचने लगी। पुलिस को उसकी गीता से अंतरंगता का पता चल ही जाएगा। नारायण की अनुपस्थिति उसके दोषी होने की संभावना को बल देगी। अत: उसका कालेज में उपस्थित रहना अत्यंत आवश्यक था।

वह तत्काल ही कालेज के लिए चल पड़ा।

गीता की आत्महत्या से सब इतने हतप्रभ थे कि किसी को भी अब तक नारायण और उसकी अनुपस्थिति की ओर ध्यान ही नहीं गया था। हास्टल में उसे देख जैसे सभी को इस तथ्य की याद आई कि गीता की मृत्यु से सबसे अधिक नारायण ही विचलित होगा। उन्होंने नारायण से पूछा कि गीता आत्महत्या क्यों करेगी।

नारायण ने बताया, ''पिछले कुछ दिनों से वह किसी बात को लेकर व्यग्र तो थी; मगर क्यों? यह उसने मुझे नहीं बताया। यदि गीता ने अपने मन की व्यग्रता मुझसे शेयर कर ली होती, तो संभवत: यह नौबत ही नहीं आती।''

नारायण बाहरी तौर पर यह कहकर खुद अपने पर आश्चर्य कर रहा था कि उसने कितनी आसानी से झूठ बोल कर अपने ऊपर आसन्न संदेह को टाल दिया। उसे इसका भी भान हुआ कि उसकी 24 घंटे की अनुपस्थिति को किसी ने नोटिस नहीं किया। छात्रा की मृत्यु के बाद कालेज में छुट्टी हो गई थी। इसलिए तो कहीं भी क्लास में कोई अटेंडेंस भी नहीं हुई। कुल मिला कर नारायण के विरुद्ध कोई साक्ष्य नहीं मिला था।

यदि पूरी घटना लोगों के संज्ञान में आ जाती तो प्रेम प्रसंग भी पुलिस की निगाह में आ सकता था। और तब नारायण को बलात्कार और आत्महत्या के लिए प्रेरित करने के अपराध में 6 साल से लेकर अधिकतम आजीवन कारावास तक हो सकता था।

बहरहाल, पुलिस को गीता की आत्महत्या का कोई कारण नहीं मिल पाया। आश्रम की संचालिकाएं भी गीता के बारे में विमुख सी हो गईं क्योंकि जीवित डॉक्टर गीता उनके और उनके आश्रम के लिए गर्व का विषय थी, वहीं मृत गीता दु:खद स्मृति। पुलिस ने फाइनल रिपोर्ट लगा कर केस बंद करने की अनुशंसा दंडाधिकारी से की, जिसे उन्होंने सहर्ष स्वीकार कर लिया।

इस प्रकार अनाथालय में पला बढ़ा एक उज्ज्वल भविष्य समय से पहले ही तिरोहित हो गया।

पोस्टमार्टम के बाद गीता के मृत शरीर का स्वत्व जताने (क्लेम करने) जब कोई नहीं आया तो मृतका को 'लावारिस' घोषित कर दिया गया। लावारिस शरीर के अंतिम कृत्य की जिम्मेदारी भी पुलिस कर्मचारियों पर आ जाती है। इस अंतिम कृत्य के लिए बीसवीं सदी के तीसरे दशक में अंग्रेज़ों द्वारा लावारिस शवों के डिस्पोज़ल (निपटाने के लिए) हेतु रु. 12/- स्वीकृत किया गया था। आज से लगभग 80 वर्ष पहले यह राशि उपयुक्त रही होगी। वहीं आजकल जब महंगाई हज़ार गुने से अधिक बढ़ चुकी है तब यह कितनी उपयुक्त रह गई, इसका अंदाज़ा हम सब लगा सकते हैं।

मार्चरी गंगा नदी के किनारे होने से पुलिस वाले किसी भी रिक्शेवाले को पकड़ कर उसे बारह रुपये देकर शव को गंगा में प्रवाहित करने का निर्देश देकर अपने कर्तव्य की इतिश्री समझ लेते हैं। यह अनुचित भी नहीं है (अल्पवेतन भोगी पुलिस का सिपाही अपनी जेब से यदि शास्त्रानुसार अंतिम कृत्य करे तो मृतक को मोक्ष मिले न मिले सिपाही के बच्चे अवश्य भूखों मर जाएँगे।)

नारायण के संज्ञान में भी यह बात आई कि गीता का भी शव इसी प्रकार गंगा में प्रवाहित किया गया है।

गर्मियों की छुट्टी में जब नारायण अपने गाँव गया तो लोगों को उसका व्यवहार कुछ बदला हुआ लगा। वह अधिकतर अन्यमनस्क और अपने में ही लीन रहने लगा था।

नारायण का गाँव कानपुर की गंगा से डाउनस्ट्रीम (प्रवाह की दिशा में) पड़ता है। उसके गाँव में गंगा कि धारा एकाएक उत्तर वाहिनी हो गई थी। इस कारण से कई शव गंगा की धारा में बहते हुए उसके गाँव के तट पर आकर लग जाते थे। इन अनचाहे शवों को घाट के पंडे व मल्लाहों द्वारा फिर से नदी की मुख्य प्रवाह में छुड़वा दिया जाता था।

एक दिन जब वह गंगा के किनारे घूम रहा था तब उसे ध्यान आया कि यदि कोई शव कानपुर के किसी घाट में प्रावहित किया जाय तो, पूरी संभावना है कि वह शव धारा के साथ बहता हुआ उसके गाँव तक पहुँच सकता है। तब से नारायण प्रतिदिन अपने गाँव में गंगा के तट पर आने वाले शवों को खोजने लगा। उसका मानना था कि हो सकता है कि पुलिस वालों द्वारा पोस्टमार्टम के बाद प्रवाहित गीता का शव भी उसके गाँव के तट पर आकर लग जाए।

कहते हैं कि मस्तिष्क जिस चीज़ को पूरे मनोयोग से चाहता है, वह उसे अवश्य ही मिलती है। संभवत: प्रकृति ने इसी अवधारणा को सत्य करते हुए नारायण को एक दिन नदी में गीता के अवशेष मिल ही गए।

उस दिन मुंह अंधेरे ही नारायण गंगा तट को निकल पड़ा। तट पर उसे एक नारी का कंकाल मिला। इस कंकाल की खाल और मांस तो जलीय जन्तु का भोजन बन चुका था मात्र हड्डियों का ढांचा ही बाकी था। इसकी हड्डियाँ पूर्ण रूप से सुरक्षित थीं। हड्डियों के जोड़ मात्र लिगामेंट्स (जोड़ों कि हड्डियों को मजबूती से एक दूसरे से जोड़ने वाले ऊतक तन्तु) के द्वारा जुड़े थे। एनाटोमी के अध्ययन के लिए यह कंकाल आदर्श स्थिति में था।

मात्र कंकाल को देखकर कोई भी यह नहीं कह सकता था कि यह कंकाल किस महिला का है। परंतु नारायण सनक में उसे गीता का ही अवशेष मान उसे प्यार से उठा कर एक बक्से में बंद कर कानपुर मेडिकल कालेज के एनाटोमी विभाग में लेकर पहुँच गया। विभागीय टेक्नीशियन को वित्तीय प्रलोभन देकर उसने इस कंकाल को हमेशा के लिए संरक्षित (प्रिज़र्व) कराकर अपने कमरे में ले आया।

जिस रोज़ से गीता की कदकाठी का कंकाल लेकर नारायण अपने कमरे पहुँचा, उस रोज़ से उसने कमरे के बाहर निकलना बंद कर दिया। वह मात्र नित्यकर्म से निबटने हेतु ही कमरे के बाहर निकलता। तीनों टाइम का खाना भी वह कमरे में ही मँगवा लेता था।

उसके सहपाठियों को नारायण की यह दशा देख कर चिंता हुई तब उन्होंने वार्डेन को सूचित किया। वार्डेन को पता चला कि नारायण कमरे में ही गीता के कंकाल से बात करता रहता है, तो उन्होंने उसे मानसिक चिकित्सालय आगरा रेफर कर दिया। तब से आज तक नारायण इसी चिकित्सालय में भर्ती है।

इतवार के बाद सोमवार को जब क्लास लगी तो अधीक्षक महोदय ने हम लोगों से पूछा, ''क्या आप सभी ने डॉक्टर नारायण की केस डायरी पढ़ ली है?''

सभी ने समवेत स्वर में 'हाँ' बोला।

तभी अधीक्षक की निगाह कुछ कानाफूसी करते छात्रों पर पड़ी। पूछने पर वह छात्र तो मौन रहे पर पड़ोसी छात्र ने चुगली की, ''सर, इन लोगों का कहना है की डॉक्टर नारायण की जीवन गाथा पर एक बहुत एडल्ट हिट फिल्म बन सकती है।''

अधीक्षक ने मुस्कराते हुए स्वीकारोक्ति में सिर हिलाकर अपने विषय पर आ गए।

डॉक्टर नारायण अपनी काल्पनिक दुनिया में गीता को एनाटोमी पढ़ाते। सत्र के अंत में जब सभी मेडिकल छात्रों का परीक्षाफल समाचार-पत्र में छपता तो ज़ाहिर है कि गीता का नाम उत्तीर्ण छात्रों की सूची में नहीं होता। डॉक्टर नारायण 6 महीने तक पुन: अपनी दुनिया में गीता को पढ़ाते हैं। पिछले कई सालों से यही सिलसिला चल रहा है। न हम चिकित्सक अपनी दवाओं और निरंतर काउंसिलिंग से डॉक्टर साहब को काल्पनिक दुनिया से वास्तविक दुनिया में ला पाये, न ही उन्होंने गीता को पढ़ाना छोड़ा।

अब तो यह चिकित्सालय तथा डॉक्टर नारायण हम लोगों को इतने अभ्यस्त हो गए हैं कि उनका यहाँ होना अस्वाभाविक नहीं लगता।

अधीक्षक ने सभी छात्रों को चार ग्रुप में बाँटकर बारी-बारी से डॉक्टर नारायण से मिलने का समय तय कर दिया। मैं और मेरे कुछ साथी किन्हीं कारणों से अपनी पारी में डॉक्टर नारायण से नहीं मिल पाये। अत: हमने अगले दिन शाम की चाय के समय बिना डॉक्टर नारायण अथवा बगैर अधीक्षक की स्वीकृति के ही डॉक्टर नारायण के रूम पर उनसे मिलने का निश्चय किया।

जब हम उनके कमरे के सामने पहुंचे तो अंदर की आवाज़ें बाहर स्पष्ट सुनाई दे रहीं थीं। लगा कि डॉक्टर नारायण साहब किसी कन्या से कह रहे थे, ''देखो यह तुम्हारा एनाटोमी पास करने का अंतिम अवसर है। यह मर्सी अटेम्प्ट (कारुणिक प्रयास) है। यदि इस बार भी तुम फेल हो गईं तो तुम्हें कालेज से निकाल दिया जाएगा।''

कालेज के दिनों में कन्या शब्द बड़ा रोमांचकारी होता है। हम लोगों में उत्सुकता जागी। सावधानी से दरवाजे में थोड़ी सांस रोककर के झाँका। डॉक्टर साहब किसी एप्रन पहने लड़की से बात कर रहे थे। लड़की कि पीठ हमारी तरफ थी। लड़की का चेहरा देखने की लालसा से हम लोगों ने कमरे की खिड़की से झाँका। हममें से कुछ को चक्कर आ गया।

कंधे पर एप्रन, सिर पर बालों का विग लगाए गीता का कंकाल बैठा था।

❐❐❐

केज्ड बर्ड

पंडित बुधराम की घरवाली को प्रसव-पीड़ा प्रारंभ हो गई। जल्दी से दाई बुलाई गई। घंटे भर की चिल्ल-पों के बीच आखिर लाजो ने जन्म ले ही लिया। बुधराम पंडित के घर चौथी बेटी! सब सन्न रह गये। एक के बाद एक चार बेटियाँ! कैसे सपरेगा? पंडित एक ही बेटी को अभिशाप मानते थे, क्योंकि बेटी पैदा होते ही बाप की मूंछे नीची हो जाती हैं। बड़े होने पर गली मोहल्ले के शोहदों का आवागमन बढ़ जाता है। फिर शादी के समय किसकी-किसकी खुशामद, मोटा दहेज। यह सब आफत नहीं तो और क्या था। पंडित जी पेशे से वैद्य ऊपर से पंडित। सिर्फ लेना-लेना ही जानते थे। देने के नाम पर तो वह किसी को गाली भी नहीं दे सकते थे। अब गुस्से में गाली निकल जाय तो बात अलग है। पर, कन्या के आते ही खर्चा ही खर्चा।

पंडित घर आये तो कन्या के जन्म का पता चला था। जच्चा और बच्चा को कुछ दवा आदि देना हो तो दे दो। पंडित सनक गये। न थाली बजने की आवाज़ न जनानियों के चेहरे पर मुस्कान। बस पंडित टंटा न करें, इसलिए पंडित की अम्मा सौर के दरवाजे पर डंडा लिए बैठी हैं। पंडित समझ गये कि फिर बेटी ही हुई है। सोंठ ऐसा मुँह बनाये पंडित अंदर गये। जच्चा की तरफ तो देखा ही नहीं। वह बिचारी बेचारगी और लाचारी में मुँह फेर कर टेसुए बहाने लगी। पंडित ने लाल पुराने कपड़े में लिपटी लाजों को देखा। दूधिया रंग, लाल कपड़े की आभा से बच्ची का रंग दूध-गुलाल सा हो रहा था। वह पंडित को देखकर मुस्काई। वह मुस्कान पंडित के कठोर सीने में सीधे उतर गई। उन्हें बच्ची पर प्यार आ गया। बच्ची गोद में उठा कर जच्चा से बोले, ''बड़ी सुंदर बेटी दी है तुमने परिवार को।''

पंडित के घर में चौथी बेटी के जन्म पर भी बधावे बजने लगे।

लाजो जैसे-जैसे बड़ी हुई उसकी सुंदरता भी बढ़ती गई। किशोरी लाजो जब भी घर के बाहर निकलती लोग उसे देखने लगते। पर लाजो इन सबसे बेफिक्र थी। शायद, वह उसकी आदी हो गई थी।

पर इन सबसे एक युवा अलग था, जो दूर से ही लाजो को देखता और देखता ही रहता। लाजो पता नहीं क्यों उसकी निगाह से असहज हो जाती। संभवत: स्त्रीसुलभ अतींद्रिय शक्ति उससे कुछ कह रही होती।

एक दिन दोपहर को लाजो की माँ के पेट में भयानक पीड़ा उठी। पंडित जी घर पर नहीं थे। दादी के कहने पर लाजो 'अमृत-धारा' लाने चली। जेठ की भरी दुपहरी, सूरज मानो आग उगल रहा हो। धरती पर नंगे पाँव चलना संभव नहीं था। गाँव की गलियों में सन्नाटा पसरा था। गलियों से जब लू का झोंका चलता तो हू-हू की आवाज़ आती। ऐसे में जब सब अपने-अपने घरों में दुबके थे, लाजो पंसारी के यहाँ जाने को निकली ही थी की लू के एक थपेड़े ने उसे पीछे की ओर धकेला। परन्तु माँ के दर्द ने उसे ऐसी तपन में भी आगे जाने को मजबूर कर दिया। बाहर धूप की चमक से आँखें बंद सी हुई जा रही थीं, फिर भी सिर पर चुन्नी डाल लाजो चल पड़ी। पंसारी के मोड़ पर वह पहुंची ही थी कि उसकी कमर में ज़ोर का धक्का लगा वह आगे की ओर लड़खड़ाई और उसके पैर हवा में उठ गए पर वह ज़मीन पर गिरी नहीं!... वह हवा में ही आगे की ओर तेजी से उड़ने लगी। उसके मुँह से भय से चीख निकल गई पर सुनसान में कोई सुनने वाला नहीं था।

उसे अपनी कमर पर कसाव महसूस होने के साथ ही कानों में मोटरसाइकिल की धक-धक सुनाई दी। वह बंसी में फंसी मछली की तरह तड़फड़ाई। जैसे ही उसे समझ आया कि उसका अपहरण हुआ है, वह डर के मारे बेहोश हो गई।

लाजो को कितनी देर बाद होश आया, वह स्वयं नहीं जानती। उसने महसूस किया कि मोटरसाइकिल की धक-धक तो बंद हो गई पर उसकी दिल की धक-धक मोटरसाइकिल से भी ज्यादा हो रही थी। उसने डरते-डरते आँखें खोलीं, वह किसी बड़े से हाल में थी। उसकी देह में हरकत होते देख कोई उसके पास आया, प्यार से उसके सिर पर हाथ फेरा। उसने किसी परिवारी जन का हाथ समझ जल्दी से आँख खोल कर देखा; देखते ही उसके मुँह से चीख निकल गई। यह वही युवक था जो उसे दूर से देखता रहता था।

लाजो उसे अच्छी तरह से जानती थी। वह गाँव का ही एक दलित युवक था जो पढ़ लिख कर अपना धंधा कर रहा था। गाँव में जहां काफी सवर्ण युवक निठल्ले मटरगश्ती करते थे वहीं इस युवक ने अपनी कमाई से एक मोटरसाइकिल भी खरीद ली थी, जो पूरे गाँव के लोगों की आँखों

की किरकिरी बनी हुई थी। एक आध बार लोगों ने उसकी बाइक को नुकसान भी पहुँचाने का प्रयास किया, परंतु सारी दलित बिरादरी एक साथ खड़ी हो गई। नतीज़ा, आगे ऐसी हरकत करने की किसी की हिम्मत नहीं हुई। फिर भी नाकारों की तानेबाजी तो चलती ही रहती थी जिसकी वह बिलकुल परवाह नहीं करता था। लाजो को वह केवल देखता ही रहता था। कभी पास आने का प्रयास नहीं किया, ना ही कभी कोई फिकरा कसा। फिर भी जाने क्यूँ, लाजो उसकी उपस्थिति से भयभीत सी हो जाती थी।

और आज... उसी युवक को इस अनजानी, अकेली जगह पर इतने नजदीक पाकर वह डर गई और उठ कर भागी। पर हाल से निकलने का कोई रास्ता ही नहीं था। वह पिंजड़े में फंसे पंछी की भांति फड़फड़ाई और वहीं ज़मीन पर गिर कर फिर बेहोश हो गई।

दोबारा उसे जब होश आया तो वह एक चारपाई पर लेटी थी। कमरे में कोई नहीं था। वह उठी उसने देखा खिड़कियों में सींकचे लगे थे जिनसे ढलते हुए सूरज की रोशनी आ रही थी। ढलता हुआ सूरज...! वह घर से तो भरी दोपहरी में निकली थी। मतलब उसे यहाँ पर कई घंटे गुज़र गए हैं।

यह सोचकर वह पहले तो खुश हुई कि घरवाले उसे ढूँढ़ने लगे होंगे और जल्दी से उसे छुड़ा लेंगे। पर अगले ही क्षण उसे याद आया कि वह उसे ढूंढ़ेगे कहाँ। वह शायद घर से कहीं बहुत दूर है, क्योंकि बस्ती कि कोई आवाज़ नहीं आ रही थी। केवल साँझ का बसेरा लेती हुई चिड़ियों कि चहचहाहट... और अब तो झींगुरों कि झंकार भी शुरू हो गई थी। यदाकदा कोई सियार भी हुआने लगता।

...तो क्या वह बस्ती से दूर किसी जंगल में थी! वह एक बार फिर बुरी तरह से सिहर गई। क्या इतनी दूर उसके घरवाले उसे ढूंढ़ पाएंगे? उस पर फिर से बेहोशी छाने लगी। मगर उसने चेतन रहने का प्रयास किया, और अपने चारों ओर निगाह दौड़ाई। एक तरफ उसे एक छोटा से दरवाजा दिखा जो अधखुला था। उसने दौड़ कर दरवाजे को खोला जिससे वह बाहर निकल सके। पर यह क्या! यह तो संडास टाइप शौचालय था। संडास पहली मंज़िल पर था। उसने सोचा, तो क्या वह ज़मीन से ऊपर की मंज़िल पर कैद है? यह समझ आते ही उसे बड़ा धक्का लगा। उसे लगा कि बहुत दिनों से यह युवक षड्यंत्र रच रहा था। पूरी तैयारी के बाद ही उसने उसे उठाया है।

वह पछताने लगी कि जब उसने इस युवक की निगाहों में अन्य शोहदों से कुछ अलग देखा जो उसे भयभीत करता था तब ही उसे अपने घर वालों को बताना चाहिए था। कम से कम उस युवक की नीयत के बारे में घरवालों को अंदाज़ तो हो जाता। उसके एकाएक गायब होने पर पहला शक उसी युवक पर जाता। शक के बिना पर पुलिस के लिए उसे खोज कर ढूंढ़ निकालना आसान हो जाता। पर अब क्या हो सकता है!

लड़कियों का यह स्त्री सुलभ संकोच गुण माना जाता है। पर विवेक हीन गुण भी दोष बन जाता है। माँ-बाप को चाहिये कि अनुशासन के साथ ही वह बच्चों से ऐसे संबंध बना कर रखें, जिससे बच्चे अपनी भ्रांतियाँ और भय उनसे साझा कर सकें। बच्चियों के बारे में यह विशेष ध्यान देने योग्य बात है; और यह दायित्व माँ को निभाना चाहिये।

तभी पेड़ों के पक्षी फड़फड़ा कर उड़ने लगे। लाजो चौकन्नी हो कर ध्यान से देखने लगी। कुछ समय बाद ही उसे भी मोटरसाइकिल की धक-धक सुनाई पड़ने लगी। चिड़ियों को आती हुई बाइक का पहले ही पता चल गया था। पगडंडी पर बाइक सवार युवक को देखते ही लाजो झट से आँखें मूँद कर बिस्तरे पर लेट गई।

वह आया। उसने समझा लाजो अभी तक बेहोश है। लाजो के सर पर उसने प्यार से हाथ फेरा और पास ही बैठ कर उसे देखता रहा। उसके स्पर्श से लाजो वितृष्णा से सिहर उठी, जिसे उसने बड़ी कठिनता से दबाया। वह युवक कुछ खाने का सामान लाया था जिसे उसने मेज़ पर सजा दिया।

लाजो को समझ में आ चुका था कि युवक का उसे नुकसान पंहुचाने का फिलहाल कोई इरादा नहीं है। पर वह कब तक ऐसे ही मरी सी लेटी रहेगी? उसे भी कुछ करना चाहिये। यह सोच कर वह पहले कुछ कुनमुनाई और आँखें खोल दीं।

लाजो ने आँखें खोलते ही दो बड़ी-बड़ी आँखों को अपने चेहरे के नजदीक घूरते हुए पाया। दुनियादारी से दूर लाजो को भी उन आँखों में कोई वहशत नज़र नहीं आई। युवक की आँखों में कोमलता का भाव था। फिर भी लाजो ने अपने इतने नजदीक किसी परपुरुष को कभी महसूस नहीं किया था। सो लाजो, जो पहले से ही डरी हुई थी, आर्तंकित होकर उसी पूरी ताकत से युवक को ठेल कर एकाएक भाग खड़ी हुई। युवक ने लाजो को पकड़ने का कोई प्रयास नहीं किया। वह जानता था कि लाजो

कहीं भी जा नहीं सकती। पकड़ने या रोकने का प्रयास लाजो को और भी आतंकित कर सकता था। इसलिए वह चुपचाप अपनी जगह बैठ कर मात्र निगाहों से लाजो का पीछा करता रहा। उसके मुँह पर आनंद और विनोद भरी मुस्कान थी।

सबसे दूर के कोने पर पहुँच कर लाजो ने पूछा, ''तुम कौन हो और मुझे यहाँ ज़बरदस्ती उठाकर क्यों लाये हो? अभी मेरे पिता पुलिस के साथ यहाँ पहुँचने वाले ही होंगे। अपनी खैरियत चाहते हो तो मुझे जल्दी से जल्दी मेरे गाँव की सीमा पर पहुंचा दो। मैं वायदा करती हूँ कि मैं किसी को भी तुम्हारे बारे में कुछ नहीं बताऊँगी।''

लाजो जानती थी कि उसकी यह गीदड़ भभकी ही है। फिर भी सोच रही थी कि संभवत: काम कर जाए।

''बाकी तो सब ठीक है, यह तुमने सही नहीं कहा कि तुम मुझे नहीं जानती। तुम्हारे गाँव का रहने वाला हूँ। पिछले सात महीने से रोज़, बगैर नागा, बगैर किसी काम के तुम्हारे रास्ते में खड़ा तुमको टकटकी लगाकर देखा है मैंने। यह बात दीगर है कि तुमने कभी मुझसे बात नहीं की।'' फिर कुछ रुक कर बोला, ''मेरा नाम शिवपाल है। जंगलात में मेट का काम करता हूँ। तनख्वाह और ऊपरी आमदनी मिला कर महीने में 15-20 हज़ार तो कमा ही लेता हूँ। यदि मैं नीची जात का न होता तो अबतक औरों के अलावा तुम्हारे पिता भी तुम्हारा रिश्ता लेकर मेरे यहाँ आ चुके होते। पर यह जात का अंतर मेरे रुपयों से नहीं मिट सकता, और मैं तुम्हारे बिना रह नहीं सकता। मेरे पास तुम्हें उठाने के सिवा कोई दूसरा उपाय नहीं था।''

वह जंगल के ठेकेदार के मेट के रूप में काम करता था। जंगल के बीचों-बीच एक बड़े तालाब से कुछ दूर पर ही उसने अपने रहने का ठिकाना बना लिया था। घर के चारों ओर कंटीले तारों की एक काफी ऊंची बाड़ बनी थी। मोटे लकड़ी के कुंदों का गेट था जिससे दो आदमी या एक मोटरसाइकिल आसानी से निकल सके। इस बाड़े के अंदर जंगल की लकड़ी का एक दो मंज़िला घर सा बना था। इस घर की पहली मंज़िल पर मेट के रहने का स्थान बना था। मेट अमूमन पास पड़ोस के गाँव का ही रहने वाला होता था इसलिए ज़रूरी नहीं कि वह स्थायी तौर पर अपने इस निवास पर ही रहे। जंगल आने जाने वालों को भी मेट के रहने की इस जगह के बारे में ज्यादा जानकारी नहीं थी।

जंगली जानवरों से भरा यह क्षेत्र पूरी तरह से निरापद तो नहीं था पर काफी कुछ सुरक्षित अवश्य था।

सभी पशुओं को पानी की आवश्यकता होती है। वे दिन में कम से कम एक बार अवश्य पानी के स्रोत के पास अपनी प्यास बुझाने आते हैं। आदतन सभी पशु एक निश्चित समय और निश्चित मार्ग से ही जलाशय पहुँचते हैं। लाजो जहाँ कैद थी वह आशियाना इन जानवरों के मार्ग से कुछ दूर पर स्थित था। वहाँ से आते-जाते जानवर अक्सर दिखाई दे जाते हैं। शेर आदि बड़े और हिंस्र जानवरों के लिए यह जलाशय, पानी के साथ भोजन भी उपलब्ध करा देता है।

देखा गया है अधिकतर शेर पानी के स्रोत के पास ही घात लगा कर बैठता है और शिकार नजदीक आने पर उस पर झपट पड़ता है। मगर शेर की आदत है कि वह एक जगह नहीं रुकता। एक रात में उसके लिए 50 किलोमीटर की दूरी तय करना मामूली बात है। अतः वह एक स्थान पर बहुत दिनों के बाद ही वापस लौटता है। महीने पंद्रह दिन में शेर के शिकार करने की आवाज़ से जंगल गूंज जाता। अन्य जानवरों से सुरक्षित मेट का आवास उस समय सबसे असुरक्षित हो जाता था, जब कभी हाथियों का झुंड पानी पीने को वहाँ आ पहुंचता। मस्त हाथी जहाँ से भी निकलते हैं पेड़ों को या उनकी टहनियों को नष्ट करते चलते हैं। ऐसे में यदि किसी कारण से हाथी चिढ़ जाए तो आसपास के इलाके को भी तहस नहस कर सकते हैं। बिगड़े हथियों से निपटने के लिए जंगल कर्मियों को आग का सहारा लेना पड़ता है। आग देखते ही हाथी दूर भागते हैं।

पहले दो दिन लाजो ने उसके लाये खाने को हाथ भी नहीं लगाया। उसकी अनुपस्थिति में कभी-भी उठकर पानी अवश्य पी लेती। इस उपवास के पीछे एक तो चिंता के मारे खाने की अनिच्छा तो थी ही, वहीं एक आशा की किरण भी थी कि बगैर खाने से उसकी मृत्यु होने के भय से वह उसे स्वतंत्र कर देगा। मगर शिवपाल भूख की ज्वाला की प्रबलता से परिचित था। वह जानता था कि दुनिया की सबसे बड़ी लाचारी 'भूख' है। वह मानव को कितना नीचे गिरा सकती है, इसका भान शिवपाल को ही क्या उसकी पूरी बिरादरी भुक्तभोगी थी।

लाजो के प्रति सारे सम्मोह, आसक्ति के बावजूद शिवपाल के मन-मानस में जाति-भेद का दंश तो था ही। वह यह भी देखना चाहता था की उच्चवर्ण की यह बेटी कितने दिनों तक भूख बर्दाश्त कर सकती है?

और अंत में भूख और जीने की इच्छा की विजय हुई।

लाजो को पहले ग्रास में बहुत ही ग्लानि हुई। परंतु जब कहने से शरीर में शक्ति और मस्तिष्क में सोचने की ताकत आई तो ग्लानि का स्थान संघर्ष ने ले लिया। उसने सोचा कि मुक्ति के लिए शक्ति और युक्ति दोनों कि आवश्यकता होगी अतः उसका खाने का परित्याग असंगत है। वह नियमित रूप से खाना खाने लगी।

शिवपाल अब बने बनाए खाने के स्थान पर खाना बनाने की सामग्री लाने लगा। लाजो भी इशारा समझ कर खुद खाना बनाने लगी। बिना शिवपाल की मर्ज़ी वह भाग भी नहीं सकती थी अतः उसने शिवपाल का प्रतिरोध करना तो बंद कर दिया, मगर वहाँ से छूटने का विचार उसके मन से नहीं निकला।

...और फिर एक दिन उसे उस परिस्थिति से भी गुजरना पड़ा जिसका उसे डर था। इस संयोग से उसके दिल की नफरत और बढ़ गई। मगर वह शांत बनी रही।

शांति ही शांति में वह माँ भी बन गई। स्त्री कोख की यही मजबूरी है। जैसे- धरती आम और बबूल के बीज में फर्क नहीं करती, जो भी बीज उस पर गिरा, उसे समान निष्ठा पोषित करती है। इसी प्रकार स्त्री कोख भी प्रणय और बलात्कार के बीज में फर्क नहीं करती। इसीलिए स्त्री और धरती दोनों को धात्री कहते हैं।

नवजात के प्रति लाजो के मन में ममता और घृणा दोनों थीं। ममता उसे शिशु का पोषण करने को बाध्य करती, तो शिशु का अस्तित्व लाजों को अपने अपमान और लाचारी का प्रतिमान प्रतीत होता। शिवपाल के प्रति उसकी नफरत में बच्चे की उपस्थिति 'दाद में खाज' बन जाती।

शिशु छह महीने का हो गया था, लाजो में शिवपाल को विद्रोह की कोई चिंगारी शेष नहीं दिखती थी। इसलिए वह कुछ आश्वस्त हो गया था। आश्वस्ति जब असावधानी बन जाती है, तो घातक भी हो सकती है।

और ऐसा ही शिवपाल के साथ भी हुआ।

एक दिन जब शिवपाल लाजो के पास आया तो लाजो को ज़मीन पर बेहोश पाया। बच्चा पास ही चारपाई पर पड़ा सो रहा था। लाजो की दशा देख शिवपाल घबरा गया। उसने लाजो की नाक पर उंगली रखी, श्वास चल रही थी। वह पानी लेने को भागा। पानी के छींटे पड़ते ही

लाजों कुनमुनाई, शिवपाल आश्वस्ति की साँस लेकर पीछे हटा कि, लाजो ने अपनी पीठ के नीचे से चाकू निकाल कर शिवपाल पर वार कर दिया। जंगल जीवन के आदी शिवपाल की त्वरित प्रतिक्रिया ने उसकी जान तो बचा ली, किन्तु लाजो के चाकू का भरपूर वार उसकी जाँघ पर पड़ा। वह ज़मीन पर गिर पड़ा।

लाजो बड़ी फुर्ती से उठ कर खड़ी हो गई। घर का दरवाजा जो शिवपाल ने घबराहट में अंदर से लाक नहीं किया था। वह दरवाजे से नीचे जाने को उतरने वाली ही थी कि शिवपाल ने लेटे-लेटे ही उसे आवाज दी। लाजो एक क्षण के लिए रुकी। शिवपाल ज़मीन पर पड़ा था उसी का शिकारी चाकू उसकी जाँघ में अभी भी घुसा देख लाजो रुक गई। उसकी आँखों से नफरत की लपटें निकल रही थीं। वह तिरस्कार से बोली, ''बोलो।''

शिवपाल बोला, ''मैं तुमसे रुकने को नहीं कहूँगा, ना ही बच्चे का हवाला दूँगा। मैं तुम्हें प्यार करता हूँ इसलिए, तुम्हें सतर्क करना चाहता हूँ।''

फिर दर्द को काबू करते हुए बोला, ''यहाँ से भागकर, पहले तो तुम अपने गाँव नहीं पहुँच पाओगी, जंगली जानवरों का शिकार बन जाओगी। दूसरे यदि घर सकुशल पहुँच भी जाती हो, तो क्या तुम्हारे कुलीन माता-पिता इतने दिन तक दलित के साथ अंतरंगता से रहने के बाद तुम्हें स्वीकार करेंगे?''

लाजो ने यहाँ से मुक्त होने का दृढ़ निश्चय कर लिया था। वह बोली, ''चुप रहो! मुझे बहलाने की कोशिश मत करो।''

शिवपाल साग्रह बोला, ''क्या तुम्हें मालूम है कि गरीब माँ बाप पर जवान लड़की बोझ होती है। बदनामी के डर से या बेटी की शादी के झंझट से बचाने के लिए तुम्हारे ब्राह्मण पिता ने तुम्हारे गायब होने की पुलिस में रिपोर्ट भी नहीं लिखाई होगी। तुम उनके लिए मर चुकी हो। ऐसे में तुम कहाँ रहोगी, कहाँ जाओगी?'' कहकर शिवपाल बेहोश हो गया।

उसको बेहोश हुआ देख लाजो बड़ी बेफिक्री से सीढ़ियाँ उतरने लगी। इस समय उसके मन में शिवपाल के प्रति नफरत का ज्वालामुखी फट चुका था। उसे निकटता के वह क्षण याद आए जब शिवपाल ने उसे अंदर तक दूषित कर दिया। उसका बस चलता तो वह उसके शिशु को खींचकर अपनी कोख से नोच फेंकती। परंतु यह संभव नहीं था।

लापरवाही में शिवपाल अपने शिकारी चाकू को घर पर ही छोड़ गया, जो लाजो ने आज के लिए छुपाकर रखा था। शिवपाल की यह लापरवाही जानलेवा भी सिद्ध हो सकती थी।

लाजो लकड़ी का गेट खोलकर बाहर निकलने वाली ही थी कि उसकी निगाह नीचे बरामदे में पिंजरे में बंद पंछी पर पड़ी। शिवपाल ने पिंजड़े में एक चिड़िया पाल रखी थी जिसे वह बहुत चाहता था। रोज़ सुबह शाम उसका पिंजड़ा साफ करता, उसे दाना देता, पानी देता था और जब भी समय मिलता उसके पास बैठ कर ऐसे बात करता जैसे चिड़िया सब कुछ समझ रही हो। पर चिड़िया प्रसन्न नहीं थी। वह कैद में तड़प रही थी। हर समय उसे खुला आकाश और हरे-भरे वृक्ष और कुंज याद आते रहते, जिनमें वह रहने की आदी थी। सही भी था चिड़िया इससे कोई सरोकार नहीं रखती कि पिंजरा लोहे का है या सोने का। उसे तो अपनी आज़ादी चाहिये, हर समय और हर कीमत पर। जब उसका मालिक उसके पास बैठकर उससे बात करता तो चिड़िया बहुत ज़ोर-ज़ोर से बोल कर अपना गुस्सा प्रकट करती और उससे अपने को आज़ाद करने को कहती। पर अफसोस, वह बुद्धू समझता था कि चिड़िया खुश होकर उससे बातें कर रही है।

आज लाजो को चिड़िया और अपने कष्ट में साम्यता दिखाई दी। उसने धीरे से आकर पिंजरे का दरवाजा खोल दिया। चिड़िया इसी फिराक में थी। वह फुर्र से पिंजड़े से निकल कर छत पर जा बैठी और खुशी से गाने लगी... पर यह क्या ! एक कौवा जो जानता था कि पिंजड़े में रहने के कारण चिड़िया के पंख उतने सबल और सक्षम नहीं हैं, उसकी ओर झपटा। चिड़िया आकाश में उड़कर कौए से बच नहीं सकती थी, सो अनायास ही वह जल्दी से पिंजड़े में जा छुपी। वही पिंजड़ा जिससे वह छूटना चाहती थी, वहीं उसे शरण मिली।

लाजो मानो तंद्रा से जाग उठी। उसने कौए को भगाते हुए तत्परता से पिंजड़े का दरवाजा बंद कर दिया। पिंजरे के कोने में छिपी चिड़िया हाँफ रही थी। वह समझ चुकी थी कि यह बंधन ही उसका जीवन है।

लाजो विरक्त भाव से सीढ़ियाँ चढ़कर कमरे में वापस लौट आई। दरवाज़े की साँकल उसने अपने हाथ से बंद कर ली।

❐❐❐

महिमा सुंदरकाण्ड की
(खिचड़ी राधा-कृष्ण की)

गंगा-जमुनी संस्कृति, धार्मिक सद्भावना और आपसी प्रेम के किस्से अब केवल चुनावी भाषणों, अफसानों में सिमट कर रह गए हैं। उनका दीदार यदि हम करना चाहें तो हमें सन् 1966 के पहले के रायबरेली में झांकना पड़ेगा। सत्तर के दशक के पहले रायबरेली में कभी-कभी यह भेद कर पाना कठिन था कि अमुक व्यक्ति हिन्दू है या मुसलमान। हिन्दू छात्र मुस्लिम गुरुओं के व मुसलमान छात्र हिन्दू गुरुओं के समान रूप से चरण-स्पर्श करते थे। दोनों ही गुरु छात्रों को समान रूप से आशीर्वाद देते थे 'खूब बड़े हो।' ईद, होली, दीवाली में सब शरीक होते थे। सूरजपुर की बड़ी रामलीला में तो दोनों फिरके हाथ बटाते ही थे पर, खालीसहट की रामलीला तो मुसलमानों द्वारा ही शुरू हुई। सारा खर्चा एक मुस्लिम रईस स्वयं करते थे, फिर भी 'एक आना' चंदा हर परिवार से अवश्य लिया जाता था। किसी के पूछने पर कि 'इकन्नी चंदा बेकारै लेत हो। यहि ते नीक है कि न लेव।' जवाब मिला 'पैसा इकट्ठा करना मकसद नहीं है। एक आना देकर हर मुहल्ले वाला इस रामलीला में अपनी भागीदारी मानेगा।

ऐसा ही आबोहवा के एक शख्सियत थे श्री अब्दुल रशीद साहब जिन्हें रायबरेली में 'आधुनिक रसखान' कहा जाता था। रशीद साहब शिया मुसलमान थे।

उस समय सूरजपुर में 'चातुर मण्डल' के तत्वावधान में नित्य संध्या को 'काव्य-गोष्ठी' का आयोजन होता था। जिसमें वहाँ के मूर्धन्य साहित्यकार, प्रबुद्धजन, जाने माने लोगों के अलावा हर किसी का स्वागत था। इन गोष्ठियों की प्रेरणा ने अनेकानेक मूर्धन्य कवियों का सृजन किया। वातावरण इतना प्रेरक था कि उस परिवार के बच्चे भी काव्य-रचना करने लगे। ऐसे प्रशिक्षु कवियों की रचनाओं के संशोधन हेतु एक अलग समय तय था। एक रोज संशोधनकर्ता के आश्चर्य का पारावार न रहा जब संशोधन

हेतु परिवार का एक सेवक भी अपनी रचना लेकर प्रस्तुत हुआ। ऐसी प्रेरणा-दायक थीं वे गोष्ठियां।

ऐसी ही गोष्ठी में एक बार एक स्वामी जी का प्रवचन हुआ। विषय था 'सुन्दरकांड एक कल्प-वृक्ष'। स्वामी जी ने लगभग एक सप्ताह तक सुंदरकांड का प्रवचन किया। काव्यगत सुंदरता व भक्ति की पराकाष्ठा का वर्णन करने के बाद, स्वामी जी ने इसके नियमित पाठ, मनन व अध्ययन को, हर कल्याणकारी कामना को पूर्ण करने में सक्षम बताया। प्रवचन समाप्त हुआ। सभी ने स्वामी जी की अद्भुत वाणी की प्रशंसा की। सभी स्वामी जी व आयोजकों को धन्यवाद देकर घर को चल दिये। पर यह क्या...स्वामी जी ने देखा कि एक मुस्लिम नवयुवक अपनी जगह पर बैठा था। स्वामी जी ने पूछा, ''मौलाना, तुम्हें घर नहीं जाना?'' नवयुवक ने बड़े संकोच से स्वामी जी से प्रश्न किया, ''स्वामी जी, अगर हमहूँ सुंदरकाण्ड का पाठ करी तो का हमरिहू मुराद पूरी होई।''

स्वामी जी ने हँसते हुए पूछा, ''का तुम भगवान् के बनाए न आहिउ?''

युवक बोला, ''हाँ, आहिन तौ।''

स्वामी जी बोले, ''अगर तुम पाक-साफ तरीके से एक महीने तक पूर्ण श्रद्धा के साथ सुन्दरकाण्ड का पाठ करो तो तुम्हारी मुराद अवश्य पूरी होगी। हाँ, मुराद कल्याणकारी होनी चाहिए।''

युवक प्रणाम करके चला गया। स्वामी जी को तब अनुमान नहीं था कि उनके प्रवचन ने सरजमी पर एक और 'रसखान' का सृजन कर दिया।

रशीद साहब घर आए। भोजन के बाद अपनी सहधर्मिणी से अपने निश्चय को अवगत कराया। पत्नी ने कोई प्रतिक्रिया नहीं की। केवल पति के चेहरे पर निश्चयात्मक भाव को देखती रही। शायद उस भाव को देखने के बाद किसी शक की गुंजाइश नहीं थी। सुबह उठकर उन्होंने घर के एक हिस्से को पूर्ण रूप से स्वच्छ कर रशीद साहब के लिए जगह मुकम्मल की। मुर्गियों व बकरियों का प्रवेश न हो पाएं इसलिए उस स्थान को कटीली झाड़ियों से अलग कर दिया। बच्चे भी उस स्थान पर बगैर वजू के नहीं जा सकते थे। एक महीने या दो महीने तक रशीद साहब को किसी ने नहीं देखा।

एक रोज एकाएक रशीद साहब सकुचाते हुए संशोधन सत्र में उपस्थित हुए। उर्दू लिपि में लिखी उनकी रचना राधा-कृष्ण पर थी। तब

तक उन पर हिंदी का शब्दज्ञान प्रकट नहीं हुआ था, इसके नाते कुछ त्रुटियाँ अवश्य थीं, परंतु भाव मर्मस्पर्शी थे। संशोधन के बाद उन पंक्तियों को काव्य-गोष्ठी में प्रस्तुत किया गया - राम-भक्त हनुमान् की अनुकंपा से राधा-कृष्ण के भक्त 'आधुनिक रसखान' का अवतरण हो चुका था।

कुछ समय बीत जाने के बाद उन्होंने कविता कागज पर लिपि बद्ध करना बंद कर दिया। बात-बात में राधा और कृष्ण पर पंक्तियाँ बोल पड़ते। जो लोग सुनते वह वाह-वाह करते। वह स्वयं चलते-फिरते 'काव्य-निधि' हो चुके थे।

उन्हें कृष्ण को 'माखन चोर' का बालरूप ही प्रिय था। अपनी कविता में कृष्ण को वह 'चोर' नाम से संबोधित करते।

धीरे-धीरे उनकी ख्याति एक विशिष्ट कवि के रूप में हो गई। मुसलमान होते हुए भी कृष्ण भक्ति...। पर इस तथ्य की ओर किसी का ध्यान ही नहीं गया। कारण...तब तक रायबरेली में धार्मिक मतभेद इतना सबल नहीं था। वह कवि सम्मेलनों में आमंत्रित किए जाते राधा-कृष्ण की कवितायें उनके मुंह से धारा प्रवाह निकलती पर उनको लिपिबद्ध करने वाला कोई नहीं होता।

ऐसा ही एक कवि सम्मेलन हरचंदपुर में आयोजित हुआ। वहाँ एक इंटर का छात्र भी श्रोता के रूप में उपस्थित था। वह पहले से रसखान साहब को नहीं जानता था। उसने देखा एक सफेद कुर्ता-पैजामा में एक मुसलमान वृद्ध राधा और कृष्ण की लीलाओं पर काव्य पाठ कर रहे थे। उनकी आँखों से बहती आँसुओं की अजस्र धारा सफेद दाढ़ी व उसके बाद कुर्ते को भिगो रही थी। ऐसी कृष्ण भक्ति तो वृन्दावन में भी कम मिलती है। ऐसा वह सोच ही रहा था कि मंच संचालक ने एक कवि जो अभी-अभी मंचासीन हुए थे, उनके परिचय में बोले ''रशीद साहब! नवागंतुक यहाँ के बहुत प्रसिद्ध कवि हैं (मजाक के लहजे में) हम लोग इन्हें 'खिचड़ी' के नाम से बुलाते हैं।

रशीद साहब अपनी कविता रोक कर बोले-

''चउरन ऐसी राधिका, ओ उरदन ऐसे चोर।
खिचड़ी होई के जो मिलै तो, धन्य भाग हैं मोर॥''

यह कहकर उन्होंने खिचड़ी जी को ऐसे प्रणाम किया जैसे- साक्षात् राधा-कृष्ण के विग्रह को नमन कर रहे हों। सब लोग वाह-वाह करने लगे।

नवयुवक विभोर हो उठा। ऐसी भक्ति की खिचड़ी के चावल में गोरी राधिका व काले उरदों में श्याम नजर आते हैं। वह स्वयं ऐसे इस कृष्ण-भक्त का भक्त हो गया। वहीं जमीन पर ही सिर रख कर उसने रशीद साहब को नमन किया। उसके बाद यह युवक प्रयास करके जहाँ-जहाँ रशीद साहब का काव्य-पाठ होता वह डायरी व कलम लेकर जाता और उनके मुंह से निकले प्रत्येक शब्द को नोट करता गया। रशीद साहब को जब पता चला तो उस नवयुवक को बुलाकर आशीष दिया और कहा, ''पढ़ाई लिखाई में ध्यान दिये रहैव, वहौ जरूरी है। खूब बड़े के हो, उन्नति करौ।''

रशीद साहब की जुबान पर सरस्वती का वास था। वह लड़का सहायक स्टेशन मास्टरी में सेलेक्ट हो गया। ड्यूटी से छुट्टी मिलती तो पुनः वह रशीद साहब की रचनाओं को लिपिबद्ध करता। इस प्रकार दो पांडुलिपियाँ तैयार हो गईं।

यह कथा स्वयं स्टेशन मास्टर बाजपेई ने मुझे सुनाई थी, जो उस समय सेवानिवृत्त हो चुके थे। बाजपेई जी ने भावुक होते हुए कहा, ''रशीद साहब मुझे अपना पुत्र मानते थे। उनके स्वयं के पाँच पुत्र थे। पर आयु में मैं उनके पाँचों पुत्रों से बड़ा था अतः रशीद साहब मुझे अपना ज्येष्ठ पुत्र मानते थे। उनके सभी बेटे मुझे दादा कहते थे। पहले मैं इस प्रेम को बुजुर्ग का वात्सल्य भाव मानता था।''

''अब्बा आपको अपना बड़ा बेटा मानते थे, उनके अंतिम संस्कार का पहला दायित्व आपका है। अब्बा कह गए हैं कि यदि आप संस्कार न करें तब तुम लोग कर देना। मैं दुःख से कम, प्रेम के आधिक्य से फूट-फूट कर रो पड़ा।''

कुछ देर बाद जब मैं वहाँ पहुँचा तब तक उन लोगों ने शरीर को संस्कार के लिए तैयार कर दिया था। 'निज जाये' पुत्र की भांति मैंने उनका मुस्लिम पद्धति से संस्कार किया और चालीसवाँ किया। इसके साथ हिन्दू पद्धति से मैंने अपने घर में दसवां, त्रयोदशा संस्कार। इन सभी कृत्यों में मेरे पुत्र भी उसी प्रकार सम्मिलित हुए जैसे कि पितामह के संस्कार में पौत्र सम्मिलित होते हैं।

वसीयत में उन्होंने मुझे ही मुख्त्यार बनाया था। थोड़ी बहुत चल-अचल संपत्ति जो थी, के बँटवारे का भार भी मुझे सौंपा गया था। अपनी रचनाओं की रायल्टी हेतु उन्होंने केवल अपनी पत्नी को नामित

किया था, और इसका भी भार मुझ पर ही था। बँटवारे में मैंने उनके पुत्रों के लिए संपत्ति के पाँच हिस्से किए।

तो उन सभी भाइयों ने समवेत स्वर में उज्र किया, ''और दादा आपका हिस्सा?''

मजबूरी में मुझे अपना छठवाँ हिस्सा भी लगाना पड़ा, जिसको चलते समय मैंने बराबर-बराबर पाँचों छोटे भाइयों में बाँट दिया। बड़े भाई से हिस्सा पाने में उन्हें कोई उज्र नहीं थी। यह कह कर बाजपेयी जी ने एक बार फिर अपने आँसू पोंछे, उठ कर चले गए। शायद इसके बाद वह संयत नहीं रह सकते थे।

रशीद साहब की ख्याति-सुरभि धीर-धीरे रायबरेली से बाहर पहुँचने लगी। लोग रायबरेली वालों से आधुनिक रसखान के बारे में जिज्ञासा करते और आश्चर्य करते।

एक दिन लखनऊ दूरदर्शन की टीम उनके इंटरव्यू के लिए उनके घर पहुँची। साधारण घर, दरवाजे पर टाट का साधारण पर्दा। दूरदर्शन वाले सोच ही रहे थे कि इतना बड़ा कवि और इतना विपन्न आवास।

दरवाजे पर दस्तक के जवाब में रशीद साहब स्वयं उपस्थित हुए। उनकी सफेद दाढ़ी देख कर दूरदर्शन के एक सदस्य के मुँह से बेसाख्ता निकल पड़ा ''बड़े जईफ हैं।''

रशीद साहब को अपने आराध्य याद आ गए। उन्होंने कहने वालों को इंगित कर कहा-

''देखि-देखि श्वेत केशन को वृद्ध न जनियों कोय।
खोजन में घनश्याम के गई श्यामता खोय।''

पूरी टीम और टीम को आया देखकर जुटी लोकल भीड़ वाह-वाह कर उठी।

इंटरव्यू के अंत में टीम ने रशीद साहब से 'श्वेत केश' वाली रचना कैमरे पर फिर से दोहराने को कहा। इस पर रशीद साहब ने दुखी होते कहा भाई जो एक बार मुँह से निकल गया वह मैं चाह कर भी दुबारा याद नहीं कर पाता। इसीलिए तो मैं उसे चोर कहता हूँ। वह मेरा सब कुछ चुरा लेता है।

दुर्लभ और अद्‌भुत है ऐसी भक्ति, और ऐसी ही अद्‌भुत है महावीरप्रसाद द्विवेदी और जायसी की धरती रायबरेली।

❐❐❐

किशोर मन

कॉलेज के रास्ते में एक मूर्तिकार का घर पड़ता है। वैसे तो मूर्तिकार महोदय बहुत ही शुष्क प्रकृति के हैं, पर मूर्तियाँ बहुत अच्छी गढ़ते हैं। एक दिन कालेज जाते उसने मूर्तिकार के बाहर के कमरे की खिड़की से झांका। छोटे बड़े आकार की तमाम मूर्तियाँ कमरे में सजी थीं। कुछ अधूरी थीं कुछ पूर्ण हो चुकी थीं। कुछ देवी-देवताओं की मूर्तियाँ और कुछ जानवरों की सजीव आकृतियाँ। वह कुछ समय तक उन्हें देखता रहा। थोड़ी देर बाद वह कालेज चल दिया। अगले रोज वह फिर मूर्तिकार की खिड़की पर रुका और मूर्तियों को देखता रहा। आज उसे वह मूर्तियाँ कल से ज्यादा सजीव लगीं। उसका अब नित्य-क्रम बन गया था। वह घर से 5 मिनट पहले निकलता मूर्तियों को देखता उसके बाद कालेज निकल जाता। मूर्तिकार ने भी उसका खिड़की पर रुकना और झाँकना नोटिस किया। परंतु उसको कभी टोका नहीं। क्योंकि वह उसके रचना-कार्य में कोई व्यवधान नहीं उत्पन्न करता था।

एक दिन उस किशोर ने देखा कि मूर्तिकार किसी बड़ी सी संगमरमर की शिला पर छेनी हथौड़ी से खुटखुट कर रहा है। किशोर ने मुंह बनाया-ऊँह, इतने बड़े पत्थर पर क्या बना रहा है। वह मन में सोचता कॉलेज चल दिया। लौटने पर जब उसकी नजर उसी शिला पर पड़ी तो उसे विस्मय हुआ। शिला एक तरफ से मानव का आकार ले रही थी। उसकी उत्सुकता बढ़ी। वह कुछ और देर तक मूर्तिकार के हाथों की कला देखता रहा। सुडौल सिर पर से लंबे बाल पीछे की ओर दिखने लगे थे। तो यह नारी प्रतिमा गढ़ी जा रही है, सोचता हुआ घर आ गया। अगले दिन कॉलेज से लौटते समय जिज्ञासा उसे कलाकार की खिड़की तक ले गई। मूर्तिकार की आँखों की तन्मयता, भाल पर स्वेद-बिन्दु बता रहे थे कि वह अविराम कार्य में व्यस्त था। शायद विश्राम के लिए भी नहीं रुका था। शिला पर एक नारी का चेहरा उभर आया था। बड़ी-बड़ी अधखुली आँखें, सिर पीछे की ओर झुका, सिर के बाल जमीन को छू रहे थे। किशोर विभोर हो उठा। निर्जीव पाषाण-खंड में ऐसी सुंदर मुखाकृति।

अगले दो दिन कालेज में जन्माष्टमी की छुट्टी थी तीसरे दिन जब उसने मूर्तिकार की खिड़की से जैसे ही अन्दर देखा उसकी दृष्टि मूर्ति पर

पड़ी वह निर्निमेष देखता ही रह गया। शिला पर नारी-यष्टि का ऊपरी हिस्सा आकार ले चुका था। सुंदर कपोल, ऊपरी दांतों से निचला होंठ दबा था। आकर्षक ग्रीवा के नीचे सुडौल कंधे, उन्नत वक्ष। दोनों हाथ जमीन पर, आधी लेटी या आधा बैठी, कुछ ऊपर की ओर तनी पीठ वक्षों के उभार को और विकसित कर रही थी। इस विशेष मुद्रा में आधे बांह का ब्लाउज ऊपर उठ गया था जिससे वक्षों की आधी गोलाई दिख रही थी। पता नहीं क्यों उसकी सांसें तेज हो गईं, दिल की धड़कने बढ़ गईं, शरीर में एक अनजानी उत्तेजना उस पर छाने लगी। उसने नारी अवयवों को इस प्रकार कभी नहीं देखा था। तभी मूर्तिकार ने उसकी ओर देखा। किशोर अचकचा गया। जैसे चोरी करते पकड़ा गया हो। वह एकदम से हटकर चल दिया। मूर्तिकार हल्के से मुस्कराया। शायद उसे किशोर मन का नारी प्रतिमा के प्रति आकर्षण का आभास हो गया था। अगले ही क्षण वह फिर से अपने कार्य में व्यस्त हो गया।

पर किशोर के मन मानस को वह नारी काया आंदोलित करती रही। पढ़ाई में भी मन नहीं लगा। बार-बार वही दृश्य सामने आ जाता। कॉलेज वापसी में उसकी खिड़की से देखने की इच्छा तो अवश्य थी, पर साहस नहीं हुआ। पता नहीं क्यों मूर्तिकार की दृष्टि ने उसमें अपराध-बोध पैदा कर दिया था? मन में देखूँ न देखूँ के उहापोह और तन में तपिश लिए वह घर लौट आया।

पर अगले दिन वह यंत्रवत खिड़की पर खड़ा रहा। मूर्तिकार अब शिला के निचले हिस्से पर काम कर रहा था और नारी के पैरों को आकार दे चुका था, घुटनों पर कार्य कर रहा था। किशोर मूर्तिकार की छेनी हथौड़ी की ओर देखने का प्रयास करता पर उसकी दृष्टि मूर्ति के ऊपरी हिस्से पर जा टिकती। मूर्तिकार कहीं फिर उसको न देख ले इस भय से वह हट कर चला आया। मूर्तिकार की छेनी चलती रही, प्रतिमा आकार लेती रही, मुग्ध किशोर कई दिन तक उस छवि को निहारता रहा। मूर्तिकार को किशोर की आसक्ति का भान था। शायद इसीलिए वह घूमकर नहीं देखता था कि किशोर असहज न हो जाय। आखिर उसे भी किशोर के रूप में उसकी कला का जो फैन मिल रहा था।

मूर्ति लगभग पूरी हो गई थी। केवल कटि प्रदेश ही बनना बाकी था। परंतु अधूरी प्रतिमा भी अत्यंत आकर्षक बन पड़ी थी। लाल रंग के वस्त्र के नीचे से नारी का गोरा बदन दूध में हल्के गुलाल सा दिखाई पड़ता। हरा लंहगा केवल गांठो के ऊपर के भाग को दर्शा रहा था। किशोर जब

प्रतिमा के हर अंग को बारीकी से देखता तो हमेशा की भांति सांस तेज हो जाती। वह असहज हो जाता। ऐसा क्यों होता था वह नहीं जानता।

पता नहीं क्यों मूर्तिकार की खिड़की दो तीन दिन तक नहीं खुली। किशोर मूर्ति नहीं देख पाया जिससे वह खिन्न रहने लगा। उसकी आँखों के सामने वही नारी-यष्टि घूमती रहती।

फिर एक दिन उसे खिड़की खुली दिखी। वह जल्दी से खिड़की पर जा खड़ा हुआ- पर यह क्या उसके चेहरे का रंग उड़ गया। थोड़ी देर तक वह स्वयं मूर्तिवत हो गया। किशोर लज्जित वदन, नमित नयन वहाँ से हट गया। बोझिल कदमों से चल पड़ा। मूर्तिकार ने उसे मुड़कर देखा। चेहरे पर आज भी वही मुस्कान थी, पर आज उस मुस्कान में आत्मसंतोष था और किशोर के लिए सहानुभूति थी।

आज जब किशोर मूर्ति को ऊपर से नीचे निरख रहा था। चेहरा ग्रीवा, वक्ष-स्थल, ब्लाउज से झाँकती गोलाई, और...और...और...यह क्या था 'प्रसव पीडा'। किशोर को आघात लगा। यह तो 'माँ' है! पीछे धरती पर टिके हाथ, तनी हुई पीठ, दांतो में दबा निचला होंठ शृंगार की उत्तेजना न होकर प्रसव पीड़ा थी। उसे बहुत ग्लानि हुई। वह कॉलेज न जाकर घर लौट गया। उतरा चेहरा देख उसकी माँ बोली, ''लगता है तबीयत खराब है। तू लेट कर आराम कर।'' माँ सिर में बाम लगा कर उसका सिर दबाने लगी, तो देखा कि बेटे की आँखों में ...आँसू! ''क्या बहुत दर्द है?'' माँ चिंतित हुई।

''था, पर तुम्हारे स्पर्श से गायब हो गया'' यह कह कर किशोर माँ से लिपट गया। कब सो गया पता नहीं।

अगले दिन कॉलेज जाने में देर होते देख माँ ने कुर्सी पर बैठे स्वेटर बुनते हुए पूछा, ''देरी क्यों कर रहा है। आज मूर्ति मत देखना वरना कॉलेज को देर हो जायेगी।''

किशोर ने माँ के पास बैठ कर उनके घुटनों पर सर रखकर बोला, ''तुम्हें देखने के बाद अब मूर्ति देखने की जरूरत नहीं है माँ।''

थोड़ी देर बाद वह उठकर जब कॉलेज चला गया तो माँ ने महसूस किया कि उसके घुटने के ऊपर साड़ी पर दो गीले निशान थे।

माँ की गोद में आँसुओं को समर्पित करके उसका मन ग्लानि रहित व निष्कलुष हो चुका था।

❐❐❐

कहानी बालिगों के लिए

पेशे से व्यवसायी, अच्छी आमदनी, खूबसूरत व्यक्तित्व, आलीशान आवास, कुल मिलाकर खन्ना साहब उन सभी गुणों के मालिक थे, जो महिलाओं को लुभाने के लिये होने चाहिए। खन्ना साहब अगर रंगीन मिजाज थे, तो उसमें उनकी कोई गलती नहीं थी। पैसे से मजबूत खन्ना साहब ने सामाजिक प्रतिष्ठा के लिए मशहूर अंतर्राष्ट्रीय क्लब की मेम्बर-शिप ले रखी थी। ऐसे क्लब एनजीओ के रूप में काम करते हैं। धनाढ्य सदस्य अपनी काली कमाई का कुछ हिस्सा क्लब द्वारा किए सामाजिक कार्यों में लगा कर टैक्स बचाते और समाज सेवक होने का ठप्पा भी पा जाते। छोटे नगरों में इन क्लबों की मेम्बरशिप वरिष्ठ प्रशासनिक अधिकारी ही ले सकते थे। शहर पुलिस और प्रशासन के वरिष्ठतम अधिकारी बारी-बारी से उसके सचिव पद पर नामित होते, जबकि अध्यक्ष का पद व्यवसायियों के लिए आरक्षित रहता। इसके दो कारण थे- एक सरकारी तनख्वाह पर यह अधिकारी क्लब का नियमित योगदान नहीं कर सकते थे। हाँ, यह बात और है कि अपने प्रशासनिक अधिकारों का प्रयोग कर वह इन क्लबों को खुले हाथ से अनुदान दिलाने में सक्षम थे। जहां अधिकारी गण धनकुबेरों के बीच अपने को गौरवान्वित महसूस करते, वहीं क्लब के साधारण मेम्बर भी जहां आवश्यकता हो, अपनी पहुँच की धौंस जमा लेते थे।

खन्ना साहब की एक ही बेटी थी जो बारहवीं जमात में पढ़ रही थी। कलावती कन्या की भांति बढ़ती हुई बेटी हर माँ-बाप के लिए चिंता का कारण बनने लगती है। खन्ना साहब की पत्नी की मृत्यु पहले ही हो चुकी थी, सो माँ और बाप दोनों की जिम्मेदारी खन्ना साहब की ही थी। वैसे बेटी बहुत सुगढ़ और सुशील थी पर खन्ना साहब अपने व्यक्तिगत अनुभव से जानते थे कि लड़कियां कहाँ और किस प्रकार बहलाई जा सकती हैं। यह अतिरिक्त ज्ञान उनकी चिंता हमेशा बढ़ाए रहता। बेटी पार्टी आदि के लिए भी कहीं बाहर अकेली न जाये इसके लिए वह स्वयं अपने घर में हर महीने पार्टी का आयोजन करते रहते। इस कारण अभी

तक खन्ना साहब साहब को बेटी में ऐसा कुछ भी नहीं दिखा जो उनकी चिंता को द्विगुणित करे।

जब से बिटिया बड़ी हुई खन्ना साहब ने विदेशी नस्ल का एक बड़ा सा खूंखार कुत्ता पाल लिया था। यह शानदार श्वान उनके स्टेटस में चार-चाँद लगाने के साथ ही हर शाम बेटी के साथ ईवनिंग वाक पर जाता। खन्ना साहब का सोचना था कि कुत्ता अपने डील-डौल और पाज़ेसिव नेचर से रास्ते के मनचलों के दु:साहस को चूर-चूर कर देगा। खन्ना साहब का सोचना सही भी था। कुत्ता वास्तव में बहुत पाज़ेसिव होता है। यदि कोई भी बेटी से बात भी करने का प्रयास करता तो कुत्ते की त्योरी चढ़ जाती। वह भयानक मुद्रा में दाँत निकाल कर गुर्राना प्रारम्भ कर देता जो बड़े से बड़े आशिक की हिम्मत तोड़ने के लिए काफी था। खन्ना साहब ने ज़ाहिरा तौर पर अपनी बेटी पर कोई पाबंदी नहीं लगाई, ''बेटी! बाहर निकलते समय शेरू को ज़रूर साथ ले लिया करो।'' खन्ना साहब ने समझाया। बेटी इस बात का हमेशा ध्यान रखती। खन्ना साहब के यहाँ तो शेरू की कृपा से सब ठीक ही चल रहा था पर वीआईपी वाकिंग एरिया में अन्य टहलने वाले भी थे। कुछ के पास कुत्ते भी थे पर वह सब शेरू के आगे पसंघे भर भी नहीं थे।

जैसे चमन में कली खिलने की सूचना भँवरों को मिल जाती है, शमा रौशन होने की खबर परवानों को मिल जाती है, वैसे ही कन्या के युवा होने की सुरभि भी जल्दी ही चारो ओर फैल जाती है। कन्या के रास्ते में भी डोलते मानव भँवरों की बाढ़ आसानी से देखी जा सकती है। या यों कहिए कि मुहल्ले के छोरे किसी विशेष स्थान पर एकाएक, बेवजह दिखने लगें तो माना जा सकता है कि कहीं कोई कली खिल गई है।

खन्ना की पुत्री की राह में और वाकिंग एरिया में भी एकाएक युवाओं की भीड़ बढ़ गई। ठेलुए भी स्वास्थ्य लाभ की आड़ में नयनसुख हेतु वाकिंग पर आने लगे। भला हो शेरु का जिसके भय ने एक हफ्ते में ही बड़े से बड़े आशिकों की हवा निकाल दी। वाकिंग स्ट्रिप फिर से जेनुइन स्वास्थ्य लाभार्थियों के लिए निरापद हो गई। परंतु वास्तव में ऐसा ही हुआ होता तो यह कहानी कैसे बनती?

एक डेडिकेटेड आशिक फिर भी लगा रहा। देखने में वह मात्र जागर या वाकर ही लगता था, मगर वास्तव में उसकी निगाह 'खन्ना कन्या' पर ही रहती। जब भी वकिंग स्ट्रिप राउंड पर दो बार उसका सामना कन्या

से होता तो, जाने क्यों उसकी निगाह कन्या पर नहीं टिक पाती। वह शेरु की मुद्रा समझने में लगी रहती। कन्या के ऊपर दृष्टिपात करने का उसका साहस ही नहीं हो पता। पर इसके पहले कि वह डिजेक्टेड फील करे, उसके दिमाग में एक नया आइडिया कौंधा।

उसने मन में तर्क किया कि खूंखार ही सही, आखिर शेरु कुत्ता होते हुए भी तो उसकी तरह एक 'नर' ही है। उसके भी दिल होगा, उसे भी एक दिलरुबा की आवश्यकता होगी। यह सोच कर उसने अपनी इस परिकल्पना पर काम करना प्रारम्भ किया–

उसने सबसे पहले मोहल्ले की एक सड़क छाप युवा कुतिया को शेरु के लिए चुना। बड़े जतन से उसे नहला धुला कर, पालतू बना कर उसका नाम जूही रखा। फिर जूही के गले में एक सुंदर पट्टा, चमकती हुई चेन डाल कर वाकिंग पर जाना शुरू किया।

शेरु पहले तो जुही को देख कर गुर्राया। नायक ने सोचा अब शेरु जूही पर झपटने वाला है, पर जूही ने शेरु को देख कर कुछ ऐसी अदा से पूंछ हिलायी कि शेरु की गुर्राहट गायब हो गई, उसके हावभाव में उत्सुकता आ गई। वह हल्की सी सीत्कार के साथ जूही के पास आया। जूही ने उसे अपना पूरा मुआयना करने दिया। इसके पहले कि कुछ बेतकल्लुफ़ी हो पाती शेरु अपनी मालकिन कि आवाज़ पर जूही को छोड़ कर आगे बढ़ गया। नायक के साँस में साँस आई। उसने देखा कि जूही भी कुछ एबनार्मल हो गई... शेरु की पर्सनैलिटी ही इतनी दबंग थी।

अगले राउंड में जब एक बार फिर शेरु और जूही का सामना हुआ तो शेरु गुर्राया नहीं, केवल गौर से जूही को देखता हुआ निकल गया। नायक ने सोचा की शेरु ने जूही की उपस्थिति को स्वाभाविक रूप से स्वीकार कर लिया। लगभग एक महीना केवल नज़रों में ही गुज़र गया। शेरु या उसकी मालकिन ने इन दोनों के प्रति कोई इन्टरेस्ट नहीं शो किया। नायक एक बार फिर से हताश होने वाला था कि जूही में कुछ शारीरिक परिवर्तन होना शुरू होने लगे। शेरु जूही की ओर आकर्षित होता दिखा। एक रोज़ तो वह मालकिन को छोड़ कर जूही से हॅलो करने भी रुका मगर शीघ्र ही दौड़ कर मालकिन के साथ हो लिया।

बीतते समय के साथ भले या बुरे परिवर्तन आने लगते हैं। हमारे नायक को तो मात्र भले ही परिवर्तन दिख रहे थे।

1–लगातार दो महीने की वाक से नायक के चेहरे पर चमक आ

गई थी। अब कन्या कई बार उसकी तरफ दृष्टि प्रक्षेपण भी करती।

2–शेरु का जूही में बढ़ता इण्ट्रेस्ट।

नायक को अपना प्रयोग सफल होता दिखने लगा।

और फिर एक दिन शेरु जूही के पास ही रुका रहा, मालकिन की आवाज़ भी अनसुनी कर गया। कन्या उसे बुलाने के लिए वापस लौटी। चूँकि अब कन्या भी युवा हो चुकी थी, उसे शेरु के व्यवहार में परिवर्तन का कारण समझ में आ गया। उसने गौर से नायक की ओर देखा। नायक तो कन्या की तरफ ही देख रहा था। कन्या को नायक का पूरा प्लान समझ में आ गया था। कन्या ने नायक की ओर शृंगारिक उत्कोच भरी दृष्टि डाल कर धीरे से बोली, ''यू डर्टी माइंड'' और फिर जागिंग को उद्यत हुई।

नायक ने हिम्मत कर भर्रायी आवाज़ में कहा, ''हम अपना टाइम क्यों वेस्ट करें! क्यों न हम अपनी वाक जारी रखे'' यह कहकर वह श्वान युगल की ओर देख कर हल्के से मुस्कराया।

कन्या ने 'हाँ' या 'न' कुछ नहीं कहा बस मुस्करा कर अपनी जागिंग पर चल दी। नायक भी साथ चल पड़ा। उसने देखा कि जूही और शेरु भी उनके पीछे जाग करते हुए आ रहे थे।

शरीर की रासायनिक क्रिया दोनों जगह अपना–अपना कार्य कर रही थी और धीरे–धीरे वह दिन भी आ गया कि वे लोग पार्क में एकांत ढूँढ़ने लगे...

काफी दिनों तक साँझ के झुरमुट में, पार्क के कुंजन में दोनों सृजन कला का रिहर्सल करते रहे। पर खन्ना पुत्री इधर नायक को आगे बढ़ने ही नहीं दे रही थी। वहीं श्वान (कुतिया) नायिका भी नखरे कर रही थी, ऐन मौके पर, ''भौं'' करके फुदक कर शेरु से दूर चली जाती और थोड़ी देर बाद फिर से अठखेलियाँ करने लगती।

बहुत रूठा–रूठी मान–मनव्वल के बाद नमित नयन नायिका ने अपने दिल का राज़ ज़ाहिर किया, कि कुंजो की ओट में यह सब द्वापर युग में संभव होगा, (तब पापुलेशन भी इतनी नहीं थी)। इक्कीसवीं सदी में कम से कम उसके साथ तो यहाँ संभव नहीं है। इसके लिए ही तो मानव ने घर बनाया है।

नायक ने मुँह फुला कर कहा, ''मेरे एक कमरे के घर में एक

चारपाई पर दो लोग सोते हैं। मेरा घर कभी खाली ही नहीं रहता। इधर दस-पंद्रह साल तक तो मैं अपना घर बनवा भी नहीं सकता। होटल जाना खर्चीला होने के अलावा निरापद भी नहीं है। क्या तुम चाहती हो कि तुम पारो की तरह किसी बूढ़े से ब्याह दी जाओ और मैं देवदास की तरह दारू से चौपट होकर तुम्हारे बूढ़े शौहर की हवेली के सामने जान दूँ?'' ...नायक ने 'एमोशनल-बम' छोड़ा।

नायिका कमसिन थी, भोली थी, विरह से तड़प उठी। वह रुँधे गले से घिघियाते हुए बोली ऐसा मत कहो। मेरा घर तो लगभग खाली ही रहता है। तुम मेरे घर ही क्यों नहीं आ जाते।

खन्ना साहब के घर...! सोच कर ही नायक को झुरझुरी आ गई, पूरा शरीर सर्द हो गया। इश्क़ की ढकती हुई भट्ठी पर जैसे पानी पड़ गया। लिपटी हुई नायिका ने उसके शरीर के तापमान में अचानक गिरावट को पूरी तौर पर महसूस किया। उसने मन में सोचा यदि यह आशिक छूटा तो मेरे पापा का रुआबदार मूँछों वाला चेहरा और शेरु के डर से कोई दूसरा आशिक नहीं मिलेगा। तो क्या, उसे इस आधुनिक युग में भी विवाह तक अतृप्त ही रहना पड़ेगा?

अपनी अतृप्ति के भय के आगे नायिका को नायक का 'जीवन-मोह' तुच्छ जान पड़ा।

वह प्रियतम को cuddle (लिपटाते हुए) करते हुए बोली, ''ऐसा करो तुम दोपहर बारह बजे के बाद मेरे घर आ जाओ। माली का परिवार भी अपने क्वार्टर में चला जाता है और शेरु भी बंधा रहता है।'' नायिका ने अपनी बात को सिद्ध करते हुए आइडिया दिया। ''पापा शाम के बाद रात में ही घर में मात्र सोने को आते हैं। सुबह भी नौ बजे के बाद वह आफिस में ही रहते हैं। लंच करने भी नहीं आते।

पापा बाहर, शेरु घर के आँगन में 'चोक-चेन' से बंधा माली घर के पिछवाड़े अपने क्वार्टर में अपनी नव-वधू के साथ!

यह प्रपोज़ल नायक को निरापद लगा। उसके बदन में एक बार फिर से गर्मी आने लगी।

इसके पहले की गर्मी उबाल-बिन्दु तक पहुंचे नायिका छिटक कर अलग हो गई ''नहीं अभी नहीं, परसों सुबह साढ़े दस बजे मेरे पापा की इम्पार्टेण्ट मीटिंग है। वह बिज़ी रहेंगे। तुम ठीक पौने ग्यारह बजे सुबह मेरे

घर पर पहुँच जाना। गेट खुला मिलेगा। कहकर नायिका ने एक 'फ्लाइंग-किस' उछाला और 'चल शेरु' कह कर शेरु के साथ जाग करती हुई यह गई-वह गई।

अपने-अपने प्रेम करने वालों के व्यवहार के इस सडेन 'रस-परिवर्तन' से नायक और उसकी कुतिया दोनों हतप्रभ हो गये।

नायक नया खिलाड़ी था। उसे समझ में नहीं आया की खन्ना साहब के यहाँ वह किस एक्सट्रा तैयारी के साथ जाये। नायिका ने पूछने का समय ही नहीं दिया। बहुत दिमाग लगाने पर नायक को समझ में आया की खन्ना साहब या शेरु के अप्रत्याशित आगमन पर भाग के ही बचा जा सकता है, अतः वह स्पोर्ट्स शू में नायिका के यहाँ नियत समय पर पहुँच गया।

अनहोनी की आशंका और कुछ प्राप्त करने के आशातिरेक से बढ़ती हुई हृदय गति को सामान्य करते हुए उसने नायिका के आवास के गेट पर हाथ रखा। गेट खुला था। नायक दबे पाँव अंदर दाखिल हुआ ही था कि शेरु की भयानक भूँक से वह गिरते-गिरते बचा। उसकी पहली प्रतिक्रिया पलायन की हुई मगर ध्यान आते ही कि शेरु बंधा है वह आगे बढ़ा। काल बेल पर हाथ रखा ही था की वह फिर चौंक पड़ा- दरवाजा अपने आप खुल गया।

नायिका ने उसे बड़े आवेश में अंदर खींच लिया और लिपटे हुए बोली, ''घर में चुपके से दाखिल होने के लिए काल बेल नहीं बजाई जाती बुद्धू।''

इसके बाद सृजन क्रिया वास्तविक शूट में आगे बढ़ी ही थी कि नायिका ने रोका, ''तुम्हारी तैयारी कहाँ है? कुछ प्रोटेक्शन तो लेना ही होगा।''

नायक को तैयारी का मतलब समझ में आया वह द्रुति गति से तैयारी लेने मार्केट भागा।

हुआ यूं कि खन्ना साहब की उस रोज़ मीटिंग तो थी पर कोई बिजनेस मीटिंग नहीं थी। उनके एक क्लाइंट की पत्नी बहुत दिनों से खन्ना साहब के इर्द-गिर्द टहल रही थी। खन्ना साहब का उसूल था कि कंट्रैक्ट साइन होने के पहले वह क्लाइंट से मात्र बिजनेस सम्बंध ही रखते थे। पारिवारिक संबंध कंटरैक्ट साइन होने के बाद ही बनाते थे। सो, आज

उनका पारिवारिक संबंध बनाने की मीटिंग थी। नियति देखिये बाप और बेटी दोनों ने ही सृजन की शूटिंग के लिए एक ही दिन और एक ही समय निश्चित किया। दोनों के कार्य में किसी बाधा का प्रश्न ही नहीं था। पर नियति की चाल हमेशा सीधी नहीं होती। खन्ना साहब की काल बेल पर क्लाइंट-पत्नी ने ही दरवाजा खोला, और फुसफुसा कर बताया की उसका पति आज बीमारी की वजह से घर पर ही रुक गया है। यह किस्सा फिर कभी। कहकर उसने दरवाजा बंद कर लिया। खन्ना साहब जेब में हाथ डाले, अपने को कंट्रोल करते वापस लौट पड़े।

लौटते समय खन्ना साहब की हालत डिस्कवरी चैनल पर दिखाये उस सिंह की भांति हो रही थी जिसके हाथ से अभी-अभी शिकार छूट गया हो। वह गुस्से में लगभग हाँफ रहे थे। वह आफिस जाने के लिए चल पड़े। कार में बैठते ही उन्हें जेब में पड़े रिवाल्वर की याद आई जिसे वह ऐसे खतरनाक अभियानों में किसी आकस्मिक खतरे से बचने के लिए साथ रखते थे... 'रकीब' कभी-कभी हिंसक भी हो उठते हैं। रिवाल्वर लाइसेन्सी था। खन्ना साहब शूटिंग क्लब के निशानेबाजी के चैम्पियन थे।

उन्होंने रिवाल्वर घर पर रखकर आफिस जाने की सोची और कार घर की ओर मोड़ दी।

घर पहुँचने पर खन्ना साहब को अपने गेट के सामने सड़क के उस पार एक बाइक खड़ी दिखी। खन्ना साहब की अतींद्रिय को कुछ 'अन-यूजुवल' होने का आभास हुआ। सो खन्ना साहब ने कार गेट पर ही रोक कर तेज़ कदमों से गेट के अंदर दाखिल हुए। खन्ना साहब सन्न ...गेट खुला था, माली या शेरु का कहीं कोई अता-पता नहीं था। एकाएक उन्हें एक युवक उनसे कुछ कदम पर पोर्टिको की ओर जाते हुए दिखा। खन्ना साहब ने दौड़ कर उस लड़के को पकड़ा। लड़के के हाथ में निरोध का पैकेट दिखा। लड़के के असमय गृह-प्रवेश का आशय समझ में आते ही खन्ना साहब के हाथ की पकड़ और मजबूत हो गई। उनके अभिजात्य दिमाग ने सोचा इतना सस्ता कंडोम लेकर आने वाला कोई निम्न श्रेणी का ही हो सकता है। तभी उनके मन में विचार आया- यह लड़का हो न हो माली की युवा पत्नी का आशिक है।

उन्होंने गुस्से से पुकारा ''माली।''

उसी समय मालिक की खुशबू पाकर शेरु ज़ोर से भौंका। विदेशी

नस्ल के शेरु की भयानक आवाज़ में खन्ना साहब की आवाज़ दब गई। शेरु की आवाज़ का माली पर असर हुआ कि वह किसी आगंतुक का आगमन समझकर बाहर निकला, वहीं मिलनातुर नायिका ने शेरु की आवाज़ का मतलब निकाला की नायक तैयारी लेकर पधार चुका है।

खन्ना साहब ने घुसपैठिए का हाथ पकड़े-पकड़े काल-बेल बजाना चाहा कि दरवाजा स्वत: खुल गया। सामने उनकी कन्या खड़ी थी।

खन्ना साहब और नायक का दृश्य-फ्रेम फ्रीज़ कर गया। कन्या मात्र उतने ही वस्त्रों में खड़ी थी जैसे चित्रों में नल द्वारा दमयंती की आधी साड़ी चुरा कर भागने के बाद दमयंती अपने को छुपाती दिखाई जाती है। एक झीना सा दुपट्टा बाएँ कंधे से होता हुआ सीने से नीचे उतर कमर के सामने लटक रहा था।

खन्ना साहब की आँखों में खून उतर आया, दिमाग का फ्यूज उड़ गया। उनकी बाएँ हाथ की नायक की कलाई पर पकड़ और मजबूत हो गई। दाहिना हाथ जेब में गया। स्लो-मोशन में रिवाल्वर वाला हाथ घूमा और नाल कन्या के सीने तक पहुंचा...

कन्या पिता को देख जड़वत हो गई, हवा से उसका कंधे का वस्त्र ढुलका जिसे वह संभालने को नीचे झुकी। तभी खन्ना साहब की उंगली से ट्रिगर दबा, धाँय की आवाज़ हुई, गोली झुकी हुई कन्या के 'ब्रह्म-रंध्र' को भेदती हुई गले से होकर दिल में अटक गई। खून की बूंदे ठीक से बाहर निकल भी नहीं पाईं थी कि खन्ना साहब का हाथ फिर स्लो-मोशन में बाईं ओर साठ डिग्री के वृत्त में घूमा और दूसरी गोली नायक की भौहों के मध्य प्रवेश कर दूसरी ओर से निकल गई। नायक के मस्तिष्क के टुकड़े रक्त की फ़ौहार के साथ आते हुए माली के ऊपर गिरे और बरामदे की छत को रंगीन कर गए। खन्ना साहब ने घूम कर बेटी को देखा। उसका मृत शरीर भूमि पर गिर चुका था। खन्ना साहब को अपने कृत्य का एहसास हुआ। दो मर्डर! ज़िंदगी का एकलौता सहारा स्वयं की पुत्री उन्हीं के ही हाथों मारी जा चुकी थी। आगे की छीछालेदर और बदनामी की आशंका ने उन्हे एक बार फिर विवेकहीन बना दिया। उन्होंने अपनी कनपटी पर रिवाल्वर रख कर ट्रिगर दबाई तभी माली जो कि अब लपक कर उनके पास तक पहुँच चुका था, ने रिवाल्वर वाले हाथ को ऊपर धकेला। एक बार फिर धाँय की अवाज हुई मगर इस बार गोली ऊपर छत से छटक कर खिड़की के दरवाज़े पर जा लगी। खन्ना साहब मानसिक

और आत्मिक-ग्लानि के सदमे से बेहोश हो गये। मालिन ने पुत्री के मृत शरीर को चादर से ढका और वहीं बैठ कर रोने लगी।

अगले दिन अलग-अलग मोहल्ले से दो जनाज़े निकले। एक जनाज़ा नायक का तथा दूसरा नायिका का। नायिका की शव-यात्रा में शहर का सारा अभिजात्य वर्ग था उनके आगे-आगे खन्ना साहब 'घट' लेकर चल रहे थे। वहीं नायक के जनाज़े में मुट्ठी बाहर रिश्तेदारों के अलावा टोले-मोहल्ले के दिलजले आशिकों की ही अधिकता थी। इन दिलजलों के दिल में नायक के लिए शहीदों सा सम्मान था। हालांकि, कुछ अतृप्त लोग नियति को कोस रहे थे कि जब इन दोनों को मरना ही था तो क्यों विधाता ने खन्ना साहब के आगमन को आधा घंटा टाल नहीं दिया। कम से कम बलिदान तो सार्थक हो जाता।

चाहे गरीब हो या अमीर अंतिम समय में दोनों के रास्ते एक हो जाते हैं। अभिजात्य वर्ग की नायिका और निम्न वर्ग के नायक की शव-यात्रा अलग-अलग रास्तों से होती हुई श्मशान घाट पर एक हो गयी।

लोगों ने देखा नायक की कुतिया, जो उसके इश्क में बड़ी सहायक रही, वह नायक के त्रिगुणात्मक शरीर की सुगंध के पीछे-पीछे आ रही थी। उसे क्या मालूम कि यह सुगंध भी हमेशा के लिए विलीन हो जायेगी। तभी खन्ना साहब का कुत्ता भी सूंघते-सूंघते वहाँ आ पहुंचा। वह भी अपनी मालकिन की खुशबू के साथ 'युधिष्ठिर के श्वान' की भांति नायिका के साथ आया था।

नायक की आत्मा ऊपर से देख रही थी। मरते समय नायक ने सोचा था कि एक साथ मरने के बाद शायद ऊपर हमलोग एक बार फिर मिलेंगे। मगर ऐसा कुछ नहीं हुआ।

कुछ देर बाद उसने देखा कि खन्ना साहब का कुत्ता उसकी कुतिया के साथ लगा था। उसे संतोष हुआ- चलो मैं न सही कोई तो आशिक़ी की अंतिम परिणति तक पहुँचा।

❐❐❐

हम सबके अंदर शैतान जिंदा है

लोक कथा है कि एक बड़े धार्मिक पादरी जंगल की पगडंडी से चले जा रहे थे। एकाएक उन्हें किसी के कराहने की आवाज़ सुनाई पड़ी। करुणामय पादरी करुणा कर के उस व्यक्ति के पास पहुंचे। पता चला कि वह शैतान था। खुदा के किसी बंदे या किसी फरिश्ते ने उसका यह हाल किया। घायल शैतान ने पादरी से सहायता की भीख माँगी।

पादरी ने सोचकर कहा, ''मैं तो खुदा का बंदा हूँ, जिसे शैतान को दूर भागने का कार्य दिया गया है। फिर मैं इस शैतान को क्यूँ बचाऊँ। शैतान अगर मर गया, तो पूरे संसार का भला ही होगा''

इस विचार के चलते, पादरी ने जीवन में पहली बार किसी लाचार और बेबस को मदद करने से मुंह मोड़ा। कुछ दूर चलने के बाद ही पादरी को याद आया की, यदि शैतान वाकई में मर गया तो मेरा तो धंधा ही चौपट हो जाएगा। उसे इबादत और जनसाधारण को शैतान से बचाने के उपाय बताने के अलावा आता ही क्या था। उसने महसूस किया कि यदि शैतान मर गया तो वह और उसकी तरह के हर धर्म के तमाम 'पाखंड-जीवी' भूखों मर जाएंगे। वह भूख की ज्वाला से परिचित था। एकदम से शैतान की मदद करने को लौट पड़ा।

परंतु यह क्या- जहां उसने घायल शैतान को छोड़ा था वहाँ कुछ भी नहीं था!

तभी उसे अपने सिर के ऊपर कोई काला साया दिखायी दिया, जो शीघ्र ही साकार हो उसके सामने आ खड़ा हुआ। ...यह क्या सामने स्वयं शैतान खड़ा मुस्करा रहा था एकदम स्वस्थ। उसमे घाव, पीड़ा अथवा निरीहता का लेशमात्र चिह्न नहीं था। पादरी को दुविधा में देख शैतान ने हँसते हुए कहा, ''पादरी, आश्चर्य मत करो। मैं अवश्य मर जाता यदि तुम मेरी सहायता कर देते। दुखियों पर दया करना और उनकी सहायता करना

ही तुम्हारा धर्म है। मगर तुम्हारे मन के शैतान ने तुम्हें मेरे ऊपर करुणा या दया करने से रोका और तुम मुझे मरने के लिए छोड़ गए। परंतु, जैसे ही तुम्हें याद आया कि मेरे न रहने पर तुम्हारी खुद की दुकान बंद हो जाएगी, तुम स्वार्थ और लालच के चलते मुझ पर अनुग्रह करने वापस लौट पड़े।''

''इस प्रकार एक बार फिर, तुम्हारा भगवान् शैतान से हार गया। मगर इस बार खुद अपने ही बंदे से हारा जिसे उसने समाज में अच्छाइयों का ठेकेदार बना रखा है'', शैतान ने कहा।

यह कहानी सुनने में अच्छी और मनोरंजक लगती है। परंतु यह कहानी इसके अलावा इस तथ्य की ओर भी इंगित करती है कि- द्रष्ट्य संसार त्रिगुणमयी है (अर्थात समस्त संसार सत्, रज और तम गुणों से मिलकर ही बने हैं)। यही कारण है कि संसार में कुछ भी और कोई भी ऐसा नहीं हो जो पूर्ण रूप से अच्छा हो अथवा मात्र केवल बुरा। सभी में अच्छाई के साथ कुछ बुराई अथवा बुराई के साथ कुछ न कुछ अच्छाई अवश्य होगी। यहाँ तक कि देखा गया है कि सूक्ष्म मात्र में विष भी कभी उपयोगी हो सकता है, वहीं अमृत का भी आधिक्य अथवा सर्वसुलभता हानिकारक हो सकती है।

यदि हम इसी तथ्य का वैज्ञानिक दृष्टि से अवलोकन करें तो ज्ञात होगा कि ब्रह्मांड सदैव संतुलन कि स्थिति में रहता है। प्रत्येक वस्तु का विपरीत अवश्य होता है, यथा- यदि प्रकाश है तो अंधकार भी है, सुख है तो दु:ख भी है, स्वास्थ्य है तो रोग भी है, आकर्षण है तो विकर्षण भी है, बल है तो प्रतिबल भी है। इसी प्रकार यदि ईश्वर है तो शैतान भी है।

ईश्वर यदि सर्व-व्याप्त है तो शैतान की व्याप्ति भी सर्वत्र है।

आजकल कि दुनिया में यदि किसी में 60 अच्छाइयाँ हैं और 40 बुराइयाँ तो वह औसत माना जाएगा। यदि भलाई और बुराई बराबर अनुपात में हैं तो वह वस्तु या व्यक्ति साधारण कहलाएगा। जैसे-जैसे अच्छाइयों का अनुपात बढ़ता जाएगा उसकी अच्छे, सज्जन और महात्मा या संत श्रेणी में गणना होगी।

अच्छाई और बुराई को नापने का कोई निश्चित मानक या मानदंड नहीं है। यह परखने वाले की मनोदशा और दृष्टिकोण पर भी निर्भर करता है और परखने वाले का स्वभाव, मनोभाव भी उसके द्वारा किए गये मूल्यांकन को प्रभावित करते हैं। इसमे व्यक्ति के प्रति स्नेह, श्रद्धा, भक्ति जैसे सकारात्मक और स्वार्थ, प्रतिस्पर्धा की भावना के अलावा नापसंदगी, ईर्ष्या, द्वेष, आदि नकारात्मक भावनाएं व्यक्ति के मूल्यांकन को प्रभावित करेंगी।

यही कारण है कि एक व्यक्ति किसी व्यक्ति विशेष के लिए भला तो दूसरे के लिए बुरा भी हो सकता है। यहाँ तक कि महात्मा गांधी जैसे संत और राम और कृष्ण देवत्व प्राप्त पुरुषों की भी आलोचना समय-समय पर सुनाई पड़ती है।

❐❐❐

मिस यूथ - 2012

दो साल के लगातार प्रयासों के बाद डॉ. विकास को कोर्ट से सफलता मिली। इन दो सालों में डॉक्टर की प्रैक्टिस पर भी असर पड़ा था। मगर पैसा ही सब कुछ नहीं होता। हाँ, यह ग्लानि मन में अवश्य थी कि जितने मरीज उनसे लाभान्वित हो सकते थे उतना इन दो सालों में वह नहीं कर पाये। फिर भी डॉ. विकास आज अपनी उपलब्धि से संतुष्ट थे।

वह पूर्ण संतोष के साथ अदालत से निकले ही थे कि एक बाउंसर टाइप के आदमी ने उनका रास्ता रोक कर कहा, ''सर, ...फिल्म डाइरेक्टर आपसे बात करना चाहते हैं, उधर अपनी कार में बैठे हैं। यदि कष्ट न हो तो दो मिनट चलकर मिल लें।''

बात बहुत साधारण सी थी; मगर बाउंसर द्वारा जिस टोन में कही गई थी उससे परिलक्षित होता था कि डॉक्टर साहब इतने बड़े फिल्म निर्देशक से मिलकर कृतार्थ हो जायेंगे। यह बात डॉक्टर को अखरी। उन्होंने रुखाई से कहा, ''जो मुझसे मिलना चाहता है उसे मेरी गाड़ी तक आना होगा''। पार्किंग में खड़ी अपनी गाड़ी की ओर इशारा करते हुए कहा, ''मेरी गाड़ी वहाँ है। मैं दस मिनट तक वहाँ इंतज़ार करूंगा।''

बाउंसर के हाव-भाव से लगा कि उसे इस प्रकार मना किया जाना बिल्कुल नहीं भाया। वह शारीरिक रूप से डॉक्टर साहब को बाध्य भी कर सकता था, मगर अदालत में बखेड़ा करना ठीक नहीं था। इसलिए वह चुपचाप अपने मालिक के पास लौट गया।

डॉक्टर साहब ने कार में बैठकर अपनी घड़ी देखी। वह जानते थे फिल्म डाइरेक्टर मगरूर होते हैं। वह उनसे मिलने कतई नहीं आएगा, बल्कि उसे अपने पास आने को मजबूर करने के हथकंडे अपनाएगा। फिर भी जब समय दिया है, तो इंतज़ार तो करना ही पड़ेगा।

अभी सात मिनट ही बीते होंगे कि एक आदमी ने बड़ी नम्रता के साथ उनकी गाड़ी का दरवाजा खोलकर बैठने की अनुमति मांगी। डॉक्टर साहब तो प्रतीक्षा कर ही रहे थे। उस व्यक्ति ने गाड़ी में बैठते ही पहले

डॉक्टर साहब से क्षमा याचना की बोला, ''माफ कीजिएगा डॉक्टर साहब, हम लोग भीड़ से बहुत डरते हैं। इसीलिए मैंने आपको अपने पास बुलाया था। मगर लगता है कि कचहरी में आने वाले ज्यादातर लोग फ़िल्मकारों को नहीं पहचानते।''

डॉक्टर साहब ने कहा, ''सचमुच मेरा ध्यान इस तथ्य पर नहीं गया। शायद कोर्ट कचहरी के लफड़े में थोड़ी बहुत व्यावहारिकता भी कम हो गई''। फिर बोले, ''कहिए मैं किस लायक हूँ। मरीज तो आप कहीं से भी नहीं लगते'', विकास ने हल्के से मुस्कराते हुए कहा।

''मैं इस केस की पृष्ठभूमि पर आप पर एक बायोपिक (जीवन पर आधारित फिल्म) बनाना चाहता हूँ।''

''बायोपिक! मेरे ऊपर बायोपिक?''

''जी हाँ, डॉक्टर साहब। आपने जिस विषय पर यह केस लड़ा वह, अनोखा है। अभी तक इस पर कोई फिल्म नहीं बनी है। इस थीम को मुझसे पहले कोई न हड़प ले इसलिए मैंने आपको कोर्ट में ही कष्ट दिया।''

डॉक्टर कुछ सोचने के बाद बोले, ''मुझे क्या करना होगा?''

''कुछ नहीं। आपको केवल अपने और इस केस से संबन्धित बातें मेरे स्टोरी राइटर (कथाकार) को बतानी होगी।''

''क्या वह मेरी पत्नी का भी इंटरव्यू करेगा?'' डॉ. विकास ने पूछा।

निदेशक ने हामी में सिर हिलाया।

डॉक्टर खिन्न मुद्रा में बोले, ''नहीं, यह मैं परमिट नहीं कर सकता। वैसे ही मेरी पत्नी इस पब्लिसिटी से काफी असहज है। इससे अधिक तनाव मैं उसे नहीं देना चाहता।'' फिर एकाएक बोले, ''मेरी डायरी लिखने की आदत है। मैं वह डायरी आपको दे सकता हूँ; यदि उससे आपका काम चल सके।''

''यह तो मैं डायरी देखने के बाद ही बता सकता हूँ ... फिर भी मेरे साथ डील पक्की करने के लिए यह एडवांस तो रख ही लें'' डाइरेक्टर ने कहा तथा उसके इशारे पर बाउंसर ने एक छोटा सा ब्रीफ़केस कार के अंदर बढ़ा दिया।

डाइरेक्टर ने अपने आफिस में आकर अपने कथाकार को डॉक्टर की डायरी देते हुए कहा, ''यह डॉक्टर विकास की डायरी है। देखो,

इससे हमारा कुछ काम निकल सकता है। यदि हाँ, तो फर्स्ट पर्सन में लिखी डायरी को थर्ड पर्सन के नैरेटिव में करके मुझे दिखाओ। परन्तु सबसे पहले इस डायरी की फोटोकापी करके इसे अपनी आने वाली फिल्म की कहानी का रजिस्ट्रेशन प्राप्त कर लो; जिससे कोई दूसरा इस विषय पर अपनी फिल्म न बना सके।''

''डायरी, हूँह'' मन ही मन स्टोरी राइटर ने कहकर अनमने भाव से डायरी लेकर अपने चैंबर में आ गया। बहुत ही विरक्त भाव से वह डायरी के पन्ने पलटने लगा। एकाएक उसने देखा कि यह थीम अभी तक की सबसे अलग थीम है। जैसे-जैसे वह पन्ने पलटता उसकी उत्सुकता बढ़ती गई। एक बार पूरा पढ़ लेने के बाद वह थोड़ी देर तक आँखें बंद कर कुछ विचार करता रहा। कुछ निश्चय करके उसने एक बार फिर ध्यान से पूरी डायरी पढ़ी। सेकेंड रीडिंग के बाद वह लैपटाप खोल कर डायरी में लिखे कथानक को 'थर्ड पर्सन' में परिवर्तित करना प्रारम्भ कर दिया। चार दिन के अंदर ही डायरी कहानी के रूप में डायरेक्टर की मेज़ पर थी। डाइरेक्टर ने कहानी की पाण्डुलिपि उठाकर देखा। कथाकार ने उस पर अपनी छोटी सी समीक्षा लिखी थी-

''यह विलक्षण कथा-वस्तु है। वास्तविकता का उद्घाटन 'शॉकिंग' है।''

कथाकार की समीक्षा पढ़कर कर डाइरेक्टर ने मुस्कराते हुए सोचा- जिसने इस केस को फालो नहीं किया उसे यह सब्जेक्ट 'शाकिंग' ही लगेगा।

डॉक्टर विकास कि डायरी पर फिल्म का निर्माण प्रारम्भ हो गया।

विज्ञापन उत्सुकता बढ़ाने वाले थे। काफी पब्लिसिटी के बाद फिल्म रिलीज़ हुई-

दिनांक 31 दिसंबर 2012 आज डॉक्टर विकास जो शहर के जाने-माने उठते हुए सर्जन हैं का मूड ठीक नहीं था। उनका एक बहुत गंभीर मरीज लाख प्रयासों के बाद बच नहीं सका। डॉक्टर अपनी बदनामी के डर से परेशान नहीं थे। उनकी ख्याति उन्हें इन सब बातों के ऊपर उठा चुकी थी। तो फिर डॉ. विकास का मूड क्यों खराब हुआ?

डॉक्टर विकास को आज पहली बार मेडिकल साइंस और चिकित्सकों की संकुचित सीमाओं का भान हुआ। चिकित्सा विज्ञान इतनी उन्नति कर लेने के बाद भी आज नियति के सम्मुख कितना लाचार है। अच्छा से

अच्छा इलाज मिलने के बाद भी कुछ मरीज नहीं बच पाते, वहीं पर कभी-कभी बहुत संगीन मरीज चमत्कारिक रूप से चंगे हो जाते हैं। यही कारण है कि चिकित्सक अंतिम समय तक मरीज के जीवन को बचाने का प्रयास करता रहता है। मगर कभी-कभी वह भी हताश हो जाता है। आखिरकार, डॉक्टर भी तो हाड़-मांस का ही बना है, उसमें भी भावनाएं होती हैं। ऐसी ही निराशा से आज डॉक्टर विकास दु:खी थे। किसी काम में मन नहीं लग रहा था। वह चुपचाप अपने फ्लैट में औंधे मुँह पड़े थे।

हताशा और निराशा हमारे मन और शरीर के लिए हानिकारक होती है। संभवत: इसीलिए जब हताशा और निराशा का अतिरेक हो जाता है, तो प्रकृति मस्तिष्क सुन्न कर देती है। चेतन मस्तिष्क के 'स्लीपिंग-मोड' (शून्य-स्थिति) में चले जाने से नकारात्मक विचार भी शून्य हो जाते हैं। मन, मस्तिष्क और काया का उत्पीड़न भी कम हो जाता है।

डॉक्टर विकास भी ऐसे ही शून्य मानसिक स्थिति में थे। एकाएक काल बेल बजने लगी। काफी देर तक घंटी अनसुना करने के बाद भी जब घंटी शांत नहीं हुई तब उन्होंने लाचारी में उठकर दरवाजा खोला। सामने उनका मित्र सहकर्मी जो उनसे काफी सीनियर था, खड़ा था। यदि वह मित्र उनका सीनियर न होता तो शायद वह दरवाजा फिर से बंद कर देते, पर सीनियर का चिकित्सा जगत में बहुत सम्मान है। बुझे मन से विकास ने उनका स्वागत किया।

सीनियर मित्र बोले, ''डॉक्टर विकास, मैं जानता हूँ कि तुमने उस मरीज को बचाने के लिए जी तोड़ मेहनत की है। तुम उसे बचा नहीं सके। इसमें तुम्हारा कोई दोष नहीं है। शायद उस मरीज का अब समय आ चुका था, या कह लो ईश्वर की यही इच्छा थी; ईश्वर के ऊपर तो कोई है नहीं।''

फिर कुछ रुककर बोले, ''भगवान् ने तुम्हें बहुत सफलता दी है, यह तुम्हारे कैरियर की पहली असफलता है। इसीलिए तुम व्याकुल हो। जीवन और मृत्यु को इतनी निकटता से शायद डॉक्टर ही देखता है। अरे, राजा परीक्षित को आसन्न मृत्यु से तो कोई बचा नहीं सका।'' सीनियर के आने से और उन्हें समझाने पर विकास का मन कुछ हल्का हुआ। विकास ने उठकर उसे काफी पिलाई। फिर सीनियर के कहने पर ही वह कपड़े चेंज करके शहर में चल रहे यूथ फ़ेस्टिवल में आयोजित 'मिस यूथ-2012' प्रतियोगिता देखने निकल पड़े।

सौन्दर्य प्रतियोगिता में काफी भीड़ थी। लोग महंगा टिकट लेकर सुंदरियों को देखने आए थे। मंच के सामने की सीटों का टिकट हजारों में बिका था। आयोजकों ने दोनों डॉक्टरों को सबसे आगे की सीट पर बैठाया। शहर के नामी डॉक्टर जो ठहरे।

शो प्रारम्भ हुआ। तमाम बालाएँ विभिन्न वेशभूषाओं और आकर्षक मुद्रा में मंच पर आतीं, मुस्कान बिखेरतीं और एक विशेष अदा से शरीर को झटका देकर मुड़कर वापस बलखाती चली जातीं। विकास सीनियर के कहने पर चला तो आया था, मगर इस सुंदरी दर्शन में उसका मन नहीं लग रहा था; वहीं उसका सीनियर बड़ी तन्मयता से सुंदरियों को निहार रहा था। विकास सीनियर से क्षमा-याचना करके वहाँ से उठना ही चाहता था की मंच पर एक काले लिबास में लिपटी एक बाला प्रकट हुई। विकास को लगा जैसे उसका दिल एक क्षण के लिए रुक गया, फिर तेजी से धड़कने लगा। वह अपनी सीट पर स्तब्ध बैठा रह गया।

प्रतियोगिता के पहले चक्र में काफी सुंदरियाँ प्रतियोगिता से बाहर हो गईं, परंतु वह काले लिबास वाली सुंदरी जिसका नाम उद्घोषक ने मंगला बताया, अंतिम दस के चक्र तक पहुँच गई। अब अंतिम चयन की बारी थी। सभी दर्शक अपनी-अपनी पसंद की सुंदरियों के नाम लेकर चीख रहे थे। अगली पंक्ति में चीखने वालों की संख्या काफी कम थी, फिर भी कुछ लोग अपनी मनपसंद सुंदरी का नाम लेकर उत्साहित हो रहे थे। उनमें डॉक्टर विकास भी थे।

तभी 'मिस यूथ 2012' का नाम पुकारा गया- 'मंगला'

विकास अपनी सीट से खड़ा होकर नाचने लगा, परंतु सीनियर ने जब आश्चर्य से विकास की ओर देखा तो विकास की नज़र उन पर पड़ी यह देख विकास चुपचाप सीट पर बैठ गया।

मंगला को 'मिस यूथ' का ताज पहनाया जा चुका था। वह अपनी रनर-अप्स (द्वितीय और तृतीय स्थान वाली सुंदरियाँ) के साथ दर्शकों का हाथ हिलाकर अभिवादन कर रही थी। मंच पर काफी रोशनी थी वह दर्शकों को भली-भांति देख नहीं पा रही थी। फिर भी उसे लग रहा था की दो आँखें उसे विशेष रूप से लगातार देखे जा रही थीं। वह आँखें डॉ. विकास की थीं।

प्रतियोगिता जीतने के उपलक्ष्य में मंगला को नगद राशि तो मिली ही, साथ में कई कंपनियों में विज्ञापन हेतु माडलिंग करने का प्रस्ताव भी

मिला। मंगला को अब धन-ऐश्वर्य की कमी नहीं रहेगी। उसके प्रशंसकों और चाहने वालों की संख्या में अभूतपूर्व वृद्धि होने वाली है।

विज्ञापन की शूटिंग करने के बाद मंगला को एक कार्ड मिला- 'सर्जन विकास'!

कार्ड के पीछे लिखे मैटर में विकास ने मंगला से मिलने का प्रस्ताव किया था। मंगला ने उत्तर में कहलाया कि वह किसी भी अपरिचित से नहीं मिलती।

कुछ दिन बाद शूटिंग के बाद जब मंगला अपने ग्रीन-रूम में पहुँची तो देखा कि वहाँ कोई बैठा है। मंगला ग्रीन-रूम के दरवाजे पर ही रुक कर स्टूडियो मैनेजर से बोली, ''यह व्यक्ति मेरे रूम में क्या कर रहा है?'' मंगला के स्वर में रोष था।

मैनेजर बोला, ''मैडम, कंपनी मालिक ने चाहा है कि आप इनसे पाँच मिनट मिल अवश्य लें।''

वार्तालाप सुनकर उस व्यक्ति ने घूमकर मंगला की ओर देखा। मंगला उन आँखों को देखकर उन्हें पहचान गई। यह वही आँखें थीं जिसे उसने प्रतियोगिता के दौरान महसूस किया था।

अपने रूम में अपरिचित व्यक्ति को देख मंगला ने निश्चय कर रखा था कि वह उस व्यक्ति से कतई बात नहीं करेगी। परंतु मंच पर उसको उद्वेलित निगाहों को देखकर मंगला उसे चाहते हुए भी मना नहीं कर सकी। प्रतियोगिता के दिन से ही डॉ. विकास के लिए मंगला ही सब कुछ हो गई थी, वहीं मंगला भी उन निगाहों के सम्मुख विवश थी। यह केमिकल रिएक्शन (रासायनिक प्रक्रिया) दो अजनबी लोगों के बीच पहली दृष्टि में एकाएक आकर्षण उत्पन्न होना बहुत दुर्लभ है। परंतु जब होता है तो फिर वह दोनों एक दूसरे के बिना रह नहीं सकते। ऐसा ही प्रथम-दृष्ट्या प्रेम विकास और मंगला के बीच हो चुका था। अपने व्यावसायिक दायित्यों से बचे समय में दोनों एक साथ ही रहने का प्रयास करते थे। वह आपस में इतने लीन थे कि बाकी सब उनके लिए गौण हो गया था। मंगला तो प्रारम्भ से ही रिज़र्व थी परंतु डॉक्टर विकास अपनी महिला सहकर्मियों में बहुत पापुलर थे। उनका बदला हुआ व्यवहार उन मित्रों को खलने लगा था।

एक दिन उनकी एक सहकर्मी ने रास्ते में उन्हें रोककर पूछा, ''क्या

बात है विकास आजकल उस ब्यूटी-क्वीन के साथ बहुत देखे जा रहे हो। क्या यही वजह है कि किसी और को लिफ्ट नहीं दे रहे हो?''

विकास ने शालीनता से उसका हाथ अपनी कमर से हटाते हुए कहा, ''यस, आई एम इन लव विद हर (हाँ, मुझे उससे प्रेम हो गया है)।''

विकास को इतनी नजदीकी और प्रेम के बावजूद लगता था कि मंगला अपने दिल के किसी कोने में कहीं कुछ छिपा रही है। वह पूरे तौर से उसके साथ सामान्य नहीं हो पाती है।

और फिर... वह दिन भी आ गया जब पुरुष नारी के सामने घुटने टेककर उसका हाथ मांगता है।

विकास को पूर्ण विश्वास था कि मंगला इस प्रस्ताव से प्रसन्न होगी और तत्काल ही 'हाँ' कह देगी... पर यह क्या?

मंगला मुंह फेरकर खड़ी हो गई। लगा जैसे आँसू छिपाना चाहती है।

विकास सन्न रह गया। उसने बलात मंगला को अपनी ओर मोड़ कर पूछा, ''क्या बात है मंगला? क्या तुम मुझे प्यार नहीं करतीं?

मंगला जो अभी तक अपने आँसुओं को रोकने का प्रयास कर रही थी एकाएक विकास के सीने से लगकर फूट-फूट कर रो पड़ी।

विकास थोड़ी देर तक मंगला को वैसे ही चिपटाए खड़ा रहा। आँसुओं का उद्वेग कम होने के बाद उसने मंगला से पूछा, ''क्या मैंने कुछ गलत कर दिया?''

मंगला के आँसू रुक गए थे। उसने पथराई आँखों से विकास को देखते हुए कहा, ''नहीं, विकास तुम नहीं, गलत तो अब तक मैं तुम्हारे साथ कर रही थी। मुझे तुम्हें पहले ही बता देना चाहिए था; आई नाट मेड फॉर मैरिज। आई एम नाट परफेक्ट वूमन फार यू (ईश्वर ने मुझे वैवाहिक जीवन के लिए नहीं बनाया। मैं तुम्हारे लिए एकदम सही नारी नहीं हूँ)।''

''नो बडी इज परफेक्ट। आई डू नाट सीक परफेक्शन, आई नीड यू ओनली, मंगला (कोई भी सम्पूर्ण नहीं होता है। मैं पूर्णता नहीं चाहता। मैं केवल तुम्हें चाहता हूँ मंगला)।''

''नहीं, मेरा वह मतलब नहीं था!'' शब्दों को तोलती हुई मंगला बोली।,

''व्हाट डू यू मीन, आर यू किडिंग, मंगला! (तुम कहना क्या चाहती हो? तुम मुझे बहला रही हो, मंगला?)'' विकास के स्वर में अविश्वास का पुट था।

मंगला अब विकास से दूर उसकी ओर पीठ किए खड़ी खिड़की से बहुत दूर देख रही थी। जब वह बोली तो विकास को लगा कि उसकी आवाज़ दूर कहीं बहुत दूर किसी गुफा से आ रही थी, ''हाँ विकास, मैं पूर्ण नारी नहीं हूँ। मेरी पूरी काया, यष्टि, मन सभी से मैं नारी हूँ। परंतु मैं दाम्पत्य जीवन हेतु ...कैसे कहूँ... निष्प्रयोज्य हूँ। विधना मेरे नीचे के अंग बनाना ही भूल गया।''

विकास डॉक्टर था उसके चिकित्सकीय जीवन में ऐसे केसेज़ देखे थे। यह सत्यता उसके जीवन में भी आ सकती है, यह उसने कभी सपने में भी नहीं सोचा था। इस तथ्य को ग्रहण करने में उसे थोड़ा समय लगा। मंगला देखने में सम्पूर्ण नारी लगती थी; वह 'मिस यूथ' का खिताब भी जीत चुकी थी। फिर भी प्रकृति की इतनी बड़ी विडम्बना!

विकास बड़ी मुश्किल से इस आघात से बाहर निकला। उसने आगे बढ़ कर मंगला को कंधे से पकड़ कर अपनी तरफ घुमाया। मंगला का चेहरा एकदम सर्द हो गया था। लगता था उसमें कोई जान ही नहीं है। उस समय वह मात्र एक पत्थर की प्रतिमा लग रही थी। उसके मृतप्राय चेहरे ने विकास को तत्काल संयत कर दिया। वह प्रेमी से अधिक चिकित्सक की भूमिका में आ गया। उसने मंगला को बाहों में भरना चाहा। मंगला के जिस्म में मुर्दे की सी अकड़न थी।

मंगला ने जब से होश संभाला है वह इस वास्तविकता के साथ ही जी रही थी और अभ्यस्त हो गई थी। मगर आज जीवन में पहली बार उसका यह रहस्य किसी के सामने प्रकट हुआ। वह यह सोच कर जड़ हो गई कि इस रहस्योद्घाटन से उसका मान सम्मान चूर-चूर हो गया। वे सभी पुरुष जो उसकी एक चितवन के लिए तरसते थे, वह जानने के बाद अब क्या कहेंगे। वह उन सबकी आलोचनाओं और तिरस्कार को झेल सकती थी, क्योंकि वे उससे दूर, बहुत दूर थे। पर, आज उसकी असलियत जानने के बाद विकास जिसे अब वह बहुत चाहने लगी थी, की क्या प्रतिक्रिया होगी? तय है कि यह वास्तविकता विकास के मन में घृणा और उसके प्रति नफरत उत्पन्न कर देगा। उसके साथ बिताए गये लम्हे विकास के मन में जुगुप्सा पैदा कर दें। गैरों की नफरत, जुगुप्सा तो वह किसी तरह सह लेगी, पर विकास... जिससे उसे आत्मिक लगाव हो गया था, का दुराव वह कैसे सहन कर पाएगी। इसी विचार ने उसे बुत बना दिया था।

विकास मंगला की मनोदशा समझ रहा था। मानव मस्तिष्क जब परिस्थितियों के झंझावात में पड़कर किंकर्तव्य विमूढ़ हो जाता है तब वह शरीर पर भी असर डालता है। मस्तिष्क की इसी प्रतिक्रिया की वजह से मंगला पाषाण हो गई थी।

विकास के सर्जन की विशेषज्ञता ज्वाइन करने के बाद, एक दिन उसके प्रशिक्षक ने विकास से कहा, ''सर्जन उसी को बनना चाहिए जिसमें तात्कालिक निर्णय लेने की क्षमता हो। ऑपरेशन करते समय, विशेषकर इमर्जेन्सी में सर्जन के समक्ष ऐसी स्थितियाँ भी आ सकती हैं जो ''पानी में तीतर'' की भांति दुर्लभ हों...मगर सर्जन को वहीं, उसी समय, उन्हीं परिस्थितियों में उस समस्या का निराकरण स्वयं ही करना होता है। जिनमें तात्कालिक निर्णय लेने की ऐसी क्षमता है वही अच्छे सर्जन बन सकते हैं।''

यह क्षण विकास के लिए भी ऐसा ही था। उसका खुद का व्यवहार ही मंगला को इस स्थिति से बाहर ला सकता था या पागलखाने भेज सकता था। उसे तत्काल निर्णय करना था।

विकास ने मंगला की अकड़ी हुई देह को पूरी ताकत से दबाया। विकास मंगला के कान में कह रहा था, ''मंगला, विकास तुम्हें और केवल तुम्हें चाहता है। तुम जैसी भी हो मेरे लिए संसार में सबसे अनुपम हो। हम लोग आज जिस धरातल पर हैं वहाँ केवल एक दूसरे को ही जानते हैं, हममें क्या कमियाँ हैं इस बात पर गौर करने की स्थिति से हम लोग बहुत आगे निकल चुके हैं। यह वास्तविकता भी हमें एक साथ रहने में बाधक नहीं है।''

विकास की बाहों की जकड़न इतनी बढ़ गई थी कि मंगला को सांस लेने में भी कठिनाई होने लगी। इस प्राणान्तक कष्ट से उसका दिमाग वास्तविकता के धरातल पर आने लगा। उसका मस्तिष्क विकास की बातों को ग्रहण करने लगा था, जिन्हें सुनकर मंगला की देह एकाएक ढीली हो गई। बांध टूटने पर जैसे सारे तटबंध पर बिखर जाते हैं वैसी ही दशा मंगला की भी हो गई। यदि विकास की बाहों ने उसे जकड़ न रखा होता तो मंगला गिर पड़ी होती। वह मूर्च्छित हो गई थी।

विकास जानता था कि यह बेहोशी मंगला के लिए हितकारी है। जब वह होश में आएगी तब तक उसका मस्तिष्क इस हालत में आ चुका होगा कि वह संतुलित हो निर्णय ले सके। विकास ने मंगला को पलंग पर लिटा दिया, और एक कुर्सी खींचकर पास में ही बैठ गया।

मंगला की मूर्च्छा ने मंगला को ही नहीं वरन् विकास को भी अपने तात्कालिक निर्णय पर पुनर्विचार करने का समय दे दिया था।

विकास के मन ने पहले तो स्वयं से प्रश्न किया कि क्या वह मंगला को इस शिद्दत के साथ प्रेम करता है कि वह उसे ऐसी अपूर्णता के साथ भी स्वीकार सकता है। उसके मन ने कहा ''हाँ''!

पति-पत्नी के संबधों के बगैर भी? उत्तर मिला ''हाँ।''

एकाएक विकास की अंतरात्मा ने प्रश्न किया- ''इस निर्णय में कहीं दया या त्याग की भावना तो नहीं है जो बीतते समय के बाद क्षीण होकर पछतावे का कारण बने। उस समय दोनों का ही जीवन अभिशाप बन सकता है।''

इस प्रश्न का उत्तर देने के पहले विकास ने एक बार फिर अपने मन को टटोला; पर उसे वहाँ प्यार और प्यार के सिवा कुछ और नहीं मिला।

इस आत्मसंलाप के बाद आगे का मार्ग विकास के लिए बहुत आसान हो गया।

विकास की प्रैक्टिस में दो तीन केसेज आए थे जो मानसिक और वाह्य रुप से स्त्री थे परंतु उनके नीचे के अंग बने ही नहीं थे। वह 'ट्रांसजेंडर अथवा किंवापुरुष' कि श्रेणी में आते थे। ऐसे लोगों के डी.एन.ए. का परीक्षण करके यह पता लगाया जाता है कि वह जेनेटिक रूप (गुण-सूत्रों की संरचना से) में वह पुरुष हैं अथवा नारी। इन जींस (गुण-सूत्रों) के आधार पर चिकित्सक उसे पुरुष अथवा नारी काया प्रदान करने में मदद करता है। जिन लोगों में नारी काया के साथ नारी गुणसूत्र पाये जाते हैं, वह लोग यदि चाहते हैं तो आपरेशन द्वारा 'कृत्रिम योनि' का निर्माण कर दिया जाता है। ऐसा करने से उनके वैवाहिक संबंध बाधित नहीं होते। यह बात दीगर है कि वह न तो संतान पैदा कर सकते हैं और न ही रति सुख भोग का आनंद प्राप्त कर पाते हैं। पर हाँ, वह एक पहचान के साथ समाज में आदर से जीवन अवश्य व्यतीत कर सकते हैं।

मंगला के कुनमुनाने से विकास की विचार श्रृंखला टूटी। मंगला अब होश में आने वाली थी। विकास उसके नजदीक खिसक आया। मंगला ने आँखें खोलीं और विकास को देख कर मुस्कराई। वह अभी पूरी तौर से वर्तमान में नहीं आ पाई थी। एकाएक उसे बेहोशी के पहले घटी घटनाओं को यादकर वह अकुला उठी। वह उठ कर बैठ गई, चेहरे की मुस्कान की जगह विषाद की छाया ने उसके चेहरे को घेर लिया। वह उद्विग्नता

से उठकर खड़ी हो गई और जाने लगी। विकास उससे बात करना चाहता था। मगर वह जाने को तत्पर थी।

विकास बोला, ''ऐसे में एकाएक तुम घर क्यों जाना चाहती हो?''

विकास के चेहरे पर चिंता की रेखाएँ देखकर मंगला ने प्यार से विकास के गाल को छू कर बोली, ''घबराओ नहीं विकास, मैं आत्महत्या करने नहीं जा रही हूँ। तुम पर यह भेद प्रकट कर मैं एकदम निर्वस्त्र महसूस कर रहीं हूँ। मुझे लज्जा का आवरण धारण करने के लिए कुछ समय व थोड़ा एकांत चाहिए''

दरवाजे के पास पहुँचकर उसने मुड़कर विकास से कहा, ''और हाँ, विकास, जो भीष्म-प्रतिज्ञा तुमने ली है, मेरे चले जाने के बाद तुम्हें शांत मन से उस पर विचार करने का समय भी मिल जाएगा। मेरा विश्वास करो विकास, इस असंभव और बेमेल वैवाहिक संबंध के बिना भी हम लोग मित्र बने रह सकते हैं। मैं प्रार्थना करती हूँ की तुम किसी और से विवाह कर एक सफल दाम्पत्य जीवन जियो।''

जब तक विकास कुछ कहे मंगला जा चुकी थी।

कुछ ही क्षणों में एकाएक जैसे एक तूफान आया और सब कुछ विनाश करता हुआ निकल गया। तूफान के बाद की नीरवता हटाने के लिए विकास ने कॉफी बनाई। एकांत में गरमागरम कॉफी उसे सोचने में सहायता करती है। वह सोचने लगा कि मंगला ने जाते-जाते ठीक ही कहा कि मुझे ठंढे दिमाग से एक बार फिर सोच लेना चाहिए।

शाम और सारी रात के ऊहापोह के बाद सुबह भी विकास ने पाया कि मंगला को अपनाने का उसका निर्णय सही था। उसने कई बार मंगला को काल किया, मंगला कि तरफ से कोई जवाब नहीं मिला। शायद वह अभी पूर्ण रूप से नार्मल नहीं हुई थी। विकास ने सोचा मंगला पूरी तौर से स्वस्थ होने के बाद स्वयं फोन करेगी। विकास आश्वस्त होकर अस्पताल चला गया।

दो दिनों के बाद शाम को मंगला का फोन आया। आवाज़ से वह एकदम नार्मल लग रही थी बोली, ''कैसे हो विकास''? उसके अंदाज़ में चुहल थी।

विकास ने बिना कुछ समय दिये कहा, ''मंगला, मैं अपने प्रस्ताव पर अभी भी दृढ़ हूँ। हाँ, यदि तुमसे मेरा विवाह नहीं हुआ तो शायद मैं किसी और से विवाह नहीं कर पाऊँगा।''

मंगला बोली, ''ठीक है, मगर यह सब क्या फोन पर ही तय होगा। मेरे यहाँ आ जाओ।''

अस्पताल का राउंड लेने के बाद विकास मंगला के घर पहुँच गया। विकास फौरन शादी करना चाहता था, मगर मंगला आपरेशन के बाद ही विवाह करने के निर्णय पर दृढ़ रही। जीत मंगला की ही हुई। यह भी तय हुआ कि यह ऑपरेशन किसी और शहर में होगा जिससे मंगला की पहचान सार्वजनिक नहीं होगी।

कई दिन जांच की प्रक्रिया से गुज़रने के बाद मंगला का ऑपरेशन दूर अनजान शहर की क्लीनिक में हुआ। ऑपरेशन विकास ने ही किया और वह आपरेशन की सफलता के लिए पूरी तौर से आश्वस्त था।

मंगला और विकास का विवाह बहुत ही साधारण तरीके से सम्पन्न हुआ। दोनों पक्ष के गिने चुने और अभिन्न मित्र गण ही समारोह में शामिल हुए।

एक मित्र ने चुटकी ली बोला, ''क्यों विकास, घर तो तुम दोनों के पास है। अब सवाल यह उठता है की दूल्हन विदा होकर दूल्हे के यहाँ जाएगी कि दूल्हा दुल्हन के यहाँ?''

विकास बोला, ''दूल्हा ही विदा होकर दुल्हन के घर जाएगा। ससुराल को सुख की सार कहा जाता है।''

मंगला ने आश्चर्य से विकास की ओर देखा। यह बात तो उन्होंने तय ही नहीं की थी। कुछ समय बाद ही मंगला की समझ में आया कि विकास के घर उसकी महिला मित्र भी आती जाती होगी। इसीलिए विकास ने अपना घर बदलने का निर्णय लिया होगा।

सुहागरात में विकास ने मंगला को छेड़ते हुए कहा, ''मंगला, दुनिया का शायद मैं ही एकलौता सर्जन हूँ जो स्वयं अपनी सर्जरी का आनंद उठाने जा रहा हूँ।''

मंगला ने शरमा के मुँह मोड़ लिया।

हनीमून से लौटने के बाद दोनों अपने काम में व्यस्त हो गए। मंगला कि यूनिट ने महसूस किया कि मंगला के चेहरे की चमक बढ़ गई है, वह और भी सुंदर लगने लगी। वहीं अस्पताल के लोगों देखा की विकास पहले से ज्यादा शांत पर खुश दिख रहा था।

दो वर्ष गुज़रने के बाद जहां विकास संतुष्ट दिख रहा था वहीं मंगला के व्यवहार में असहजता आ रही थी। अपनी दुनिया में लीन विकास ने

इसे नोटिस ही नहीं किया। तब एक दिन मंगला ने नाश्ते की टेबल पर विकास से कहा, ''विकास, ऐसा कब तक चलेगा?''

विकास ने आश्चर्य से पूछा, ''ऐसा कैसा क्या मतलब ? कोई प्राबलम है क्या?''

मंगला बोली ''तुम्हें कोई कमी नहीं महसूस होती?''

विकास ने नकारात्मक मुद्रा में सिर हिलाया।

''अब तक तुम्हारे घर में बच्चे की किलकारी गूंजनी चाहिए थी; और यह मैं तुम्हें नहीं दे सकती।'' विकास ने देखा मंगला की आँखों में आँसू थे।

वह अपनी जगह से उठकर मंगला के पास गया और आश्वासन देते हुए बोला, ''मुझे तो कोई ज़रूरत नहीं लगती। मेरे लिए तो केवल तुम ही काफी हो।''

''पर मुझे चाहिए। मैं शरीर से चाहे जैसी होऊं मन से तो नारी हूँ। मुझे बच्चा चाहिए।'' कह कर विकास से लिपट कर रोने लगी।

विकास ने मंगला का सर सहलाते हुए कहा, ''ठीक है, हम एक बच्चा गोद ले लेंगे। बताओ तुम्हें बेटा चाहिए या बेटी?''

मंगला हठ करते हुए बोली, ''नहीं, मुझे तुम्हारा बच्चा चाहिए।''

विकास थोड़ी देर सोचने के बाद बोला, ''ठीक है, मगर इसके लिए हमें सरोगेसी की सहायता लेनी पड़ेगी। वह तो तुम्हारे लिए ठीक है न?''

मंगला खुश होकर आँसू पोछते हुए बोली, ''हाँ-हाँ, बेगर्स कैन नाट बी चूजर्स'' कहकर वह मुस्कराने लगी।

सरोगेसी प्लान करने में लगभग दो महीने निकल गए। सरोगेसी के लिए एक महिला मिल गई, शर्तें भी तय हो गईं। सरोगेट मदर का परीक्षण प्रारम्भ हो गया। मंगला आने वाले मेहमान की कल्पना में खुश थी। मंगला की खुशी से विकास भी खुश था।

एक दिन बेड पर ही मंगला और विकास ने पेपर में समाचार देखा की संसद में 'सरोगेसी बिल' पास हो गया। दोनों ने बड़ी उत्सुकता से उस बिल के प्रावधान देखने शुरू किए। दोनों का दिल बैठ गया। बिल में प्रावधान था कि सरोगेसी करने वाली महिला (सरोगेट मदर) सरोगेसी चाहने वाले दंपति के नजदीकी रिश्ते में ही होनी चाहिए। मगर इन दोनों के दूर-दूर तक कोई ऐसी महिला नहीं थी जो इन शर्तों के साथ 'सरोगेट मदर' बन सके।

विकास ने सरोगेसी क्लीनिक से नई परिस्थितियों में सरोगेसी की संभावनाओं पर विमर्श किया। क्लीनिक की डॉक्टर ने भी नए कानून के बाद अनरिलेटेड महिला द्वारा सरोगेसी के लिए मना कर दिया। फर्टिलिटी डॉक्टर ने बताया कि वैधानिक स्वीकृति के बगैर विकास दंपति को सरोगेट बच्चा नहीं मिल सकता।

मगर फिर भी दोनों ने हार नहीं मानी। विकास का मानना था कि विशेष परिस्थितियों में कोर्ट से ही स्वीकृति मिल सकती है। इसी विश्वास पर विकास ने वकील से सलाह ली। वकील ने बताया कि ऐसा हो पाना बहुत मुश्किल है।

विकास बोला, ''मुश्किल है, नामुमकिन तो नहीं?''

वकील ने कहा, ''वकालत में नामुमकिन कुछ भी नहीं होता। यदि केस कायदे से प्रस्तुत किया जाय तो कोर्ट प्रचलित कानून को बदलने की शक्ति रखती है।''

विकास बोला, ''ठीक है वकील साहब, यह विकल्प मुझे स्वीकार है। आप केस की तैयारी कीजिये।'' उसके स्वर में निश्चयात्मक दृढ़ता थी।

विशेष प्रावधानों के तहत डॉक्टर विकास एवं श्रीमती मंगला के नाम 'विशेष याचिका' हाई-कोर्ट में दाखिल हुई।

याचिका स्वीकृत हो या नहीं, इस विषय की पहली सुनवाई में केस प्रारम्भ होते ही जज ने विकास के वकील से पूछा, ''वकील साहब, क्या आपको सरोगेसी के संबंध में अभी-अभी पारित हुए कानून का संज्ञान है?''

डॉक्टर विकास सर्जरी के क्षेत्र में जाना माना नाम था, वहीं मंगला ग्लैमर की दुनिया में जानी मानी सुंदरी और टाप माडल के रूप स्थापित थी। दोनों के याची होने के वजह से अदालत खचाखच भरी हुई थी। इसी वजह से वकील साहब भी अपने को एक सेलेब्रिटी महसूस करने लगे थे। वकील ने बड़े ही नाटकीय अंदाज़ से लखनवी अंदाज़ में झुकते हुए कहा, ''जी मीलार्ड, मैं इस तथ्य से भली-भांति परिचित हूँ। यही वजह है कि यह केस लोवर कोर्ट में दाखिल न करके आपके सम्मुख हाई-कोर्ट में पेश किया है।''

जज साहब बोले, ''पर यह याचिका संवैधानिक प्रावधानों के विरुद्ध होने के कारण प्रथम दृष्टया ही खारिज की जा सकती है। आप सीनियर

एवं अत्यंत काबिल काउंसिल हैं इसके नाते अपना निर्णय सुनाने के पहले मैं आपको सावधान कर रहा हूँ।''

''इज्ज़त आफ़ज़ाई के लिए धन्यवाद मीलार्ड। यह जानते हुए की यह याचिका वैधानिक नियमों के प्रतिकूल है फिर भी कुछ सोच कर ही मैं आपके समक्ष एक युगल का केस लेकर उपस्थित हुआ हूँ। हाँ, यदि मीलार्ड मेरा पक्ष सुने बगैर ही याचिका को विधान विरुद्ध होने के पूर्वाग्रह के चलते खारिज करना चाहते हैं तो यह मीलार्ड का विशेषाधिकार है। इसमे मैं क्या कर सकता हूँ।'' कहकर वकील साहब अपनी कुर्सी पर असंतुष्ट होने का नाटक करते हुए बैठ गए। हालांकि, जो उनसे परिचित थे वह उनके चेहरे पर आए विजयी भाव को पढ़ चुके थे।

इसके पहले की जज साहब कुछ निर्णय लें, सरकारी वकील उठ कर खड़ा हो गया बोला, ''मीलार्ड, याचिका स्वीकृत होते वक़्त, मात्र इस तथ्य का संज्ञान लिया जाता है की याचिका प्रचलित न्यायिक व्यवस्था अथवा प्रचलित क़ानूनों के दायरे में है भी या नहीं। ऐसे ही मात्र इसी हाईकोर्ट में लाख के करीब केसेज़ पेंडिंग हैं। ऐसी निरर्थक याचिकाओं पर उच्च-न्यायालय का बहुमूल्य समय नष्ट करना ठीक नहीं होगा।'' प्रतिवादी सरकारी वकील अपनी बात में वज़न लाने के लिए शुद्ध हिन्दी में उतर आया।

जज साहब वादी के वकील के ''पूर्वाग्रह'' शब्द द्वारा अपने को बिद्ध और बद्ध किए जाने से अकुलाए थे, फिर भी पूर्वाग्रह के आरोप को नकारने के लिए वह बोले ''ठीक है, वकील साहब आप अपना पक्ष प्रस्तुत करें।''

विकास के वकील ने कहा, ''आई एम ओबलाइज्ड मीलार्ड (मीलार्ड मैं कृतज्ञ हूँ), वास्तव में यह मसला शहर की ही नहीं बल्कि देश की जानी मानी सुंदरी 'मिस यूथ 2012' व जाने माने सर्जन डॉक्टर विकास से संबन्धित है...।''

सरकारी वकील बोला, ''वकील साहब, न्यायालय के समक्ष सभी वादी एक बराबर हैं। शायद आप भूल रहे हैं कि भारत की तत्कालीन प्रधानमंत्री को भी माननीय न्यायालय के समक्ष एक साधारण नागरिक के रूप में उपस्थित होना पड़ा था।''

जज साहब भी वकील की इस कमजोर दलील को बड़े ही घटिया

तर्क के रूप में सुन रहे थे। पर वह 'पूर्वाग्रह' के आक्षेप की वजह से मौन ही बने रहे।

सरकारी वकील से कहा, ''सर, मैं तो सन् 1975 को 5-6 वर्ष का ही रहा होऊंगा, मैंने इसे पढ़ा है, इसलिए मुझे याद है। पर आप तो उस समय भी बुज़ुर्ग रहे होंगे। आपको आज भी याद है इसके लिए आप बधाई के पात्र हैं।'' सरकारी वकील का प्रतिपक्ष के वकील की 70 से पार की उम्र पर चुटकी से जज साहब समेत कोर्ट में बैठे लोग भी मुस्करा उठे।

''आप अपनी बहस जारी रखें यंगमैन।'' जज साहब ने बात को रफेदफ़े करते हुए कहा।

''और मीलार्ड मैं यहाँ एक बार फिर से सरकारी वकील समेत सबको सावधान करना चाहता हूँ कि यह केस बहुत ही विशिष्ट है...'' फिर नाटकीय ढंग से रुकते हुए वादी के वकील ने कहा, ''क्योंकि डॉक्टर विकास कि पत्नी 'मिस यूथ 2012' का खिताब पाई सुंदरी मंगला एक पूर्ण नारी न होकर एक किन्नर या ट्रांसजेंडर है...।''

...कोर्ट में जैसे एक बम फूटा हो। सभी लोग एकाएक हतप्रभ होकर एक दूसरे या स्वयं अपने आपसे बात करने लगे। कोर्ट में अव्यवस्था का माहौल छा गया।

स्वयं जज साहब भी कुछ क्षणों के लिए 'नान-प्लस्ड' (अचंभित) हो गए। फिर कुछ देर के बाद संयत होकर उन्होंने कोर्ट में आर्डर (व्यवस्था) बहाल रखने के लिए हथौड़ा पटका।

जज साहब बोले, ''क्या इसी वजह से आप इस केस को 'विशिष्ट' (स्पेशल) बता रहे थे?

विकास का वकील आदर से झुकते हुए बोला, ''जी हाँ, मीलार्ड। यह केस साधारण स्त्री-पुरुष संबंधों से एकदम अलग है।''

अदालत के अंदर व्यवस्था अभी भी पूर्ण रूप से स्थापित नहीं हो पाई थी। जज ने उठते हुए निर्णय दिया ''यह याचिका पूर्ण-विचार के लिए स्वीकार कि जाती है। इसके लिए इसे चौथे बुध को पेश किया जाय।''

जज साहब केस की अगली तारीख देकर कोर्ट समाप्ति की घोषणा कर उठ गए। संभवत: इसलिए कि इस रहस्य उद्घाटन के बाद कोर्ट में व्यवस्था बनाए रखना मुश्किल होता।

आज कल के डिजिटल युग में जहां समाचार एक आवश्यकता न

होकर मात्र टीआरपी बढ़ाने का साधन और पूर्ण व्यापार की शक्ल धारण कर चुका है। समाचार के व्यापारी (न्यूज़-मांगर्स) हर जगह मौजूद रहते हैं, वह इस समय कोर्ट में भी उपस्थित थे। यही कारण है कि जब तक मंगला और विकास वकील से अगली तारीख की बात करके न्यायालय परिसर से बाहर निकले, तब तक पत्रकारों का हुजूम, टीवी चौनल्स के प्रसारण वाहन इकट्ठा हो चुके थे। सभी अपने अखबारों और चैनल्स को 'ब्रेकिंग न्यूज़' पहुंचाना चाहते थे। वे विकास और मंगला के मुँह पर लगभग माइक घुसेड़े दे रहे थे। कहना ज़रूरी नहीं है कि उनके प्रश्न इतने ओछे थे कि कोई भी संवेदनशील आदमी ऐसे प्रश्न न तो पूछ सकता है और न ही ऐसे प्रश्नों का उत्तर देना चाहेगा। विकास ने बड़े बेरुखी और उग्र रूप से सभी माइक को एक हाथ से परे ठेलता हुआ दूसरे हाथ से मंगला को सहारा देता हुआ अपनी कार में बैठकर निकल लिया।

रास्ते में कार के एसी और सड़क के शांत वातावरण ने विकास को कुछ हद तक शांत करने में मदद की। मंगला जो प्रेस की भीड़ से आतंकित हो उठी थी वह भी कार के अंदर पहुँच कर बिल्कुल सामान्य हो चुकी थी। विकास ने अपने फ्लैट पर पहुँच कर अंदर दाखिल होने के बाद ही मंगला पर दृष्टि डाली। वह उसे एकदम सामान्य लग रही थी। विकास कुछ बोलता कि एकाएक फोन की घंटी बज उठी। यह काल यूसीजी नंबर पर था सो अस्पताल की काल समझ जान उसे न चाहते हुए भी काल उठानी पड़ी। उधर से विकास की महिला मित्र का स्वर सुनाई दिया जिसमें व्यंग्य का पुट था- ''तुम बहुत महान व्यक्ति हो विकास, यह तो मैं जानती थी, पर तुम 'इसके' भी शौकीन हो यह मुझे आज ही पता चला...।''

विकास ने गुस्से में मोबाइल बंद कर दिया।

मंगला हौले से मुस्करा रही थी। यह देख विकास का भी तनाव जाता रहा। उसने मंगला को बाहों में भरते हुए कहा, ''तुम इसको बड़ी बहादुरी से झेल रही हो, वहीं मैं इतना उद्वेलित क्यों हो जाता हूँ?''

मंगला बोली, ''तुम पर अपना भेद प्रकट करने के बाद अब मुझे किसी और की परवाह नहीं। मेरे लिए तुम खुश रहो, यही सबसे बड़ी उपलब्धि है।''

सत्य है कि सप्त-पदी लेने के बाद नारी स्वयं के साथ अपना यश, अभिमान, सम्मान अपने पति में तिरोहित कर देती है। इसके उपरांत यह

पुरुष का कर्तव्य हो जाता है कि वह अर्धांगिनी के इन मूल्यों का हमेशा ही आदर करे और रक्षित रखे।

उस दिन के बाद से विकास ने न्यूज़पेपर और टीवी पर न्यूज़ देखना बंद कर दिया। समाचार पत्र और चैनल्स क्या लिख रहे हैं उसको न वह सुनना चाहता था न ही देखना। अस्पताल के दायित्व से बचे समय में वह वकील साहब के बताए केस रिव्यू देखता रहता। धीरे-धीरे उसे अपने केस से संबन्धित बारीकियाँ भी समझ में आने लगीं। उसने पाया कि लगभग सभी कानून, कामन-सेंस (सामान्य बोध) और लाजिक (सहज तर्क) पर आधारित हैं। किन्हीं विशेष परिस्थितियों में ही अदालत को इन दोनों से अपवाद रूप में निर्णय लेने का अधिकार है। उसका मन अब पूरी तरह से आश्वस्त था कि यदि उसका केस कायदे से प्रस्तुत हो और मानवीय मूल्यों और भावनाओं पर आधारित कर भली-भाँति प्रस्तुत किया जाय तो प्रचलित कानून द्वारा, अपवाद स्वरूप फैसला भी पाया जा सकता है।

अगली पेसियों में कोर्ट, दर्शक और दर्शक के रूप में आए संवाददाताओं से भरा रहता था। विकास, खोजी पत्रकारों से बचने के लिए जब उसके केस की सुनवाई शुरू हो जाती थी तब ही कोर्ट रूम में पहुँचता। सुनवाई पूरी होते ही निकल लेता था। इन सुनवाइयों के दौरान उसे लगने लगा था कि उसका युवा वकील बहुत शार्प होते हुए भी अपना पक्ष उतनी मजबूती से नहीं रख पा रहा था जितना कि विपक्षी वकील। हो सकता है कि विपक्षी वकील के पास वर्तमान कानून का सहारा है वहीं उसका वकील केवल भावनाओं पर आधारित याचना को ही कानूनी भाषा में प्रस्तुत कर रहा था।

एकाएक विपक्ष के वकील ने दलील दी बोला, ''किन्नर के साथ जब मैरिज कंज्यूमेट (पती-पत्नी के बीच यौनिक समागम) ही नहीं हुआ तो संतति का प्रश्न ही नहीं उठता।''

इसके प्रतिउत्तर के लिए जज ने विकास के वकील की ओर प्रश्नवाचक मुद्रा में देखा।

वकील इस प्रश्न के उत्तर के लिए पहले से तैयार नहीं था। उसने अपनी अनभिज्ञता स्वीकारते हुए कहा, ''सर, इस प्रश्न का उत्तर तो डॉक्टर विकास या उनकी पत्नी ही दे सकती है।''

सरकारी वकील के मुँह से निकला- ''पत्नी! हुंह...।''

कोर्ट को प्रभावित करने के लिए अदालत में वकील लोग इस

तरीके के उद्‌गार प्रस्तुत करते रहते हैं जिनका मकसद मात्र अदालत को प्रभावित करना होता है, इससे अधिक कुछ भी नहीं। जबकि सुनने वाले को यह बदतमीजी लग सकती है।

इसके पहले कि विकास को पुकारा जाय वह स्वयं नपे तुले कदमों से जज साहब के सम्मुख उपस्थित हो गया। उसके चेहरे पर आत्मविश्वास था।

जज साहब बोले, ''डॉक्टर विकास, क्या आप इस तथ्य पर भरी अदालत में प्रकाश डालने को प्रस्तुत हैं।''

''जी हाँ, पर मेरा जवाब 'हाँ' या 'न' में नहीं होगा। इस तथ्य को समझने के लिए मुझे कुछ मेडिकल प्वाइंट्स अदालत में रखने होंगे जिन्हें मैं सरल शब्दों में पेश करने का प्रयास करूंगा।''

विकास के आत्मविश्वास को देख जज साहब भी प्रभावित होते हुए बोले, ''ठीक है डॉक्टर साहब, आप अपना बयान पूरा करें।'' फिर दोनों वकीलों की ओर देखते हुए बोले, ''यह बहुत ही व्यक्तिगत एवं नाजुक मसला है, मैं आप दोनों विद्वान वकीलों से अनुरोध करूंगा कि डॉक्टर साहब को बयान देते समय न टोकें। यदि कोई प्रश्न पूछना है तो वह बयान खत्म होने के बाद और अदालत से अनुमति लेकर ही पूछा।''

विकास बोले, ''सर, प्राचीन काल में किन्नरों कि गणना देव जातियों में होती थी। गंधर्व गायन और किन्नर नृत्य कला में निष्णात होते थे। पृथ्वी की राजकुमारियाँ और स्वर्ग की अप्सराएँ इन्हीं किन्नरों से कला सीखने में अपना सौभाग्य मानती थीं। आज जब हम किन्नरों के बारे में विचार करते हैं, तो हमारे सामने शादी, बारात, पुत्र जन्म पर नाचते हुए किन्नरों का ही चित्र उभरता है।''

''सर, मैं डॉक्टर हूँ इसलिए मैं जनता हूँ कि जितने किन्नर हमें समाज में नाचते गाते दिखते हैं, वास्तविकता में समाज में इनकी संख्या इससे कहीं ज्यादा है। भारत में तो किन्नरों का एक-एक अलग वर्ग है, जबकि विदेशों में यह जनसाधारण के बीच अनजाने रूप में बने रहते हैं। किन्नरों का जन्म प्रकृति कि गलती से ही होता है। प्रकृति की इसी गलती का परिणाम मेरी मंगला भी है। यह मन और शरीर दोनों से ही नारी है; परंतु किन्हीं कारणों से इसके नीचे के अंग प्रकृति बनाना ही भूल गई। इसमें मेरे साथ शायद आप भी स्वीकार करेंगे कि, स्वयं मंगला का कोई दोष नहीं है।''

''मीलार्ड, कोर्ट में इस तथ्य के उद्‌घाटन के पहले मंगला अनिंद्य सुंदरी के रूप में जानी जाती थी। इसके पूरे भारत में कितने ही प्रशंसक थे। मैं डॉक्टर विकास भी उनमे से एक था। जब मैंने मंगला से विवाह किया तब मैं इस तथ्य से परिचित था। मंगला के बहुत मना करने के बाद भी मैंने इससे विवाह किया। क्योंकि मैं जानता था कि प्रकृति की यह भूल एक छोटे से आपरेशन द्वारा पूरी की जा सकती है। मैंने स्वयं कृत्रिम योनि बनाने का आपरेशन किया। मैंने इसके पहले भी इस आपरेशन से दशाधिक महिलाओं को सामान्य वैवाहिक जीवन जीने योग्य बनाया। वह सभी एक आदर्श पत्नी के रूप में पारिवारिक जीवन व्यतीत कर रही हैं।''

विकास थोड़ी देर के लिए साँस लेने के लिए रुका। उसने देखा कि सभी, यहाँ कि सरकारी वकील भी बड़े गौर से उसका कथन सुन रहे थे। कोर्ट में थोड़ी देर के लिए शांति बनी रही।

जज साहब बोले, ''डॉक्टर साहब, आप अपना बयान जारी रखें। हम सब सुन रहे हैं।''

''मी लार्ड, उन महिलाओं जिनको समाज ट्रांसजेंडर या किन्नर कह उपहास करता, को परिवार तो मिल गया। परंतु उन्हें ऐसे ही प्रौढ़ या अधेड़ लोगों ने स्वीकार किया जिनके कि पहली पत्नी से एक दो बच्चे थे। वह व्यक्ति मात्र अपने बच्चों के लिए आया अथवा अपनी संतुष्टि के लिए ही सहारे के लिए ऐसी महिलाओं को स्वीकारते हैं।''

''परंतु सर, स्त्रीत्व में पत्नीत्व का आकर्षण मात्र संतति के लिए होता है। स्त्रीत्व केवल मातृत्व से ही सजता है। स्थावर-जंगम हर योनि में स्त्री का निर्माण विधाता ने केवल संतति के लिए ही किया है। वैवाहिक विवशता तो मात्र मानव समाज का बंधन है। नारी की पूर्णता मातृत्व में है।''

''सभी के संज्ञान में है कि जो स्त्री-पुरुष किन्हीं अक्षमताओं की वजह से संतान प्राप्त नहीं कर सकते हैं उनके लिए 'फर्टिलिटी-क्लीनिक' (वन्ध्यता निवारण क्लीनिक) बन गई हैं। पहले नि:संतान दम्पतियों के लिए शास्त्रों में 'नियोग' का प्रचालन था। अब जागरूक समाज ऐसी परिस्थितियों में 'सरोगेसी' का सहारा लेते हैं।''

''कानून के व्याकरण में अभी तक मात्र स्त्री लिंग और पुल्लिंग ही होते थे, जबकि हमारी भाषा में नपुंसक और उभय-लिंग भी माने गए हैं। कुछ समय पूर्व कानून ट्रांसजेंडर्स को वोटिंग का अधिकार नहीं देता था, परंतु अब संविधान में ट्रांसजेंडर्स को भी स्वीकार किया है, उनकी गणना

'दिव्यांगों' में करने का आदेश पारित किया गया है। इस प्रकार अब ट्रांसजेंडर भी उन सभी सुविधाओं के अधिकारी हो गए हैं। दिव्यांगों की शारीरिक अक्षमता को दूर करने के प्रयास हो रहे हैं। इस दिशा में संविधान और प्रशासन भी सहयोग करते हैं।''

''मीलार्ड, मेरी मंगला भी इन्हीं दिव्यांगों की श्रेणी में आती है। मैं सरोगेसी द्वारा उसकी दिव्यांगता दूर करने का प्रयास कर रहा हूँ। इन परिस्थितियों में मैं कोर्ट से प्रार्थना करता हूँ कि मंगला को सरोगेसी सुविधा उपलब्ध करने का आदेश देने की कृपा करे।''

सरकारी वकील जो विकास के इस लंबे बयान को रोकने के लिए कुलबुला रहा था, उठ कर खड़ा हो गया बोला, ''मीलार्ड, अच्छा होता यदि डॉक्टर विकास अपना ज्ञान डॉक्टरी तक ही सीमित रखें। उन्हें अनुमान नहीं है कि वह उस दरवाजे को खटखटा रहे हैं जो सर्वोच्च न्यायालय ने बंद कर दिये हैं। मंगला ऐसी महिलाएं जो पूर्ण रूप से महिला भी नहीं हैं, उन्हें सरोगेसी करने की अनुमति कैसे दी जा सकती है?''...

वकील कुछ और बोले तब तक विकास बोल पड़ा ''क्यों, जब करण जौहर जो कि अविवाहित है उसे सरोगेसी के द्वारा संतान मिल सकती है तो मंगला को क्यों नहीं। क्या वह व्यक्ति अर्धनारीश्वर है?''

सरकारी वकील विकास के प्रश्न से सकपकाया फिर भी बुझी आवाज़ में बोला, ''डॉक्टर साहब, इस विषय में कानून बन चुका है। अदालत चाहे भी तो इसके विरुद्ध नहीं जा सकती।''

जज साहब बोले, ''वकील साहब, अधिकतर वकील बने बनाए क़ानूनों की लीक पीटते हुए ही वकालत करते हैं। परंतु कुछ कानून को बदलने के लिए बहस करते हैं। यह अदालत का विशेषाधिकार है कि वह अपने पुराने फैसलों को फिर से बदल सकता है या अपवाद स्वरूप उन्हें किसी केस विशेष के लिए शमिल भी कर सकता है।''

सरकारी वकील का मुँह उतर गया। अदालत में सन्नाटा छा गया। एकाएक अदालत में उपस्थित लोगों की तालियों की गड़गड़ाहट से कक्ष गूंज उठा।

जज साहब ने खड़े होते हुए मेज़ पर हथौड़ा पटक कर सबको शांत रहने का संकेत करते हुए बोले, ''शांत हो जाइए! मैंने निर्णय नहीं सुनाया। मात्र वकील साहब को अदालत के विशेषाधिकारों के बारे में सूचित किया है। मैं मानता हूँ कि संविधान ने वकीलों को कहने की बहुत स्वतन्त्रता

दे रखी है। फिर भी सभी वकील साहबान आइंदा से अदालत को सीमाओं में बांधने वाले बयान से परहेज करें। अदालत अब पंद्रह दिनों बाद पुन: इस केस को सुनेगी। रजिस्ट्रार साहब नोट करें कि यह केस अगली तारीख को भी इसी अदालत के समक्ष प्रस्तुत किया जाएगा।''

जज साहब इजलास छोड़कर चले गए।

× × × × ×

अगली तारीख पर भी अदालत खचाखच भरी थी। जज साहब ने अप्रत्याशित भीड़ जुटने की संभावना से केवल अनुमति पास लेकर आने वालों को ही अदालत में आने की अनुमति दे रखी थी। फिर भी केस इतने रोचक मोड़ पर पहुँच चुका था कि सभी वकील साहबान भी अदालत में आ बैठे थे। खबरनवीसों को अदालत में आने की अनुमति नहीं मिली थी। फिर भी जज साहब के डायस पर आने के पहले ही कोर्ट पूरी तौर से भर चुकी थी और कुछ लोग खड़े भी दिख रहे थे।

जज साहब आए और उन्होंने सरकारी वकील को अपना पक्ष रखने का अंतिम मौका दिया।

वकील साहब मात्र किन्नर के माँ बनने व पहले से चल रहे कानून के बारे में ही बोलते रहे। सीनियर वकील होने के बावजूद वह अपना नज़रिया उतनी जीवंतता से नहीं रख पाये जितना कि डॉक्टर होते हुए विकास ने अपनी बात रखी। विकास भुक्त भोगी था, वह अपनी पत्नी के माँ बनने की तीव्र इच्छा को जानता था। अत: उसकी बातों में तर्क नहीं था। वह अपने दिल से बोल रहा था। यही कारण था कि उसकी बातों ने सभी के दिल को छू लिया था।

तय था कि यदि फैसले में जूरी होते तो वह विकास के ही पक्ष में अपना मत देते। परंतु यहाँ मात्र जज साहब को न्यायिक निर्णय देना था, जिसमे जज्बातों का कोई स्थान नहीं होता।

जब वादी के वकील को मौका मिला तो उन्होंने जज साहब को बताया कि अपना पक्ष डॉक्टर विकास स्वयं प्रस्तुत करेंगे। जज साहब ने बगैर कुछ बोले प्रश्नवाचक दृष्टि से विकास की ओर देखा। वकील ने विकास को खड़े होने का इशारा किया।

विकास ने खड़े होकर बड़ी विनम्रता से जज साहब व अदालत का झुककर अभिवादन किया-

''मीलार्ड, कानून मेरे अध्ययन का विषय नहीं रहा है। फिर भी मेरा दृढ़ विश्वास है कि कानून अंधा नहीं है. मेरी पूरी श्रद्धा भारतीय संविधान के प्रति है। मैं इसी संविधान से आपको एक पैरा पढ़ कर सुनाता हूँ। विकास ने धीरे-धीरे किन्तु शांत संयत ऊँची आवाज़ में पढ़ना शुरू किया- ''हम भारत के लोग, भारत को एक सम्पूर्ण प्रभुत्व सम्पन्न, समाजवादी, पंथनिरपेक्ष, लोकतंत्रात्मक गणराज्य बनाने के लिए तथा उसके समस्त नागरिकों को सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक न्याय, विचार, अभिव्यक्ति, विश्वास, धर्म और उपासना की स्वतंत्रता, प्रतिष्ठा और अवसर की समता प्राप्त करने के लिए तथा उन सब में व्यक्ति की गरिमा और राष्ट्र की एकता और अखण्डता सुनिश्चित करने वाली बंधुता बढ़ाने के लिए दृढ संकल्प होकर अपनी इस संविधान सभा में आज तारीख...एतद्द्वारा इस संविधान को अंगीकृत, अधिनियमित और आत्मार्पित करते हैं।''

पहले तो जज साहब के चेहरे पर असमंजस के चिह्न उभरे फिर उद्धरण का श्रोत समझ में आते ही वह उठकर खड़े हो गए। उनके खड़े होते ही सारी अदालत खड़ी हो गई।

विकास के वाचन के समाप्त होने पर सभी अपनी-अपनी जगह पर बैठ गए। अदालत में किसी के चेहरे पर आश्चर्य, द्विविधा तथा अधिकतर लोगों के चेहरे पर बेवजह खड़े होने की विवशता की चिढ़ थी। लोगों को समझ में नहीं आ रहा था कि यह पैरा विकास ने क्यों पढ़ा।

विकास ने हाथ के लिखे हुए कागज को पढ़ने के बाद डेस्क पर रखते हुए, सभी से क्षमा याचना कर बोलना शुरू किया, ''मीलार्ड, आप को तो भान होगा ही कि यह पंक्तियाँ हमारे संविधान की प्रस्तावना के रूप में, संविधान के सबसे पहले पृष्ठ पर लिखी हैं। इस प्रतिज्ञा को संविधान सभा के सभी सदस्यों, सभी सांसदों के अलावा माननीय राष्ट्रपति जी और तत्कालीन प्रधानमंत्री जी ने, अंगीकृत कर इसके नीचे हस्ताक्षर किए हैं। हम सब गणतन्त्र दिवस के दिन इसे पढ़कर शपथ लेते हैं'' कुछ रुककर बोला, ''मीलार्ड, यह शपथ आप स्वयं भी लेते होंगे।''

''मेरे विचार में इसमें लिखे 'न्याय, स्वतन्त्रता, समता, अभिव्यक्ति की आज़ादी आदि जितने भी शब्द लिखे हैं वह केवल इस पैरा की पाँचवीं लाइन में उल्लिखित एक शब्द 'व्यक्ति की गरिमा' के संरक्षण हेतु ही लिखे गए हैं। व्यक्ति की गरिमा का संरक्षण ही पूरे संविधान का उद्देश्य है।''

''मैं डॉक्टर विकास आज न्यायालय की चौखट पर खड़े होकर अपनी पत्नी के 'व्यक्ति की गरिमा' संरक्षण हेतु गुहार लगा रहा हूँ कि उसे मातृत्व का अधिकार दिया जाय। मैं मानता हूँ कि वह साधारण माताओं की भांति शिशु को स्तनपान नहीं करा सकेगी। परंतु यही विवशता तो अन्य महिलाओं की भी है, जो सरोगेसी से संतान प्राप्त करती हैं। जज साहब जब एक विख्यात एकल पुरुष को सरोगेसी की सुविधा मिल सकती है तो मुझे क्यों नहीं। मेरे साथ तो मेरी पत्नी भी है।'' कहकर विकास शांत भाव से अपनी सीट पर बैठ गया।

पूरी अदालत में कोहरे की तरह सन्नाटा छा गया था। तभी विकास के वकील ने विकास के कान में गद्‌गद स्वर में फुसफुसाया, ''क्या बात है डॉक्टर साहब, क्या दूर की कौड़ी निकाल कर लाये हैं आप।''

विकास के चेहरे पर कोई भाव नहीं आए। वह तटस्थ मुद्रा में मौन बैठा रहा।

सबके मन में एक ही प्रश्न था- 'क्या संविधान द्वारा स्थापित 'व्यक्ति की गरिमा', अदालत को अभी तक प्रचलित कानून को पलटने को विवश कर सकती है?'

जज साहब भी थोड़ी देर तक मौन बैठे रहे। उनके मन में ऊहापोह चल रही थी। उनकी आँखों के सामने संविधान का पहला पन्ना फडफ़ड़ा रहा था जिस पर उस समय के सभी विधि-वेत्ताओं के हस्ताक्षर थे। फिर एकाएक जज साहब की आँखें अदालत पर फोकस हुईं। उन्होंने लिखना शुरू किया।

विकास निर्विकार भाव से बैठा रहा।

जज साहब ने बोलना शुरू किया, ''यह केस संभवत: मेरे जीवन का सबसे अजीबोगरीब केस है। इसमें एक मन और शरीर से स्त्री, जो कि अपनी सुंदरता के झंडे गाड़ चुकी है, पता चलता है कि वह प्रकृति की ज़रा सी भूल के कारण पूर्ण नारी होने से वंचित रह गई। उसकी वास्तविकता प्रकट होने के बाद भी एक विख्यात सर्जन उससे शादी करने को तैयार होता है। सर्जन प्लास्टिक सर्जरी द्वारा उसे दाम्पत्य जीवन के योग्य तो बना लेता है परंतु फिर भी वह स्त्री माँ बनने में अक्षम रहती है। मैं इस तथ्य से सहमत हूँ कि नारीत्व की पूर्णता मातृत्व में है। माँ बनने की लालसा इस स्त्री में भी होगी। युगल के सामने बच्चा गोद लेने का भी विकल्प है। परंतु महिला की लालसा अपने स्वयं के पति की ही

सन्तान की है, जो मात्र सरोगेसी से ही संभव है। सरोगेसी अधिनियम में रक्त-संबंधी से इतर महिला द्वारा सरोगेसी को मान्यता नहीं है। डॉक्टर विकास और उनकी पत्नी दोनों का दुर्भाग्य है कि उनके पास कोई रक्त-संबंधी महिला नहीं है जो इनके लिए सरोगेसी कर सके।''

''डॉक्टर साहब व उनकी पत्नी, मातृत्व कि दुहाई देते हुए इस अधिनियम में शिथिलता प्राप्त करने हेतु इस अदालत में प्रस्तुत हुए हैं।''

''जैसा कि सरकारी वकील का दायित्व है कि वह प्रचलित क़ानूनों के विरुद्ध होने कि वजह से इस याचिका का विरोध करें। यह कर्तव्य निर्वहन उन्होंने पूरी तरह किया।''

''संक्षेप में यह याचिका सरोगेसी अधिनियम में सरोगेट माँ को 'रक्त संबंधी' होने के अनुच्छेद या शर्त के 'शिथिलीकरण' के लिए है।''

''अदालत का यह मानना है कि स्त्री गर्भाशय कि 'तिजारत' रोकने के लिए ही यह 'रक्त संबंधी' शर्त इस अधिनियम में जोड़ी गई है। इस वाद में अदालत ही नहीं यहाँ उपस्थित सभी लोग इस तथ्य से मुतमइन होंगे कि डॉक्टर विकास के केस में तिजारत का समावेश नहीं है। प्रचलित क़ानूनों के रहते हुए भी लोग चोरी-छुपे विधि विरुद्ध कार्य समाज में करते रहते हैं- यह एक कटु-सत्य है। ऐसा डॉक्टर विकास और उनकी पत्नी मंगला भी कर सकते थे। परंतु इस युगल ने ऐसा न करके, अच्छे नागरिक की भाँति अदालत से स्वीकृति लेने के लिए आज यहाँ उपस्थित हुए। इसके लिए उनको अपने दांपत्य जीवन के गुप्त रहस्य भी उद्घाटित करने पड़े। अदालत इस बात के लिए उनका साधु-वाद देती है।''

''डॉक्टर साहब ने आज संविधान के मर्म की बड़े प्रभावी ढंग से व्याख्या की जो इस वाद में ही नहीं आगे के निर्णयों में होगी। पूरा का पूरा संविधान मात्र राष्ट्र की अखंडता एवं व्यक्ति की गरिमा के लिए ही सृजित है। मातृत्व स्त्री की 'वैयक्तिक गरिमा' का महत्वपूर्ण भाग है अत: किसी भी स्त्री को इससे वंचित नहीं किया जा सकता। यही कारण है कि प्राचीन काल में वंध्य पुरुषों की पत्नियों को 'नियोग' कि व्यवस्था थी।''

''अत: यह अदालत श्रीमती मंगला जो प्राकृतिक भूल से संतान उत्पन्न करने योग्य नहीं हैं, को सरोगेसी अधिनियम में 'रक्त-संबंधी' शर्त को शिथिल करते हुए सरोगेसी की अनुमति प्रदान करती है।''

''यह निर्णय मात्र इसी केस पर लागू होगा और इसे भविष्य के

लिए 'नज़ीर' नहीं माना जाएगा।'' यह कहकर जज साहब उठकर अपने चैंबर में चले गए।

अदालत में काफी देर तक तालियाँ गूँजती रहीं, किन्तु डॉक्टर विकास वहीं बुत बने बैठे रहे। उन्हें अपने कानों पर विश्वास ही नहीं हो रहा था।

उनके वकील ने डॉक्टर विकास को उठाया और विजयी भाव से साथ लेकर अदालत से बाहर निकाले। भीड़ ने ताली बजाते विकास की जीत का स्वागत किया और जाने का रास्ता देने के लिए राह दे दिया। विकास चलते रहे दर्शक तालियाँ बजाते रहे... पर्दे पर कैप्शन आया-

'इट इज़ नॉट दि एंड, इट इज़ स्टार्ट आफ न्यू लाइफ (यह अंत नहीं है। एक नये जीवन की शुरुआत है)।'

पिक्चर का प्रीमियर शो खत्म होते ही हाल की लाइटें जल गईं। मंगला अपने सोते हुए बच्चे को गोद में लेकर खड़ी हो गई। डॉक्टर अपनी नम आँखों को रुमाल से पोछते हुए चलने को हुए कि फिल्म के डाइरेक्टर ने आकर फिल्म की सफलता के लिए बधाई दी ''बहुत बहुत बधाई डॉक्टर विकास, आपके संघर्ष को कानूनी दुनिया ने ही नहीं जनता ने भी सराहा है। मल्टीप्लेक्स के बाहर दर्शकों का हुजूम आपकी और मंगला जी की एक झलक पाने को बेताब है।''

डाइरेक्टर के साथ विकास और मंगला गोद में अपने बच्चे को लेकर मल्टीप्लेक्स की बालकनी में पहुंचे। नीचे दर्शकों की भीड़ ने मंगला-विकास के नारे लगाए और तालियाँ बजाकर उनका स्वागत किया। तभी विकास ने मंगला की गोद से बच्ची को लेकर विजय की ट्राफी के भाँति दोनों हाथों से उठाकर पब्लिक को दिखाया। पब्लिक खुशी से तालियाँ बजाने लगी।

❐❐❐

बुत-परस्ती अथवा हाइपोक्रेसी

तीन दिसंबर की ठंडी शाम, क्लीनिक बंदकर मैं जल्दी से घर पहुँचकर एक कप गर्म चाय के प्याले के साथ टी.वी. में बीते साल के मुख्य समाचार देखना चाहता था, घर पर श्रीमती जी अपनी इवनिंग वाक से वापस नहीं लौटी थीं, टी.वी. आन किया। टी.वी. पर कहीं किसी जन प्रतिनिधि का शपथ ग्रहण चल रहा था, खबर महत्त्वहीन लगी। सोचा तब तक स्वयं ही चाय बना ली जाय। चाय का प्याला हाथ में लेकर टी.वी. के सामने आसीन हो गया। अगली खबर में पूर्व मंत्री को घोटाले में जेल होने की खबर थी। न्यूज एडीटर की क्या सेन्स ऑफ टाइमिंग थी। एक क्षण राजनेता की संविधान के प्रति निष्ठा की शपथ लेने की खबर और दूसरे ही क्षण एक अन्य नेता द्वारा संविधान का उल्लंघन करने पर सजा पाने की खबर, शायद एडीटर का इशारा था कि कैसे राजनेता संवैधानिक पद पाकर अपने को संविधान से ऊपर मानने लगता है।

दृश्य 1- रामनवमी का दिन इम्तिहान सिर पर। इसलिये नवयुवक में भक्ति का ज्वार उमड़ा। सोचा चलो राम जी के दर्शन कर लिये जायें। राम जी प्रसन्न होंगे तो इम्तिहान में मदद तो करेंगे ही साथ-साथ थोड़ा मन भी बहल जायेगा। 'बाई वन गेट वन फ्री' के जमाने के युवा को इतनी समझ तो हो ही जाती है। सो तत्काल ही नहाने का शार्ट कट... हाथ मुँह धोकर मन्दिर को चल पड़ा। मंदिर में जूते खोने के भय से पुरानी चप्पल पहनना नहीं भूला (वेरी प्रैक्टिकल)। मंदिर में झाँकी लगी थी। जयन्त की कुदृष्टि का दृश्य। युवा दिल में विचार आया कि वास्तव में सीता मइया बहुत ही सुन्दर होंगी। तभी तो देवराज इन्द्र के पुत्र को भी काक रूप धारण करना पड़ा। तभी हल्की सी बदबू का एहसास हुआ। आँख खोली तो पड़ोस की महरी की गन्दी किशोर लड़की रधिया दिखी। बदबू से बचने के लिये वह थोड़ा अलग हट गया पर विचार शृंखला चलती रही। जयन्त के इस अपराध पर राम जी के दिये दंड से बचाने को शिव और ब्रह्मा जी ने भी मनाकर दिया। ठीक ही किया जयन्त का अपराध ही

अक्षम्य था। एकाएक रधिया के चिल्लाने से उसकी आँख फिर खुली। पड़ोस के भइया राधा से सट रहे थे और रधिया उन्हें ही डॉट रही थी। ''बड़े घर के बेटवा ओ ई करतूत। अरे तई रामै जी कै ही सरम करि लेतिउ।'' भइया एक आँख दबाते हुए बोले, ''घर में तू अकेली कहाँ मिलती''। मैंने सोचा कि अब पब्लिक भइया जी की पिटाई अवश्य करेंगी। पर यह क्या पंडिताइन काकी उसी प्रकार आँख बन्द किये भक्ति में लीन थीं। हाँ, पास ही खड़े एक शोहदानुमा अधेड़ ने गन्दे दाँत निपोर कर कहा, ''दिल लगा...से तो परी क्या चीज़ है'' मैंने भगवान् जी को देखा वह मूर्ति बने मुस्करा रहे थे और जयन्त मइया के पैरों में वैसे ही चोंच मार रहा था।

दृश्य 2- दिन दो अक्टूबर गांधी मैदान में गांधी बाबा की मूर्ति को साल भर के बाद झाड़ पोंछ कर साफ किया गया था। इसलिये नहीं कि आज उनका जन्म दिन था। आज सूबा प्रमुख गांधी ''प्रतिमा'' पर माल्यार्पण करेंगे। स्कूली बच्चे भोर काल से ही पूरी ड्रेस में लाइन से लगा दिये गये। सूबा प्रमुख की बाट जोहते निश्चित समय से दो घंटे ऊपर हो चुके थे। अध्यापक व अन्य कार्यकर्ता तो पड़ोस के ठेले से चाय आदि पी कर समय गुजार रहे थे, पर बच्चों को कोई पानी को भी नहीं पूछ रहा था। हाँ, बीच-बीच में सर की कड़कती आवाज में बच्चों को हिलो नहीं, ठीक से खड़े रहो, बात मत करो के निर्देश जरूर मिल रहे थे। तभी नेता जी का दो दर्जन गाड़ियों का काफिला आया। जय-जयकार होने लगी। बच्चों ने सलूट मारा, नारे लगाये। नेता जी ने उन्हें एक मुस्कान से अनुग्रहीत किया ही था कि एक बच्चा बेहोश होकर गिर पड़ा। साथी मदद को झुका कि सर ने डाँटा ''सीधे खड़े रहो'' बच्चे के गिरते ही नेता जी ने अपना मुँह फेर लिया। सीधे माल्यार्पण मंच पर पहुँच गये। बच्चा बेहोश पड़ा था। नेता जी गांधी जी की सीख ''दया, करुणा और अहिंसा'' के बारे में भाषण दे रहे थे। भीड़ में कुछ बच्चों के अभिभावक भी थे। उनमें से एक से नहीं रहा गया। वह चीखा, ''अरे भाषण बन्द करो। बच्चे को मरने से बचाओ। उसे अस्पताल भेजो'' शहर और सूबे के सभी आला अफसर खड़े थे। डॉक्टर भी होंगे पर सभी सूबा प्रमुख की स्पीच कानों को चातक बनाये सुन रहे थे। अदना से बच्चे को कैसे देखें ? एम्बुलेन्स भी थी। पर वह प्रमुख के लिये ही थी। ''लेस मार्टल'' के लिये ''ब्लू बुक'' में निषेध था भीड़ उग्र होने लगी। लोग गुस्से में धक्का मुक्की पर

उतर आये। प्रमुख के लिये मुर्दाबाद होने लगा। उनका गोरा चेहरा गुस्से से लाल हो गया। जनता की इतनी हिम्मत कि एक अदना बच्चे के लिए उनकी शान में गुस्ताखी करे। बहुत हो गया। उन्होंने भाषण रोक दिया चाय पानी किये बगैर ही सभा स्थल से जाने लगे सभी अधिकारी सन्न थे। मोटर पर बैठते समय दरवाजा पकड़े पुलिस मुखिया के कान में कुछ कहा। खाकी वर्दी ने सलूट मार कर कहा, ''यस सर''। प्रमुख चले गये।

धक्का मुक्की जारी थी। कुछ सहृदय लोग बच्चे तक सहायता के लिये पहुँचने की कोशिश में थे पर उन्हें बाधित कर रही थी तमाशबीनों की भीड़। तभी तड़ातड़ होने लगी। पुलिस ने लाठीचार्ज कर दिया। लोग भागे। तमाशबीन सबसे पहले भागे। भीड़ तितर बितर होने लगी। परन्तु ऐसे में भी कुछ लोग बच्चों को बचाने का प्रयास कर रहे थे। असल में लाठी चार्ज उन्हीं ने झेला। पुलिस भी चली गई। कुछ रिक्शे वालों को दया आई। घायलों को अस्पताल पहुँचाया। डॉक्टर ने एक घायल से पूछा, ''आप तो बुजुर्ग लगते हैं। आप कैसे फँस गये?''

बुजुर्ग ने कहा, ''बच्चों पर दया आ गई तो मदद करने पहुँचा था।''

डॉक्टर हँसा बोला, ''आज के जमाने में दया और करुणा?''

उधर गांधी मैदान के ऊपर उड़ते हुए एक कौवा सारा दृश्य देख कर सोच रहा था ''गांधी जी के ही सामने दया और करुणा की अनदेखी! उन्हीं के सामने निरीहों पर हिंसा! कौवे ने मूर्ति के ऊपर उड़ान ली और प्रतिमा के सिर पर बीट कर के चला गया। बीट से प्रतिमा के मस्तक पर टीका लग गया।

हम हर महान् व्यक्तित्व की एक मूर्ति किसी पार्क या चौराहे पर स्थापित कर अपने कर्त्तव्य की इतिश्री मान लेते हैं। उनके द्वारा प्रस्तुत आदर्श से प्रेरणा नहीं लेते। शायद मूर्ति पूजा की यह एक सबसे बड़ी कमी है। जिस मूर्ति को हमें अपने हृदय में धारण कर उसके स्थापित मूल्यों को जीवन में उतारना चाहिये उस मूर्ति को मन्दिर या चौराहे पर रख देने से उनके आदर्श, उनसे प्रेरणा लेने का दायित्व भी हम वहीं स्थापित कर आते हैं और उन महापुरुषों के नाम पर मनमानी और स्वार्थ सिद्धि के लिए स्वतंत्र महसूस करने लगते हैं।

बचपन में एक फिल्म देखी थी। एक वीर राजा की अत्यन्त सुन्दर रानी थी। एक दुष्ट जादूगर रानी को उठा ले जाने को आया। राजा ने प्रतिरोध करना चाहा तो जादूगर ने राजा को पत्थर की मूर्ति बना दिया,

और रानी पर अत्याचार करने लगा। राजा मूर्ति बना असहाय देखता रहा। आज कल शायद इसीलिये न्याय की देवी को बुत बनाकर, उसकी आँखों में पट्टी बाँधकर न्यायालयों में खड़ा कर दिया जाता है कि उसके सामने ही कानून को तोड़ा और मरोड़ा जा सके। आँखों में पट्टी के कारण देवी तराजू भी नहीं देख सकती कि पलड़ा किधर झुक रहा है या झुकाया जा रहा है। वादकारी के हित की रक्षा कैसे हो जब ''वादकारी का हित सर्वोच्च है'' का नारा पीठासीन अधिकारी के पीछे लिखा रहता है। गांधी जी की प्रतिमा जो सत्तर के दशक में सदा 'चार' का संदेश देती है अब सौ रुपये के नोट पर छाप दी गई, जिससे कम देने पर डेट भी नहीं मिलती।

क्या इस प्रकार की 'हाइपोक्रेसी' अथवा 'कथनी और करनी में अन्तर' सभी मुल्कों में होता है या 'इट हैपेन्स ओनली इन इण्डिया'। यदि हों तो भारत सचमुच 'अतुल्य' है।

❐❐❐

लाचार...

परनिंदा सुख प्राप्ति हेतु अधिकारीगणों ने इसके लिए लंचरूम और क्लब नामक संस्थाओं की स्थापना कर डाली। इन संस्थाओं में एक विभाग के अधिकारीगण एकत्र होकर बड़े ही निष्पक्ष भाव से दूसरे विभाग के अधिकारियों की पोल-खोल का खेल खेलकर इसका उपभोग करते सुने जा सकते हैं। खुद चाहे भ्रष्टाचार, व्यभिचार से कितने ही पंकिल क्यों न हों, दूसरे विभाग के लोगों पर कीचड़ उछालने में महारत रखते हैं। प्रशासनिक अधिकारियों की गोष्ठी में न्यायपालिका और पुलिस निशाने पर होती है, वहीं न्यायिक अधिकारियों की पंचायत में प्रशासन और पुलिस पर छींटाकशी होती रहती है। गो कि दोनों विभागों के निशाने पर पुलिस विभाग ही रहता है।

ऐसा नहीं कि इन गोष्ठियों में केवल हल्की बातों का ही चलन है। अपवादरूप में जब कभी कोई समझदार, संतुलित अधिकारी कोई कायदे कि बात कहता है तो ज्यादातर लोग अपने पिछले बयानों से विचलित, उक्त अधिकारी से सहमत होने की ज़हमत भी उठा लेते हैं। पर ऐसे अवसर कम होते हैं। परंतु यदि होते हैं तो वह ज्यादा लंबे नहीं होते। ऐसे में मीटिंग समाप्त होने पर सभी को लगता है कि आत्मा अतृप्त कहीं रह गई।

ऐसा उन्मादी होता है यह परनिंदा-सुख!

फिर भी इन गोष्ठियों में कभी न कभी कुछ अच्छी बातें और बौद्धिक चर्चाएं भी हो जाती हैं।

एकदा ऐसी ही गोष्ठी में पुलिस निंदा की बयार बह रही थी। कारण- आज के अखबार में छपा था कि अमुक थाने की पुलिस ने एक पंच-वर्षीय पयमुख को 'मानव-वध' के आरोप में नामित कर दिया। फिर क्या, सबका कहना था कि पहले तो पुलिस 'दफा-सरपट' ही लगाती थी, परंतु अब वह मर्डर ऐसे गंभीर अपराधों में 'सरपट तफतीश' भी करने लगी।

एक अधिकारी ने सबको शांत करने की मुद्रा में हाथ उठाकर अपना अनुभव बताया-

''अरे भाई, जब मैं फलां ज़िले में तैनात था तो मेरे सम्मुख पुलिस ने एक सत्तर वर्ष के जर्जर वृद्ध को एक नवयुवक के मर्डर में प्रमुख अभियुक्त बनाकर पेश कर दिया। वह बेचारा ठीक से चल भी नहीं पा रहा था।''

एक ने पलीता लगाया ''बताइये इतना बुड्ढा चलने में अक्षम व्यक्ति एक नवजवान का कत्ल कैसे कर सकता है?''

पहला अधिकारी बोला, ''अरे, यही नहीं वह लाचार वृद्ध दाहिने हिस्से से पैरालाइज्ड था। फिर भी अभियोजन का कहना था कि अभियुक्त ने दस कदम कि दूरी से उसे भाला फेंक कर मारा जिससे वह नवयुवक तत्काल 'फ़ौत' हो गया।''

''हाँये...इतने लाचार व्यक्ति को भी नहीं बख्शा!'' सबके गले से कोरस निकला।

''फिर आपने क्या जजमेंट दिया?'', श्रोता अधिकारियों का प्रश्न आया।

''इसमे कोई दूसरा जजमेंट भी हो सकता है क्या?'', अधिकारी ने प्रश्न पर प्रतिप्रश्न किया।

''तब तो आपने पुलिस को भरपूर 'स्ट्रिकचर' (निर्णय में किसी को प्रतिकूल टिप्पणी। न्यायालय की प्रतिकूल प्रविष्टि से सेवा कर्मियों पर कार्यवाही भी हो सकती है) दिया होगा।''

''नहीं, यही तो अफसोस है। अरेस्ट के बाद वह मेरे सम्मुख रिमांड (हवालात में निरुद्ध करने निमित्त मैजिस्ट्रेट की अनुमति) हेतु प्रस्तुत किया गया था। मेरा मन तो उसे तुरंत बेल देने का था मगर मामला काफी चर्चित और 'पालिटिकली हॉट था' इसलिए उसकी उम्र का खयाल कर मैंने केवल तीन दिन की पुलिस रिमांड एलाऊ की। परंतु अगली तारीख के पहले ही मेरा उस ज़िले से स्थानांतरण हो गया। मेरे बाद के न्यायाधिकारी ने ही उस पर निर्णय लिया होगा। उस लाचार बुड्ढे को तो छूट ही जाना चाहिए।'' फिर ठंडी साँस लेकर बोले, ''अगर...अगर अधिकारी ईमानदार हुआ तो।''

तभी एक सीनियर अधिकारी जो 'जुड़ीशियल आफिसर सर्विसेस' से थे, बोले, ''मैं ही वह अधिकारी हूँ जिसने उस केस में निर्णय दिया था।'' सभी को एकाएक साँप सूँघ गया। अधिकारी के सामने ही उसे भ्रष्ट कहने का न तो चलन हो पाया था, न ही साहस।

''तब तो आपने उस अभियुक्त को अवश्य ही छोड़ दिया होगा।'' कई लोग समवेत स्वर में बोल पड़े।

उस अधिकारी ने उनके सवाल पर ध्यान न देते हुए अपना कथन जारी रखा बोले, ''अपनी सर्विस के प्रारम्भिक वर्षों में मैं मैजिस्ट्रेट के रूप में भी काम कर चुका हूँ। इसलिए मैं पुलिस वालों की लाचारी और मजबूरियों को समझता हूँ। अभी-अभी जज साहब ने उक्त केस के चर्चित होने और 'पालिटिकली हॉट' होने का ज़िक्र किया था। यह एक निर्विवाद वास्तविकता है कि हम न्यायिक अधिकारियों पर भी समय-समय पर सामाजिक एवं राजनीतिक दबाव आते रहते हैं। ऐसी परिस्थिति में हमें भी अपना संतुलन बनाये रखने में तनाव हो जाता है; तो सोचिए कि पुलिस, जो प्रशासनिक, राजनीतिक शक्तियों के दबाव में हरदम रहती है, उसका संतुलित रह पाना कितना मुश्किल होता होगा। कभी-कभी इन दबावों के चलते उन्हें बिना तफ़्तीश किए थाने में ही बैठे-बैठे रिपोर्ट बनानी पड़ती है। ऐसी घटनाएँ 70 प्रतिशत मजबूरी में होती हैं। बाकी 30 प्रतिशत गलतियाँ लापरवाही और सुविधा-शुल्क के लालच की वजह से।''

इस केस में भी पुलिस पर बहुत दबाव था। एक दिन मैं बाबा विश्वनाथ के दर्शन कर के लौट रहा था कि रास्ते में चौक के थानेदार से मुलाक़ात हो गई। उसने शिष्टाचारवश चौक का मशहूर पान खिलाते हुए कहा, ''सर, इस केस में आपका फैसला चाहे जो भी हो, मेरी तो फजीहत तय है। यदि केस छूटता है तो लाचार अपाहिज को बेवजह फँसाने के अपराध में मेरा करेक्टर रोल खराब हो जाएगा। वहीं यदि सज़ा हो जाती है तो अभियुक्तगण इतने प्रभावशाली हैं कि उन पर केस चलाने के दंड स्वरूप मेरा स्थानांतरण निश्चित है।''

थानेदार की दयनीयता बताने के बाद जज साहब पुन: उक्त केस पर आए बोले, ''वैसे फ़ालिजग्रस्त लाचार वृद्ध द्वारा कत्ल के केस में अभियोजन का केस काफी स्ट्रांग था। बहुत से प्रत्यक्षदर्शी गवाह पेश किए गए थे, जिन्हें बचाव पक्ष गलत साबित नहीं कर पाया था। प्रस्तुत किए गए सभी गवाहों ने उस वृद्ध को बहुत ही सरहंग और अपराधी प्रवृत्ति का व्यक्ति बताया था। वहीं आरोपी के बचाव के सपोर्ट में मात्र फ़ालिज ग्रस्त होने की मेडिकल एविडेन्स थी।''

''डिफेंस द्वारा प्रस्तुत वकील ने डॉक्टर से पूछा कि क्या सत्तर वर्ष

का बूढ़ा दाहिने हाथ-पैर से लकवाग्रस्त आदमी के दाहिने हाथ में इतनी ताकत होगी कि वह भाला फेंक कर किसी का कत्ल कर सके?''

डॉक्टर ने कहा, 'नहीं'

''डॉक्टर अपनी जगह बिलकुल सही था। फिर भी आप सभी इस कानूनी तथ्य से परिचित होंगे कि मेडिकल विटनेस केवल सपोर्टिव एविडेंस मानी जाती है। अधिकतर मामलों में मेडिकल एविडेंस तभी मान्य होती है, जबतक वह प्रस्तुत किए गए अन्य साक्ष्य व केस हिस्ट्री को सपोर्ट करती है। वहीं, यह भी सत्य है कि कभी-कभी मेडिकल एविडेंस पर ही केस का पूरा दारोमदार निर्भर करता है। जैसा की इस केस में था । परंतु प्रस्तुत केस में मेडिकल एविडेंस और प्रत्यक्षदर्शी गवाह दोनों की दिशा एकदम उलट थी।''

फिर थोड़े दर्प भरे स्वर में धीरे-धीरे परंतु प्रभावपूर्ण स्वर में ''और ऐसे ही केसेज में न्यायिक अधिकारी का विवेक ही सर्वोपरि माना जाता है। आप सबका भी अनुभव होगा कि डॉक्टर लोगों को मेडिकोलीगल के समुचित प्रशिक्षण के बगैर ही उन्हें इस कार्य पर लगा दिया जाता है। अनुभवहीन नए डॉक्टरों से गलतियाँ होना स्वाभाविक है। इस केस में उपस्थित डॉक्टर साहब पोस्ट-ग्रेजुएट होते हुए भी सेवा में नए होने के कारण मुझे कम अनुभवी लगे।''

सभी अधिकारियों की उत्सुकता अपनी चरम सीमा पर थी। उन्होंने पूछा, ''फिर आपने क्या निर्णय लिया?''

''मैं अनिर्णय की स्थिति में था। मैंने दो एक पेशियों पर मात्र अगली तारीख दी। उसी समय दीपावली के अवकाश पर मेरा डॉक्टर बेटा घर आया। मैंने उससे पूछा कि क्या दाहिने शरीर से लकवाग्रस्त आदमी भाले से किसी का कत्ल कर सकता है?''

बेटा बोला, ''इस प्रश्न के समुचित उत्तर के लिए कुछ तथ्यों का जानना बहुत आवश्यक है। 1- वह दाहिने हाथ से काम करने वाला था या बाएँ से। यदि वह प्रारम्भ से ही लबड़हत्था है तो दाहिने भाग के लकवाग्रस्त होने पर भी वह बाएँ हाथ से भाला फेंक सकता है। 2- वहीं यदि वह दाहिने हाथ से काम करने वाला है और उसे लकवा लगे कई वर्ष बीत गए हों तो धीरे-धीरे उसका बायाँ भाग भी इतना सशक्त हो सकता कि वह ऐसा अपराध कर सकता है।''

''परंतु केस के इस चरण में अभियुक्त से पूछा कि वह बाएँ-हत्था तो नहीं है; बचाव पक्ष इसे सीधा आरोपित करने वाला (डायरेक्ट इंक्रीमिनेटिंग) प्रश्न मानेगा। अगले दिन ही न्यायालय के पूर्वाग्रह और पक्षपात के कारण केस ट्रांसफर की अर्ज़ी आ जाएगी। ऐसी दरख्वास्तों से न्यायिक अधिकारी का नाम खराब होता है'' मैंने कहा-

''इसे अन्य प्रकार से भी जाना जा सकता है। यदि अभियुक्त पढ़ा-लिखा है तो आप उसकी राइटिंग देख लें। लेखन ऐसी विशिष्ट गूढ़ विधा है जो कि मांसपेशियों के फाइन एडजेस्टमेंट (बारीक संतुलन) की आवश्यकता होती है। यदि उसके बाएँ हाथ की राइटिंग ठीक है तो वह बाएँ-हत्था है। इसके अलावा यदि फ़ालिज के बाद उसकी आवाज़ में कोई लड़खड़ाहट नहीं है तब भी वह बाएँ हाथ से काम करने वाला है; क्योंकि, साधारणतया दाहिने अंग में पैरालिसिस होने पर दाहिने हाथ से काम करने वालों की आवाज़ भी बंद हो जाती है।'' बेटे ने गूढ़ जानकारी देते हुए कहा।

''इसके बाद तो आपका प्रश्न काफी आसान हो गया होगा'' एक ने कहा।

''हाँ, अगली पेशी पर पूछने पर पता चला कि फालिज़ के समय से अबतक उसकी आवाज़ में कोई परिवर्तन नहीं हुआ और अभियुक्त बीए पास है । तब मैंने उसे फाइल पर अंगूठा लगाने के बजाय दस्तखत करने को कहा।'' उसके दस्तखत एक दम सुस्पष्ट थे! इसका मतलब वह व्यक्ति लाचार नहीं था।

मैंने उपरोक्त सभी मेडिकल तथ्यों के आधार पर उसे बाएँ हाथ से काम करने वाला मानते हुए, उसे सज़ा सुना दी।''

''कोई बलवा तो नहीं हुआ?'' अधिकारियों ने पूछा?

''हाँ, बलवा तो अवश्य हुआ मगर अदालत के बाहर। इस बलवे ने पब्लिक, वकील साहबान व मेरे वरिष्ठ अधिकारियों को भी मेरी निष्पक्षता व निर्णय के सही होने का विश्वास दृढ़ कर दिया।''

सभी अधिकारी उत्सुकता से सुन रहे थे।

'' हुआ यूं कि, अभियुक्त वास्तव में बहुत ही दबंग और अपराधी प्रवृत्ति का था। सज़ा पाकर वह मन ही मन खिसिया गया था। जैसे ही वह अदालत से बाहर निकला उसे विरोधी पार्टी का पैरोकार दिखा जो

किसी बात पर मुस्करा रहा था। अभियुक्त विरोधी को हँसता देख एकाएक हिंसक हो उठा। कमर में पुलिस की रस्सी बँधी होने के बावजूद उसने लपक कर बाएँ हाथ से ही विरोधी को गले से पकड़ कर गिरा दिया और लात घूंसे से उसे बुरी तरह घायल कर दिया। बड़ी मुश्किल से पुलिस वालों ने उस पर काबू पाया।''

कई महीनों बाद उसके वकील ने बताया कि हम हाईकोर्ट में अपील में भी नहीं गए। क्योंकि अदालत परिसर में अभियुक्त का हिंस्र होने की इस घटना की वजह से वहाँ भी अभियुक्त के खिलाफ ही फैसला आने की संभावना थी।''

एक अधिकारी ने रश्क भरी आवाज़ में कहा, ''सर, यदि आपका बेटा डॉक्टर न होता तो आप भी शायद यह निर्णय नहीं दे पाते।''

जज साहब श्रद्धा से सर नवाते हुए बोले, ''सब बाबा विश्वनाथ की कृपा है।''

❐❐❐

ब्रह्मदत्त

सरस्वती विद्यालय के प्रिन्सिपल ब्रह्मदत्त बाजपेयी जी मुँह में चाँदी का चम्मच लेकर पैदा नहीं हुए थे। उनका जन्म गाँव के एक पुरोहित परिवार में हुआ था। परिवार में कर्म-कांड के अलावा शास्त्रों का अध्ययन व ज्ञान का भी संस्कार था। अतएव गाँव में उन्हें सम्मान की कमी नहीं थी, किन्तु धन उस अनुपात में सुलभ नहीं था। इसका कारण एक तो ग्रामीण जजमानों की विपन्नता और दूजा विप्र देव के स्वयं के संस्कार थे, जो भोले ग्रामीणों को धर्म के नाम पर लूटने से रोकते थे। हालांकि, धर्म के नाम पर भोली अशिक्षित ग्रामीण जनता के शोषण की परंपरा हमारे समाज में अनजानी नहीं है। इसी कारण से बाजपेयी जी के यहाँ संपन्नता का अभाव था। बाजपेयी जी के पिता व पूरा परिवार संतोषी था, इसलिये सुखी भी था। वह गाँव के साहूकार के घर का दृष्टांत अपनी 'कथा वाचन' में देते थे- ''मात्र धन से कभी कोई सुखी नहीं हो सकता है। लक्ष्मी चंचला है, इसलिये मन की चंचलता भी साथ लाती है। बगैर संतोष के सुख कहाँ? संतोषम् परमं सुखम्'। सुखी व्यक्ति धनी हो सकता है पर असंतुष्ट धनवान सुखी नहीं हो सकता। यह सनातन सत्य है।''

वहीं साहूकार का परिवार इस कथा पर व्यंग्य करते हुए कहता था की पंडित अपनी दरिद्रता में खुश और हम अपनी अमीरी में प्रसन्न। मृत्यु दोनों की होनी है, चाहे अमीरी में मरे या गरीबी में।

दोनों को अपनी उपलब्धियों पर गर्व था। एक को अपने संस्कार और संतोष पर तो दूसरे को संपन्नता पर। एक के घर में संध्या होते ही भक्ति के स्वर उठते थे तो दूसरे के यहाँ सुरा पात्रों की खनक। पंडित और साहूकार दोनों गाँव के अलग-अलग वैचारिक ध्रुव थे। दोनों का सम्मान था। एक को जुहार मिलती थी तो दूसरे को पैलगी। हालांकि साहूकार भी पंडित जी को पैलगी बोलता था, पर व्यंग्य भरी मुस्कान के साथ। दोनों ही जीवन के लिए अपरिहार्य थे। एक की परिवार के सभी मांगलिक कार्यों में ज़रूरत पड़ती तो ज्यादातर घरों के मांगलिक कार्य साहूकार के ऋण के बगैर सम्पन्न ही नहीं हो सकते थे।

संतोषी के घर में सरस्वती की कृपा अवश्य होती है; सो पंडित जी का पुत्र ब्रह्मदत्त संस्कारी होने के साथ पढ़ने में भी कुशाग्र था। अक्षरारंभ के पहले ही उसे तमाम श्लोक, गीत यहाँ तक की सात तक के पहाड़े (आज की भाषा में टेबेल्स) कंठस्थ थे। मिडिल स्कूल पास करते-करते उसे इतनी समझ आ गई कि ग्राम्य जीवन में उसके लिए पुश्तैनी पुरोहिती के अलावा जीविका के अन्य साधन उपलब्ध नहीं हो सकते थे। ईश्वर पिताजी को शतायु करे, पुरोहित बनकर वह अपने पिता की जजमानी ही बांटेगा! वंश-वृद्धि तो होगी पर उसके अनुपात में आय में वृद्धि संभव नहीं है। फिर, उसका ध्येय तो और आगे पढ़ने का है। इन विचारों ने उसे शहर की ओर जाने को प्रेरित किया।

माँ कहती कि ''दुई रोटी तो गांवौ म मिल जायी, यहिके बदे इत्ती दूर बिदेस जाय कि कौन जरूरत?'' पिता चुप थे। वह अपनी और अपने व्यवसाय कि सीमाओं से परिचित थे। पढ़ लिख कर बेटा शहर में किसी पद पर लग जाये तो पारिवारिक आय की वृद्धि में भी सहायक होगा।

पुत्र-मोह में व्यथित पंडित जी ने पुत्र भविष्य को दांव पर नहीं लगाया। भारी मन से पुत्र को शहर जाने कि अनुमति दे दी। रोते हुए माँ ने दूध से साने आटे कि पूड़ियाँ बांध दीं (गोरस मिलने से भोजन में मार्गदोष या छूत नहीं होगा)। गुड़, सतुए की पोटली अलग से दी थी। चलते समय चुप्पे से दो अठन्नियाँ बेटे कि जेब में डालना नहीं भूलीं। पिता केवल मार्गव्यय तथा अपने एक परिचित के लिए पत्र के अलावा कुछ नहीं दे सके; हाँ, साहूकार ने अवश्य दस-दस के दो नोट दिये। बेटे का संकोच देख कर बोले- ''रख लो विदेश में विद्या से अधिक धन की आवश्यकता होती है।'' बेटे ने दबी आवाज़ में कहा, ''चाचा, सूद दे की हमार हैसियत नहीं है।''

गाँव वालों को अचंभा हुआ जब साहूकार ने उसे गले लगाते हुए कहा, ''ससुरे लेले। ज़िंदगी में पहली बार तुझे ही बगैर सूद के पैसा दे रहा हूँ। सूद क्या तुझसे मूल भी नहीं माँगूँगा। इसे तू मेरा आशीर्वाद समझकर रख ले।''

लोगों ने भी समझाया कि बेटा रख लो। पढ़-लिख कर बड़े आदमी बनोगे तो शहर में अपने गाँव का नाम भी तो ऊंचा होगा। आती लक्ष्मी को मना मत करो।

शहर में पिता के परिचित ने उसका दाखिला पास के राजकीय विद्यालय में करा दिया और उनकी ही बदौलत उसे छात्रावास में भी

जगह मिल गई। माँ के दिये सतुए की वजह से शहर में साहूकार के रुपये बहुत दिन तक बचे रहे और छात्रावास की फीस के काम आए। स्कूल की फीस माफ हो गई। मिडिल स्कूल में अच्छे अंको की वजह से व 'निर्धन छात्र-कोष' से मिले पैसों से छात्रवास में भोजन का प्रबंध हो गया।

चन्दन जहां भी रहे अपनी खुशबू अवश्य बिखेरता है। 'गुप्त जी' का लिखा -

''जितने कष्ट-कंटकों में हैं, जिनका जीवन सुमन खिला।
गौरव, गंध उन्हें उतना ही, यत्र-तत्र सर्वत्र मिला''

इस ग्रामीण सुमन की सुगंध का एहसास शहर क्या सारे प्रांत को तब मिली जब हाई-स्कूल की परीक्षा का रिज़ल्ट निकला। सारे समाचार पत्रों में छपा ''राजकीय कालेज रायबरेली के छात्र ब्रह्मदत्त ने प्रदेश की मेरिट में तृतीय स्थान प्राप्त किया।''

ब्रह्मदत्त का जब रिज़ल्ट निकला तब वह अपने गाँव में था। वहाँ उसे केवल इतना ज्ञात हो पाया की वह अच्छे नंबरों से हाई-स्कूल पास हुआ है। पंडित जी के घर में तो होली, दिवाली एक साथ आ गई। सत्य-नारायण की कथा हुई पूरे गाँव में प्रसाद में बताशे बटे। कथा सुनने आए पड़ोसियों को छोटे दोन्ने में पंजीरी और छोटी कुल्हिया में पंचामृत दिया गया। गाँव वालों ने कहा की पंडित ने लड़के के पास होने पर हैसियत से ज्यादा खर्च कर दिया। साहूकार के यहाँ खुद पंडित और ब्रह्मदत्त थाली भर पंजीरी और गिलास में पंचामृत लेकर पहुंचे। पंडित ने साहूकार को प्रसाद दिया। ब्रह्मदत्त कृतज्ञता से उनके पैर छूने को हुआ कि साहूकार ने बीच में ही पकड़ लिया और गले लगाते हुआ बोला, ''तू मैट्रिक हो गया, गाँव का नाम रोशन किया मैं इसी में प्रसन्न हूँ। पाँव छू के काहे को नरक भेजना चाहता है मुझको।''

ब्रह्मदत्त बोला, ''चाचा आपके दिये रुपयों ने बहुत सहारा दिया वरना शहर में एक हफ्ते से ज्यादा न रुक पाता।''

साहूकार गिलगिल होते हुए ''कैसे न रुक पाते तुम्हारे पिता ही तो कहते हैं कि लक्ष्मी सरस्वती की अनुगामिनी है। जैसे-जैसे तुम और पढ़ोगे लक्ष्मी भी आयेगी।''

पंडित बेटे को लेकर सारे गाँव घूमा। लौट के घर आने पर पंडिताइन ने बेटे को काला टीका लगाया, नज़र उतारी भगवान् की देहरी पर सिर टेकवा कर ही आश्वस्त हुई कि अब नज़र उतर गई।

गर्मियों की छुट्टियों के बाद कालेज आकर ब्रह्मदत्त ने ग्यारहवें में दाखिला लिया। उससे सभी मुस्करा कर मिल रहे थे। फीस वाले बाबू ने सबसे पहले उसकी ही एडमिशन फीस जमा करते हुए बोले, ''अब तो तुमको डबल छात्रवृत्ति मिलेगी। अब शनिवार की शाम मेस बंद होने पर तुम्हें भूखा नहीं रहना पड़ेगा।''

ब्रह्मदत्त को कुछ समझ में नहीं आया। वह केवल मुस्करा कर रह गया।

अगले दिन सुबह प्रार्थना के बाद जब ब्रह्मदत्त का नाम पुकारा गया और उसे प्रिन्सिपल ने सामने आने को कहा तो ब्रह्मदत्त बहुत डर गया। क्योंकि प्रार्थना के बाद शैतान लड़कों की सबके सामने प्रिंसिपल केनिंग (छड़ी से पिटाई) करते थे। उसे लगा कि उससे कोई बड़ी गलती हो गई जिससे आज उसकी भी केनिंग होने वाली है। वह डरते-डरते आगे आया।

पर यह क्या ! प्रिन्सिपल साहब बोले, ''तुमने कालेज का नाम रौशन कर दिया ब्रह्मदत्त। आज तक इस कालेज से कोई मेरिट में नहीं आया था'' कहते हुए उसे गले लगा लिया।

तब ब्रह्मदत्त को पता चला कि मेरिट का मतलब सूबे में अधिकतम अंक पाना होता है; और यह छात्र के लिए एक विशेष उपलब्धि है।

सफलता का भी अपना एक अलग नशा होता है। जिसको इसकी लत लग जाती है तो छोड़ती नहीं। पर यह घातक भी हो सकती है...यदि व्यक्ति अहंकार से ग्रसित हो जाय तो।

गाँव में पले, बढ़े, भोले ब्रह्मदत्त को इतनी समझ ही नहीं थी कि वह अहंकार कर सके। परंतु अहंकार की थोड़ी मात्रा ऊंचाई छूने के लिए आवश्यक भी होती है। छात्रवृत्तियों के सहारे पढ़ा, हमेशा टाप करने वाले ब्रह्मदत्त में आकांक्षाओं की ऊंची उड़ान नहीं थी। उसे गाइड करने वाला भी कोई नहीं था। इसे विधि का विधान ही कहेंगे कि इतना मेधावी छात्र जो कि प्रशासनिक अधिकारी या विश्वविद्यालय का शिक्षक भी हो सकता था, मात्र इंटर कालेज का साधारण टीचर बनकर रह गया।

उसके माता-पिता लाख मनाने के बाद भी गाँव में ही रहे। वह अपनी पत्नी और एक मात्र पुत्री के साथ शहर में रहा।

अपने पैरों पर खड़े होने के बावजूद ब्रह्मदत्त में आडंबर नाम की कोई चीज़ नहीं थी। साधारण वेषभूषा, गर्मियों की छुट्टियों और होली में

हमेशा गाँव में रहना, हर एक से मिलना व हर बार वह साहूकार के यहाँ जाकर उनसे अपना आदर और कृतज्ञता अवश्य प्रदर्शित करता था।

ब्रह्मदत्त ने छात्रों की पढ़ाई के साथ ही उनके सर्वांगीण विकास पर भी ध्यान देना शुरू किया। उसकी पहल पर कालेज में वार्षिक खेल प्रतियोगिता और 'कालेज दिवस' मनाया जाने लगा। पहले ही कालेज दिवस पर शहर में नवनियुक्त एसडीएम को मुख्य अतिथि के रूप में आमंत्रित किया गया। कार्यक्रम का संचालन ब्रह्मदत्त ने किया। मुख्य अतिथि उससे प्रभावित हुए। जब प्रिंसिपल ने उन्हें बताया कि ब्रह्मदत्त ने हमेशा परीक्षाओं में सर्वोच्च अंक पाये, तो वह आश्चर्यचकित रह गए। उन्होंने चलते समय ब्रह्मदत्त से अगले हफ्ते मिलने को कहा।

इतने बड़े अधिकारी से मिलने में ब्रह्मदत्त काफी आतंकित था; फिर भी वह गया। अधिकारी ने उससे बड़े प्रेम से बात की और राय दी कि उसे सिविल सर्विस कि प्रतियोगिता में अवश्य भाग लेना चाहिए। देश को ऐसी सेवाओं में उसके जैसे लोगों की ज़रूरत है। उन्होंने कमीशन के फार्म पहले से ही मंगा रखे थे, सो अधिकारी ने अपने सामने ही ब्रह्मदत्त से फार्म भरवा कर स्वयं ही अपने चपरासी के हाथ पोस्ट भी करा दिया।

फिर तो ब्रह्मदत्त को तैयारी भी करनी पड़ी। उसके सफल होने की आदत ने उसे पहले ही अटेम्प्ट में 'पीसीएस- जे' में चयनित करा दिया।

आज भी गांव में लोग सुख और दु:ख को कर्मों का फल मानते हैं।

जब से साहूकार ने पंडित के बेटे (ब्रह्मदत्त) को शहर में पढ़ने के लिए 20 रुपये की सहायता दी तभी से साहूकार के व्यापार में अभूतपूर्व वृद्धि होने लगी। पैदल या साइकिल पर चलने वाला साहूकार क्रमश: मोटरसाइकिल, सेकेंड हैंड कार से होते हुए अब नई विदेशी कार पर चलने लगे। बढ़ती लक्ष्मी से उनका सम्बोधन भी 'साहूकार' से अब 'सेठ जी' हो गया था।

लोग जब उनको याद दिलाते की मात्र 20 रुपया एक ब्राह्मण को दान करने से तुम्हें कितना लाभ हुआ। तो वह विनोद पूर्वक कहते, ''अरे भाई, साहूकार हमेशा साहूकार ही रहता है। वास्तव में मैंने मात्र बीस रुपये का दान नहीं किया।'' फिर वह अपनी साहूकारी गणित समझाता ''देखो 20 रुपये का 12 आने ब्याज के हिसाब से एक साल का सूद 15 रुपया हुआ, जो मैंने ब्रह्मदत्त से नहीं लिया, फिर इस मूल और सूद

पर अगले साल इसी ब्याज की दर से कितना सूद और हो गया। इस प्रकार, मेरा दान हर साल चक्रवृद्धि दर से बढ़ता ही जा रहा है। भगवान् भी अपना हिसाब एक बनिए की तरह ही रखता है; यही वजह है कि हर साल मेरा व्यापार भी बढ़ता जा रहा है। इसमें आश्चर्य कैसा?'' इसके बाद सभी हँसने लगते।

शाम को सोमरस कि धुन में अपने मित्रों के बीच सेठ जी ने बड़े अफसोस से कहा, ''क्या बताऊँ, मैं तो कई बार पंडित और पंडित के बेटे से कहता हूँ कि भाई मुझसे थोड़ी और मदद ले लो। मगर पंडित को यह गवारा नहीं।''

परंतु भगवान् ने सेठ को एक बार फिर पंडित की मदद करने का मौका दे ही दिया।

हुआ यों कि-

पंडित का बेटा जज बन गया यह सूचना बिजली की तरह तेज़ी से गाँव पहुंची। सभी खुशी से नाच उठे। पंडित को तो कुछ समझ ही नहीं आ रहा था। बुढ़ापे में ज्यादा खुशी भी झेली नहीं जाती। पंडित जी को हार्ट अटैक पड़ गया।

इसके पहले कि ब्रह्मदत्त पिता को शुभ समाचार देता, पिता स्वयं सेठ कि नई गाड़ी में लदकर शहर के बड़े अस्पताल पहुँच गए।

पर, अब पंडित जी एक मुदर्रिस के बाप न होकर जज साहब के पिता थे, सो अस्पताल में मिली वीआईपी सेवाओं कि बदौलत जल्दी ही चंगे होकर बेटे के बंगले पर स्वास्थ्य-लाभ करने लगे। हृदय विशेषज्ञ के परामर्श के अनुसार 6 हफ्ते के आराम के बाद पंडित जी को अपने गाँव की याद आने लगी। बेटे ने बहुत रोका पर पन्डित जी ने कहा, ''बेटा, मेरे न रहने पर गाँव में सब धर्म-कर्म बंद पड़े होंगे। सोचो पितृ-पक्ष नजदीक है मेरे गाँव में न होने से तर्पण कौन कराएगा?

लोग जीवित माता-पिता की चाहे जितनी उपेक्षा करें पर मरने के बाद श्राद्ध, तर्पण में कोई कसर नहीं रखते।

बेटे ने समझाया कि अब उन्हें उपरोहिती नहीं करनी चाहिए। अपने बेटे को भी तो माँ-बाप की सेवा करने का अवसर देना चाहिए। पर पंडित जी नहीं माने। पितृ-तर्पण न हो! यह बात पंडित जी को असह्य लगती थी। सो, लगातार दवा लेने और डॉक्टर द्वारा बताई नियमित दिनचर्या करते रहने का आश्वासन दे पंडित जी गाँव लौट गए। गाँव लौटने के लिए भी गाँव के सेठ जी ने गाड़ी भेज दी थी।

अब सेठ जी गाँव छोड़कर शहर में ही पूर्ण रूप से निवसित हो चुके थे।

सेठ जी साल में एक दो बार जज साहब के यहाँ अवश्य हो लिया करते। जब भी जाते वह ब्रह्मदत्त को ऊपरी आमदनी के फायदे और दक़ियानूसी ईमानदारी के नुकसान अवश्य गिनाते। ब्रह्मदत्त अब भी अपने पिता द्वारा दिये संस्कारों पर अडिग था। इसमें उसकी अर्धांगिनी का भी पूरा योगदान था। सत्य है कि यदि पत्नी सहयोग न करे तो पति की ईमानदारी पर टिके रहना संभव नहीं है। ब्रह्मदत्त को सेठ जी की बातें सुनकर प्रेमचंद की 'नमक का दरोगा' कहानी की याद आ जाती। परंतु वह शिष्टतावश केवल सुनता या मुस्करा कर रह जाता।

ब्रह्मदत्त तो दूसरे ज़िले में तैनात था; सेठ जी अपने ज़िले के सभी आला अधिकारियों के यहाँ साल में दो तीन बार अवश्य चक्कर लगा लेते थे। जब भी अधिकारी के यहाँ जाते, खाली हाथ नहीं जाते। समय के साथ उनके 'गिफ्ट्स' महंगे होते जाते। फिर एक समय यह भी आता की सेठ जी मेम साहब को होली-दिवाली पर नगद रकम दे देते की अपनी ज़रूरत के हिसाब से स्वयं अपने लिए गिफ्ट ले लें। मैं कहाँ बाज़ार में शॉपिंग करता घूमूँगा।

वहीं कुछ अधिकारी सीधे 'कैश' पर आ जाते थे। यह सब सेठ जी दान दक्षिणा के भाव से नहीं करते। इसे वह अपना निवेश (इनवेस्टमेंट) मानते थे...नतीजा- सेठ जी को दारू के ठेके आसानी से मिल जाते थे। इस 'दुनियादारी' की बदौलत चार-पाँच जिलों के सारे ठेके सेठ जी या उनके किसी चेले के नाम हो गए। वह आबकारी तबके में 'दारूशाह' के नाम से पहचाने जाने लगे।

सेठ जी के ज़िले में नए ज़िला मजिस्ट्रेट तैनात हुए, जो अपनी ईमानदारी के लिए विख्यात (सेठ की दृष्टि में कुख्यात) थे। सेठ जी की उनके पास डाली लेकर जाने की हिम्मत नहीं पड़ती, मगर होली, दीवाली कलेक्टर साहब के यहाँ सलाम ज़रूर बजा आते। जिलाधिकारी की निगाह में उनकी छवि एक सुसभ्य व्यापारी की बन गई थी, जिसे कि उनके मातहत पुख्ता किए रहते।

एक बार सूबे के मुख्य सचिव ने कोई महत्त्वपूर्ण बैठक के लिए सभी शहरों के डीएम कि मीटिंग बुलाई। डीएम साहब राजधानी के लिए अपनी सरकारी एम्बेसडर से चले। मगर दुर्भाग्य से उनकी गाड़ी रास्ते में ही खराब हो गई। वह मोबाइल या वायरलेस का ज़माना नहीं था। सो

कलेक्टर साहब रास्ते में ही फँस गए। पहुंचना ज़रूरी था, कलेक्टर साहब चिंतित थे; तभी एक शानदार गाड़ी उनके पास आकर रुकी उसमें से अपने सेठ जी फर्शी सलाम लगाते हुए अवतरित हुए।

''हुज़ूर, रास्ते में कैसे खड़े हैं। कोई चेकिंग वगैरह है क्या, सरकार?'' सेठ जी ने कहा।

''नहीं, मुझे इम्पारटेंट मीटिंग के लिए लखनऊ जाना था। रास्ते में ही गाड़ी खराब हो गई। अब कैसे पहुँचूँ यही सोच रहा हूँ।'' कलेक्टर साहब ने लगभग परेशान होते हुए कहा।

''कैसी बात करते हैं सरकार, मेरी गाड़ी भी तो सरकार की ही है। आप मेरी गाड़ी से लखनऊ निकल लें, मैं आपकी गाड़ी ठीक करा कर बंगले पर पहुंचा दूंगा'' सेठ जी ने यों कहा जैसे उनकी गाड़ी का उपयोग कर कलेक्टर साहब सेठ जी पर ही उपकार करेंगे।

कुछ देर विचार करने के बाद कलेक्टर साहब ने सेठ जी का प्रस्ताव स्वीकार कर लिया। कलेक्टर साहब बोले ''ठीक है, मैं आपकी गाड़ी से ही निकल जाता हूँ।'' फिर अपने ड्राइवर से बोले, ''तुम गाड़ी ठीक कराकर गाड़ी बंगले पर खड़ी कर देना।''

सेठ जी ने टोका, ''हुज़ूर, अपना ही ड्राइवर ले जाएँ मेरा ड्राइवर राजधानी की सड़कों और शासन के गलियारों से अपरिचित है, इससे आपको कष्ट होगा। और हुज़ूर, आप पहले काफी लेट हो चुके हैं।''

कलक्टर साहब को सेठ जी की राय में दम महसूस हुआ। उन्होंने कहा ठीक है और अपने ड्राइवर के साथ सेठ जी की गाड़ी पर सवार हो राजधानी को चल दिये।

कलेक्टर साहब सरकारी एम्बेसडर पर चलने के आदी थे। उन्हें सेठ जी की इंपोर्टेड कार में मज़ा आ गया। उन्होंने मन ही मन विचार किया कि भारत की सड़कें इतनी खराब नहीं हैं। स्वदेशी गाड़ियों का भी उतना ही दोष है, क्योंकि उनके शाक एब्जारबर उतने अच्छे नहीं हैं। साहब सेठ जी के अनुग्रह से अधिक अभिभूत थे अथवा सेठ की लग्ज़री गाड़ी से, यह तय नहीं था। फिर भी वह मीटिंग में ऐन वक़्त पहुँच ही गए।

जो अधिकारी ज़रा भी देर से पहुंचे उनकी बड़ी मलामत हुई। पूरे सूबे का मामला था इसलिए मीटिंग लगातार दो दिनों तक चली। तीसरे दिन शाम जब साहब घर पहुंचे, तब तक सेठ जी ने उनकी सरकारी

गाड़ी दुरुस्त ही नहीं बल्कि रंग-रोगन करा कर बंगले पर खड़ी कर दी थी। साहब एक बार फिर प्रसन्न हुए।

इस बात को छह-सात महीने बीत चुके होंगे, कि एकाएक साहब को नरकोटिक्स विभाग के डिप्टी एसपी का नोट मिला। वह साहब से मिलना चाहता है। साहब ने सामने बैठे लोगों से मिलने के बाद डिप्टी एसपी को बुला लिया। डिप्टी एसपी ने सैल्यूट करने के बाद बड़ी विनम्रता से कहा, ''हुज़ूर, बहुत साधारण सी बात के लिए आपको तकलीफ देने आया हूँ।''

साहब बोले, ''कहिए''

''हुज़ूर आपकी अमुक नंबर की सरकारी गाड़ी ने अमुक तारीख को बाराबंकी के ज़िले के 15 चक्कर लगाए। तफ़्तीश में पता चला कि गाड़ी वहाँ के कुख्यात ड्रग-माफिया के यहाँ देखी गई।'' फिर कुछ देर रुक कर बोला, ''हुज़ूर का क्या हुकुम हैं?''

यह सुन कर कलेक्टर साहब को गुस्से के साथ पसीना भी आ गया। उन्होंने उन तारीखों पर गौर किया तो याद आया कि उस दिन तो वह मुख्य सचिव कि मीटिंग में थे बोले, ''क्या बकते हो! उस दिन तो मैं मुख्य सचिव के साथ मीटिंग में था। मेरी गाड़ी बाराबंकी कैसे पहुँच सकती है?''

डीएसपी ने फिर सलाम किया बोला, ''तो क्या हुज़ूर, आपका ड्राइवर, आपको बताए बगैर ही चक्कर लगा आया?''

''नहीं, मेरा ड्राइवर ऐसा नहीं कर सकता'' फिर उन्हें एकाएक याद आया कि उस दिन तो उनकी गाड़ी खराब थी। जिसे ठीक कराने सेठ जी ले गए थे। उन्हें सेठ जी का गेम समझ आ गया। मन ही मन उन्होंने सेठ को गाली दी और डीएसपी को बैठाकर शांति से पूरा ब्योरा बताया।

डीएसपी कि सलाह से उसी दिन कलेक्टर साहब ने एफआईआर लिखाई- मेरी गाड़ी अमुक तारीख को रास्ते में खराब हो गई थी, जिसे सेठ ...को 'टो करवा' (खिंचवा कर) कर गैराज पहुंचाने की ज़िम्मेदारी दी गई थी। सेठ... रास्ते में ही मिल गए थे। विश्वस्त सूत्रों से ज्ञात हुआ है कि इस घटना के दूसरे दिन मेरी सरकारी गाड़ी द्वारा किसी ने बाराबंकी के कई चक्कर लगाए। मुझे पूरा अंदेशा है कि मेरी सरकारी गाड़ी का इस्तेमाल ड्रग-तस्करी के लिए किया गया होगा।

यह सूचना तत्काल ही नारकोटिक्स विभाग बाराबंकी को प्रेषित कर दी जाय। बाराबंकी का नारकोटिक विभाग जांच कर देखे कि मेरी गाड़ी का दुरुपयोग तो नहीं हुआ।''

× × × × ×

ब्रह्मदत्त जज कुर्सी पर अदालत में बैठे मुकदमों का निस्तारण कर रहे थे, तभी अभियोजन पक्ष के वकील कि आवाज़ आई, ''अभियुक्त... निवासी... आरोप- ड्रग-तस्करी।''

ब्रह्मदत्त को अभियुक्त का नाम और निवास कुछ जाना पहचाना लगा। उन्होंने नज़र उठा कर अभियुक्त की ओर देखा तो एकदम से खड़े हो गये... सामने सेठ जी हथकड़ी पहने खड़े थे।

जज साहब को खड़ा होता देख सारी इजलास खड़ी हो गयी। सेठ जी ने बड़ी विनम्रता से जज साहब का अभिवादन किया। ब्रह्मदत्त फौरन ही कुर्सी की गरिमा का ध्यान रखते हुए अपनी कुर्सी पर बैठ गए। संयत होकर उन्होंने महसूस किया कि सेठ जी के चेहरे पर 'स्मित ह्रास की रेखा' थी।

आरोप गैर-ज़मानती था सो पेशकार ने सूक्ष्म आदेश पहले से ही लिख रखा था 'जमानत नामंज़ूर।'

यह जज साहब का ही निर्देश था। जिससे यह सन्देश जाए कि जज साहब का मात्र कानून से अलग कोई रास्ता नहीं है।

सेठ जी की जमानत खारिज हो गई। उन्हें जेल भेज दिया गया।

ब्रह्मदत्त इसके बाद अदालत में नहीं बैठ पाये और चैंबर में चले आए। उनके मन में अंतर्द्वंद्व कि आँधी चल रही थी- कितने एहसान हैं सेठ जी के स्वयं मुझ पर। उनकी सहायता के बगैर क्या ब्रह्मदत्त भूखे पेट एक महीना शहर में गुज़ार पाते? संभवत: नहीं। यदि पिता को सेठ जी अपनी गाड़ी पर लादकर अस्पताल नहीं पहुंचाते तो क्या पिता जी का जीवन बच पाता...?

ऐसे में ब्रह्मदत्त का पहले से लिखा 'जमानत नामंज़ूर' पर दस्तखत कर देना कृतघ्नता तो नहीं है- आदि आदि।

जज साहब उसके बाद कोई और न्यायिक कार्य नहीं कर पाये। सभी केसेज को अधीनस्थ जज के यहाँ स्थानांतरित कर घर वापस लौट आए। महिलाएं, खासकर पत्नियाँ अपने पतियों की मुखमुद्रा आसानी से समझने में समर्थ होती हैं; पति चाहे लाख छुपाने की कोशिश करे। इसी स्त्री सुलभ बुद्धि से ब्रह्मदत्त की पत्नी भी जज साहब का मनोद्वंद्व समझ

तो गई, मगर कुछ देर तक उसने कोई प्रश्न नहीं किया। कभी-कभी पुरुष को मानसिक उथल-पुथल को संयत करने का समय अवश्य देना चाहिए ताकि वह जीवनसाथी से अपनी प्राब्लम पूरे विश्वास से शेयर कर सके।

चाय पानी करने के बाद स्वयं ब्रह्मदत्त ने अपनी दुविधा पत्नी को बताई। पत्नी के लिए यह दुविधा का कोई कारण ही नहीं लगा।

''यह निर्णय तुम्हें ही लेना होगा कि, अपने व्यक्तिगत जीवन के एहसान या शत्रुता का प्रतिफल देने के लिए न्यायाधीश की कुर्सी उचित मंच है? वहाँ ब्रह्मदत्त तो होता ही नहीं। उस कुर्सी पर मात्र न्यायाधीश विराजता है जिसको सामने लाये गए तथ्यों के अनुसार ही निर्णय लेना होता है।''

यह कह कर पत्नी कुर्सी के पीछे से ब्रह्मदत्त के बालों में हल्के हाथों से सहलाने लगी। ब्रह्मदत्त को रौशनी दिख चुकी थी, उसका अंतर्द्वंद्व समाप्त हो चुका था। उसने धीमे से आँखें बंद कर लीं।

सेठ जी के विरुद्ध यह केस लगभग दो वर्षों तक चला। इस बीच उसके पिता कई बार ब्रह्मदत्त के यहाँ आए पर, सेठ या उनके केस के बारे में उन्होंने कोई चर्चा नहीं की। परंतु जिस दिन ब्रह्मदत्त को सेठ जी के केस में निर्णय सुनाना था, उसके पिता उसे कोर्टरूम में बैठे दिखे। उसने चुपचाप अपने पिता पर से दृष्टि हटा ली।

सभी जान चुके थे कि आरोपी का जज साहब से कुछ प्रगाढ़ संबंध है। इसलिए सभी को निर्णय सुनने की उत्सुकता थी। सेठ जी चेहरे पर मृदु मुस्कान लिए कटहरे में खड़े थे। उनके चेहरे पर किसी भी प्रकार का तनाव नहीं था; हाँ, उत्सुकता अवश्य परिलक्षित हो रही थी।

जज साहब ने गंभीर स्वर में अपना निर्णय पढ़ना शुरू किया-''सारे अभियोग, अभियोजन और बचाव पक्ष के वकीलों द्वारा रखे तथ्यों की भली-भांति विवेचना करने के बाद अदालत इस निर्णय पर पहुंची है कि सेठ... पर अभियोजन पक्ष के द्वारा लगाए गए सभी आरोप...'' यहाँ जज साहब ने रुक कर थोड़ी देर अपने पिता की ओर देखा और एक-एक शब्द पर ज़ोर देते हुए बोले, ''अदालत अभियोजन द्वारा लगाए गए सभी आरोपों को सही मानती है। अभियुक्त को ड्रग-तस्करी, शीर्ष प्रशासनिक अधिकारी को धोखा देने व इस कुकृत्य में सरकारी गाड़ी का प्रयोग करने के जुर्म में छह वर्ष सश्रम कारावास की सज़ा सुनाती है। अभियुक्त या उसके विद्वान वकील चाहें तो इस निर्णय के विरुद्ध ऊपरी अदालत में, निश्चित अवधि के भीतर, अपील कर कर सकते हैं।''

निर्णय सुनाने के बाद जज साहब चैंबर में चले गए। इस बार उनके चेहरे पर कोई अंतर्द्वंद्व नहीं था। उन्होंने अर्दली को बुलाकर कहा, ''मेरे पिता अदालत में बैठे हैं; उनसे बोलो कि यदि वह घर चलना चाहें तो मेरे साथ चल सकते हैं।''

अर्दली जज साहब के पिता को जानता था। ब्रह्मदत्त अपने पिता को लेकर घर आ गये। रास्ते में पिता और पुत्र के बीच कोई वार्ता नहीं हुई।

घर पहुँचने पर ब्रह्मदत्त कि पत्नी ने गौर से पति का चेहरा देखा-कोई तनाव नहीं दिखा। ससुर पर दृष्टि पड़ते ही, सिर पर पल्ला लेकर उसने ससुर के चरण छुए और स्वागत कर अंदर लिवा ले गई।

शाम को लॉन में अपने पिता के साथ बैठे ब्रह्मदत्त ने एकाएक अपने पिता से पूछा, ''आप सेठ जी के विरुद्ध दिये निर्णय से मुझ पर अप्रसन्न तो नहीं हैं? सेठ जी के बहुत एहसान हैं हम सभी पर।''

पिता संभवत: इसी क्षण का इंतज़ार कर रहे थे। वह आत्मविभोर हो उठे। थोड़ी देर बाद गला साफ करते हुए बोले, ''बेटा, मैं ही नहीं स्वयं सेठ जी भी तुम्हारे इस निर्णय से संतुष्ट हैं।'' कहते हुए पिता ने कागज ब्रह्मदत्त को दिया।

ब्रह्मदत्त ने वह पत्र देखा जिसमें सेठ जी ने उसे संबोधित किया था-''प्रिय ब्रह्मदत्त, मैंने जीवन में केवल अनैतिक तरीके से ही धनार्जन किया है। तुम्हें शहर जाते समय दिये कुछ रुपये ही संभवत: सदकृत्यों में गिना जा सकता है। तुम्हें अपनी काली कमाई के पैसे देकर मैं डरता रहा कि कहीं अनुचित कमाई का धन तुम्हें भी अनुचित राह पर न डाल दे। कहते हैं 'कुअन्न भी विनाशकारी होता है।' परंतु आज तुमने सिद्ध कर दिया कि लक्ष्मी एक स्वाती की बूंद की तरह होती है, जिस पात्र में पड़ेगी वैसा ही फल देगी।''

''तुम्हारे इस निर्णय ने मेरी सोच भी बादल दी। इस सज़ा को तुम्हारे माध्यम से दिया हुआ एक अवसर मानता हूँ, ताकि मैं प्रायश्चित कर सकूँ। ईश्वर तुम्हारा भला करे।''

ब्रह्मदत्त के मन का कोहासा पूरी तरह छंट गया था; उसने पत्र को माथे से लगा लिया।

❐❐❐

बाँझ !

'मैरिजेज़ आर मेड इन हेवेन'! यह अभी तक उसने मात्र सुना ही था, परंतु अब वह इस कहावत पर विश्वास भी करने लगी थी। वह स्वयं सुंदर पढ़ी लिखी थी और उसके मन में ऐसा ही पति पाने की आकांक्षा भी थी। मन में विचार उठता था सपने तो सपने ही होते हैं। 'हाँ उन्हें अपने कर्म से वास्तविकता में बदला जा सकता है। मगर विवाह से कर्म का क्या मतलब? क्या इसका मतलब 'लव मैरिज' तो नहीं है? अरेंज्ड मैरिज में माँ-बाप मात्र खाता पीता परिवार और कमाऊ वर ही देखते हैं। शक्ल को लेकर क्या लड़की ज़िंदगी भर चाटेगी! कमाऊ वर प्राप्त करने के लिए माँ-बाप लड़की के जन्म से ही बचत करना शुरू कर देते हैं। इन सब कंस्ट्रेन (बाध्यताओं) के साथ शक्ल सूरत पर कोई ध्यान ही नहीं देता।

पर लव मैरिज करने के लिए बड़ी हिम्मत चाहिए। लव मैरिज में अपने पसंद का शौहर मिलने के अलावा माँ-बाप की आर्थिक विवशताएँ भी आड़े नहीं आतीं। 'मियां बीवी राज़ी तो क्या करेगा काज़ी।'

पर लवी भाग्यशाली थी। उसे अरेंज्ड मैरिज में भी वह सभी मिल गया जिसकी उसने आकांक्षा की थी।

प्रशांत लंबा चौड़ा, सुंदर और अच्छे परिवार से होने के अलावा उसकी सैलरी भी अच्छी थी। हाँ, पर थोड़ा ईगोइस्टिक था। लवी ने सोचा कोई भी सम्पूर्ण नहीं होता। वह प्रशांत की इगो को चंद्रमा के दाग की भांति स्वीकार कर लेगी। वैसे भी भारत में मर्दों की ईगो को उनका पैदाइशी हक़ माना जाता है। अत: शादी के बाद, लवी ने प्रशांत की ईगो का हमेशा ध्यान रखा। इस सिलसिले में उसने अपनी माँ को आदर्श माना था। बचपन से वह देखती थी कि मात्र अपने पति की ईगो का ध्यान रख कर माँ परिवार पर एकछत्र राज्य करती थी।

लवी और प्रशांत का दाम्पत्य जीवन सुखी था। शुरू के कई साल तो जैसे स्वप्नलोक में बीते। पर धीरे-धीरे लंबी मधु-यामिनी बीत गई।

लवी को प्रशांत के अंदर कुछ-कुछ चिड़चिड़ापन का आभास होने लगा। वहीं उसने यह भी महसूस हुआ कि वह स्वयं कुछ दिनों से अति संवेदनशील हो गई है। सबकुछ होते हुए भी जैसे जीवन में कुछ खालीपन आ गया हो।

इस परिवर्तन को इतने वर्षों की अति निकटता का परिणाम मान कर वह कुछ दिनों के लिए अपनी माँ के पास आ गई।

एक दिन लवी ने अपने और प्रशांत के स्वभाव में आए इस परिवर्तन के बारे में माँ से चर्चा की। माँ ने मुस्कराते हुए कहा दांपत्य जीवन में केवल पति-पत्नी ही नहीं होते। संतान के होने से ही परिवार पूर्ण होता है। विवाह में लिए गए संकल्पों में कुल और वंश-वृद्धि की शपथ भी सप्त-पदी में दिलाई जाती है। मगर आधुनिकता में लोग विस्मृत कर देते हैं कि संतति ही दाम्पत्य जीवन का मुख्य ध्येय है। प्रकृति ने दाम्पत्य जीवन को इसीलिए इतना मधुर बनाया है। तुम लोग इन पाँच वर्षों में इस मुख्य उद्देश्य को भूल गए। ऐसी परिस्थिति में तो यह होना ही था। पारिवारिक जीवन की यह ख़राश एक अनिवार्य कमी की ओर इंगित कर रही है। तुम लोगों को शीघ्र ही संतानोत्पत्ति के बारे में सोचना चाहिए।

लवी को तत्काल ही लगा कि मातृत्व की चाह ही शायद उसके हृदय को व्यथित कर रही थी।

पत्नी-धर्म कर्तव्य है तो मातृत्व पूर्णता।

उसने घर लौट कर प्रशांत से बात करी। प्रशांत ने भी स्वीकार किया कि सभवत: इसी रिक्तता के चलते वह स्वयं भी विक्षुब्ध हो रहा था।

लवी ने 'डेली पिल्स' का प्रयोग तत्काल छोड़ दिया। पति-पत्नी पूर्ण रूप से सृजन में व्यस्त हो गए। उनका वैवाहिक जीवन एक बार फिर से मधुमय हो गया।

परन्तु क्या सभी को सबकुछ मन चाहा मिल जाता है? शायद नहीं!

शादी के बाद संतान होना कितनी स्वाभाविक बात है। फिर भी संसार में सर्वदा वह नहीं हो पाता जिसे स्वाभाविक तौर से होना चाहिए। लगभग एक वर्ष के लगातार प्रयास के बाद भी जब कोई शुभ-संकेत नहीं मिला तो दोनों ने डॉक्टर के पास जाने का मन बनाया।

डॉक्टर ने कहा, ''घबराने की बात नहीं है। यह प्राबलम आजकल बहुत से दंपतियों को आ रही है। यह ला-इलाज नहीं है''। उसने लवी

के पर्चे पर कई टेस्ट लिख दिये और कहा कि यह करा कर मुझे दिखाये। फिर उसने प्रशांत का नाम पूछकर एक पर्चा उसे भी पकड़ा दिया।

''यह कुछ जाँचे आपको भी करानी होंगी। तभी हम किसी निष्कर्ष पर पहुँच पाएंगे'', डॉक्टर ने पर्चा प्रशांत को पकड़ा दिया। फिर घंटी बजा कर अगले मरीज को भेजने को बोल दिया।

मतलब लवी और प्रशांत का टाइम समाप्त हो गया और उन्हें चलना चाहिए।

रास्ते में पैथालॉजी लैब देख लवी ने कहा, ''क्यों न हम लोग आज से ही टेस्ट करवाना शुरू कर दें ?'' उसके स्वर में मातृत्व का आग्रह और आतुरता थी।

''नहीं, घर चलो वहाँ बैठकर बात करते हैं। उसके बाद ही कुछ तय होगा''। प्रशांत ने बेरुखी से कहा।

घर पहुँच कर प्रशांत ने कोई बात नहीं की। बस उद्विग्न सा घर में घूमता रहा। लवी ने भी उस समय बात करना उचित नहीं समझा। वह प्रशांत की उद्विग्नता का कारण जानना चाह रही थी, परंतु इसके लिए उसे यह समय उपयुक्त नहीं लगा।

अगले दिन जब प्रशांत आफिस जाने को तैयार हुआ तो लवी ने पूछा, ''क्या आज किसी समय हम चेक-अप के लिए जा सकते हैं?''

प्रशान्त एकाएक बिफर पड़ा, ''मुझे कोई चेकप वेकप नहीं कराना। तुम्हें ज़रूरत हो तो तुम करा लो। मैं एकदम ठीक हूँ''। कहकर प्रशांत लवी के चेहरे पर ही दरवाज़ा जोर से बंदकर चला गया।

लवी, प्रशांत के इस व्यवहार को बिलकुल भी नहीं समझ सकी। वह मन मसोस कर रह गई। इसके बाद जब भी लवी चेकप की तरफ इशारा भी करती, प्रशांत बहुत बुरी तरह से पेश आता।

दो तीन हफ्ते में लवी प्रशांत के टेम्पर (तुनुक मिज़ाजी और चिड़चिड़ेपन) से आजिज आ गई। उसने भी उसी स्वर में जवाब देना शुरू कर दिया। वह भी प्रबल विरोध के साथ यह पूछने लगी थी कि आखिर प्रशांत जांच क्यों नहीं कराना चाहता?

इस पर प्रशांत ज्वालामुखी बन जाता था। एक दिन तो हताश होकर लवी ने पूछ ही लिया, ''ऐसा तो नहीं है कि प्रशांत तुम जानते हो तुम्हारे अंदर वाकई कोई कमी है? यही एक वजह हो सकती है कि तुम जाँच

से बचना चाह रहे हो''। इस पर तो प्रशांत लवी पर हाथ उठाते-उठाते रह गया।

घर से बाहर निकलते समय दरवाजे पर रुक कर प्रशांत ने जो कहा वह हाथ उठाने से भी बदतर था। वह बोला, ''बेवकूफ महिला, मर्द या तो मर्द होते हैं या नामर्द। मर्द तो मैं हूँ यह तो तुम भी जानती हो। इसलिए कमी यदि है तो तुममे ही है। क्योंकि तुम खुद बाँझ हो'', कह कर प्रशांत बाहर निकल गया।

बाँझ एक स्वस्थ महिला के लिए इससे बड़ी गाली और क्या हो सकती है। लवी वहीं फर्श पर बैठकर फूट-फूट कर रो पड़ी। लवी को पहले तो ग्लानि से रोना आया परंतु कुछ समय बाद उसे अपने रोने पर ग्लानि हुई। क्या वह इतनी कमजोर है कि एक वाक्य जिसमें कोई सत्यता नहीं, उसे इतना लाचारी मे रोने को मजबूर कर दे? इतने दिनों के वैवाहिक जीवन की वजह से क्या वह रूढ़िवादी, सदियों पुरानी नारी बन चुकी है जो मात्र आँसू बहाकर सारे कष्ट झेल लेती थी? नहीं..नहीं वह कुछ भी हो सकती है पर लाचार कभी नहीं हो सकती।

उसने परंपरागत पत्नी के रूप को त्यागने का निश्चय कर लिया। उसने फौरन अपने पहले बास, जहाँ वह शादी से पहले काम करती थी, को फोन मिला कर कहा, ''सर, मैं फिर से काम पर लौटना चाहती हूँ। क्या मेरे लिए कोई जगह है?''

बॉस ही नहीं सारा आफिस लवी की कार्यकुशलता से मुरीद था। बास ने कहा, ''लवी, तुम्हारे जैसे वर्कर्स के लिए मेरे आफिस में सदैव जगह है। तुम चाहो तो कल से ही काम पर आ सकती हो।'' फिर थोड़ा हिचकिचाते हुए बोला, ''लवी, जिस प्रशासनिक पोस्ट पर तुम थी वह अभी खाली नहीं है। क्या तुम एक स्तर नीचे के पद पर कार्य कर सकोगी? हाँ, तुम्हें सैलरी और पर्क्स की चिंता करने की आवश्यकता नहीं है, वह पहले जैसे ही रहेगी।'' कहकर वह लवी के उत्तर की प्रतीक्षा करने लगा।

लवी बोली, ''नहीं सर, मुझे कोई फर्क नहीं पड़ता।''

''ठीक है, तुम कल से आफिस आ जाओ। तुम्हारा चैंबर कल तुम्हें तैयार मिलेगा।'' कह कर बॉस ने फोन रख दिया।

पुराने आफिस में आज तक उसके कार्य की प्रशंसा हो रही है जान कर लवी का आत्मविश्वास बढ़ा। वह घर बंदकर कल से काम पर जाने के लिए आवश्यक ड्रेस लेने निकल पड़ी।

रास्ते में उसे पड़ोसी के घर काम करने वाली बाई मिल गई। बाई को रोक कर लवी ने कहा, ''बाई, मैं घर में काम करने के लिए एक बाई की तलाश में हूँ। मैं चाहूँगी की तुम खुद मेरा भी काम कर दो नहीं तो कोई भली बाई की व्यवस्था मेरे लिए कर दो।''

''मेमसाहब, मेरे पास नए काम के लिए समय नहीं है। मेरे पड़ोस में एक गरीब महिला रहती है। आप कहें तो शाम उसको लेकर आ जाऊँ। उसका पति बीमार रहता है। उसे काम की अधिक ज़रूरत है।''

''ठीक है, यदि तुम उसकी नेकनीयती की ज़िम्मेदारी लेती हो तो मैं उसे काम पर रख लूँगी।'' लवी ने कहा।

शाम को बाई एक कम उम्र की महिला को लेकर आई। दीनता और विपन्नता साफ झलक रही थी। भरपेट खाना न मिलने से आँखें गड्ढे में घुसी थीं, पर शक्ल से ईमानदार लग रही थी। हालांकि, लाचारी और ईमानदारी अधिक समय तक साथ नहीं रह पाती, फिर भी लवी ने कुछ दया और प्रशांत के बर्ताव से चिढ़कर, उस महिला को काम पर रख लिया।

सुबह नाश्ते की मेज़ पर जब श्यामा चाय लेकर आई तो प्रशांत ने रूखे स्वर में पूछा, ''यह महिला कौन है?''

''यह हमारे यहाँ बाई का काम करेगी। जिससे मुझे अपने आफिस जाने का समय मिल सके।'' लवी ने एक प्रश्न के उत्तर में दो सूचनाएँ दे दीं।

प्रशांत लवी के इस बदलाव से चकित हुआ किन्तु कुछ बोला नहीं। नाश्ता कर के आफिस चला गया।

अपनों से ना-इत्तेफाकी होने पर हम उन लोगों को उतने ही प्रबल रूप से चोट पहुँचाने का प्रयास करते हैं जिनके हम सबसे ज्यादा नजदीक होते हैं। इसी मानसिकता के चलते, कल के झगड़े के बाद प्रशांत ने लवी को तलाक देने का निश्चय कर लिया था। उसका मानना था की तलाक देकर वह लवी को दर-दर का भिखारी बना देगा। पत्नी की बदज़ुबानी के लिए यही सबसे उपयुक्त सज़ा है। तलाक के बाद वह किसी अन्य महिला से शादी कर लेगा। प्रशांत का मानना था कि लवी बच्चा पैदा करने में अक्षम है।

तलाक देने के लिए उसने अपने वकील मित्र से भी संपर्क किया था। परंतु वहाँ भी मुर्गे की तीन टाँग। लवी को बाँझ सिद्ध करने से पहले

उसे स्वयं अपना चेक-अप कराना होगा। बात यहीं आकर टाँय-टाँय फिस्स हो गई।

प्रशांत को लगा जैसे उसकी वकील की बात की भनक लवी को कहीं से मिल गई। तभी उसने जाब ज्वाइन कर, तलाक के आगत खतरे से अपने को प्रतिरक्षित (इम्यून) कर लिया।

पहले दिन आफिस जाकर लवी को ऐसा वातावरण मिला जैसे कि उसने जॉब कभी छोड़ा ही न हो। सभी सहकर्मी उससे बड़े गर्मजोशी और प्रेम से मिले। आफिस में व्यस्त होने से उसका सारा विषाद धुल सा गया। घर लौटते समय उसने महसूस किया कि आफिस में वह एकदम सामान्य अनुभव कर रही थी। उसके मन में 'बाँझ' शब्द का शूल विस्मृत हो गया था। उसने आफिस ज्वाइन करने के अपने निर्णय को सही पाया। यदि वह घर में ही बनी रहती तो यह शब्द एक नासूर बन कर हमेशा उसके दिल में खटकता रहता। घर पहुँचने के बाद श्यामा के हाथ की गरम चाय पीने के बाद वह सोचने लगी कि क्या कारण है कि प्रशांत अपना टेस्ट नहीं कराना चाहता।

उसने तत्काल ही इंटर्नेट पर 'वन्ध्यता' (इंफर्टिलिटी) के बारे में खोज की। नेट पर पहली लाइन में ही उसको समाधान मिल गया। नेट में बोल्ड अक्षरों में लिखा था- ''मर्दों की वन्ध्यता और पुंसत्व (सेक्सुअली पोटेंट) दोनों अलग-अलग चीज़ें है। एक सेक्सुअली पोटेंट व्यक्ति में शुक्राणु कम होने या न होने के कारण उसमें वन्ध्यता हो सकती है। वहीं 'इरेक्टाइल डिसफंक्शन' (स्तंभन क्षमता से वंचित) से ग्रसित पुरुष संभोग करने में असमर्थ होने पर भी वह संतान पैदा करने में सक्षम हो सकते हैं।''

अगले पैरा में साफ लिखा था कि ''जनसाधारण पुरुषों की वन्ध्यता और नपुंसकता में फ़र्क नहीं जानते। यही वजह है कि बहुसंख्य पुरुष इसी भ्रम की वजह से अपनी जाँच कराने में संकोच करते हैं।''

प्रशांत कि ग्रंथि की वास्तविकता समझ में आने के बाद उसकी जिज्ञासा जाग उठी। उसने और आगे पढ़ना शुरू किया। उसे पता चला की स्त्री अंडाणु का जीवन मात्र एक दिन का होता है वहीं शुक्राणु दो दिन तक सक्रिय रहते हैं। एक अंडाणु के लिए एक बार में करोड़ों शुक्राणु प्रतियोगी होते हैं। इनमें से सबसे पुष्ट और सक्षम शुक्राणु पिता

के गुणसूत्रों के साथ अंडाणु में माँ के गुणसूत्रों से मिल कर भ्रूण का निर्माण करते हैं।

इंटरनेट बंद करते समय यह सोचकर उसके चेहरे पर मुस्कराहट आ गई की पुरुष का शुक्राणु भी पुरुष की ही भाँति निषेचन के लिए कितना आतुर होता है। वह गर्भाशय में दो से पाँच दिन तक अंडाणु के आने की प्रतीक्षा करता है। अंडाणु के मिलते ही करोड़ों शुक्राणु उससे लिपट जाते हैं, परंतु उनमे से केवल एक ही भीतर प्रवेश कर निषेचन में कर पाते हैं। अब तो यह भी माना जाता है कि अंडाणु उसी शुक्राणु का चयन कर प्रवेश करने की अनुमति देता है, जिसके डीएनए सम्पूर्ण और अक्षुण्ण हो। इस शुक्राणु को ग्रहण करने के बाद, अंडाणु का वाह्य आवरण कड़ा हो जाता है, जिससे वह बाकी शुक्राणुओं के लिए अभेद्य हो जाता है।

इस जानकारी से लवी के मन को कुछ शांति मिली। उसे प्रशांत की मानसिकता को समझने के साथ ही उस पर दया भी आई। वहीं दुबारा जाब लग जाने से लवी का आत्म-निर्भर होना व वकील के उत्तर से प्रशांत भी कुछ मद्धिम पड़ा। दोनों ने सरोगेसी का मन बनाया।

बहुत दिनों के बाद पति-पत्नी के बीच का मालिन्य कुछ कम हुआ।

अगले दिन नाश्ते की मेज़ पर श्यामा चाय लेकर आई, तभी लवी और प्रशान्त दोनों के मन में एक सा विचार कौंधा- सरोगेसी के लिए श्यामा क्यों नहीं। दोनों ही एक दूसरे के मन के एक से विचार को जान कर हँसने लगे। श्यामा कुछ नहीं समझी।

उसी दिन से लवी श्यामा का बहुत ध्यान रखने लगी। वेतन के अलावा श्यामा को नाश्ता और भोजन भी मिलने लगा।

लवी का सोचना था कि श्यामा के पूर्ण स्वस्थ होने पर वह श्यामा से सरोगेसी के लिए बात करेगी। गरीबी और लूले पति की बीमारी के चलते तय था कि श्यामा इस प्रस्ताव को सहज ही स्वीकार कर लेगी। लवी का सोचना सही भी था। आजकल महिलाओं के लिए गरीबी से निजात पाने के लिए सरोगेसी सबसे सरल और सम्मानजनक रास्ता है।

बेहतर खान-पान से श्यामा के स्वास्थ्य में जहाँ लवी को सुधार दिखा वहीं प्रशांत को वह रमणीय लगने लगी।

खाली समय में प्रशांत सोचता कि सरोगेसी के लिए जब उसके

स्पर्म (शुक्राणु) से होनी है, वह स्वयं सीधे-सीधे श्यामा को दे सकता है। इसमें आनंद भी है और लैब का झंझट भी नहीं। वर्क एंड प्लेज़र बोथ (कार्य के साथ आनंद भी)। इस सोच से ही प्रशांत में उत्तेजना आने लगती जो उसके पुंसत्व को आश्वस्त कर देती।

प्रशांत अब ज्यादा उत्फुल्ल रहने लगा- विशेषकर डायनिंग टेबल पर। यह व्यवहार जहाँ लवी ने नोटिस किया वहीं इस परिवर्तन का अनुभव श्यामा को भी हुआ। दोनों महिलाओं में अलग-अलग प्रतिक्रिया हुई। लवी की नज़रे खोजी हुई, वहीं श्यामा की आँखों और व्यवहार दोनों में कमनीयता झलकने लगी। कहते हैं ''कली के खिलने में अलि की याचक दृष्टि का भी योगदान होता है।''

श्यामा पहले से अधिक साफ-सुथरी और अपने पहनावे के प्रति अधिक सजग हो गई। डाइनिंग हाल में ही बनी ओपेन किचेन में जब वह रोटी या पराठा बेलती, तो उसका आँचल एक विशेष अंदाज़ में ढलक जाता। आँचल की यह ढरकन प्रशांत की आँखों को विशेष रूप से आकर्षित करती। प्रशांत की लोलुपदृष्टि और श्यामा के मूक आमंत्रण से लवी अनभिज्ञ नहीं थी। इस परिवर्तन से उसे प्रशांत पर क्रोध न आकर जुगुप्सा और घृणा होने लगी थी। फिर भी वह तटस्थ बनी रही।

फिर एक दिन भँवरा कली के अति निकट पहुँच ही गया। उसने कली की पंखुड़ियों से खेलना प्रारम्भ किया। किन्तु यह क्या! श्यामा ने उसका हाथ रोक दिया बोली, ''पहले मेरे आदमी को भी घर में रहने की जगह दो।'' कहकर वह किचेन में चली गई। दुर्धर्ष पुरुष नारी की इस युक्ति के सामने सदैव नतमस्तक हुआ है।

अगले ही दिन श्यामा अपने लूले पति के साथ प्रशांत के फ्लैट के सर्वेण्ट-क्वार्टर में शिफ्ट कर गई। लूले पति के इलाज का दायित्व भी अब प्रशांत पर था।

श्यामा के पति के परिवार के सभी पुरुष जन्मजात लूले पैदा होते थे और आजीवन लूले ही रहते। यही कारण था उसकी ससुराल के सभी पुरुष गाँव में लूले के नाम से जाने जाते थे।

पति के साथ श्यामा के फ्लैट में शिफ्ट कर जाने से लवी को राहत मिली कि उसकी अनुपस्थिति में प्रशांत और श्यामा पर उसका पति नज़र रखेगा। वहीं प्रशांत शर्त के अनुसार श्यामा के अभिसार के बारे में आश्वस्त हो रहा था।

एक ही परिस्थिति पर पति-पत्नी के भी कितने भिन्न दृष्टिकोण हो सकते हैं!

श्यामा अपनी शर्त की पक्की निकली।

महंगे इलाज से लुल्ला के स्वास्थ्य में अभूतपूर्व प्रगति हो रही थी। अब वह कभी-कभी अपने कमरे से बाहर निकाल कर ड्राइंग-रूम में टीवी देखने के लिए भी आ जाता। लुल्ले में इतना विवेक तो था ही कि जब श्यामा अपनी शर्त पूरी कर रही होती, वह उस समय अपने कमरे से बाहर नहीं निकलता।

लुल्ले का स्वास्थ्य-लाभ एक दीये की आखिरी भभक सिद्ध हुआ। एक दिन वह अचानक ही उसकी मृत्यु हो गयी और वह अपनी लुल्ले-पन से निजात पा गया।

श्यामा बहुत रोई-बिलखी, लवी की आँख में भी आँसू आ गए, वही प्रशांत सोच रहा था कि श्यामा कितनी अच्छी एक्टर है। प्यार तो वह प्रशांत को करती है, परंतु लोकलाज के मारे दुखी होने का कितना सजीव अभिनय कर रही है।

लुल्ले की अन्त्येष्टि में सभी झुग्गी-झोपड़ी वाले गए। तेरह दिन का शोक भी श्यामा ने अपने लोगों के बीच बिताया।

तेरह दिनों के बाद प्रशांत का विरह-काल समाप्त हुआ। श्यामा एक बार फिर घर का काम करने लगी और अपनी शर्त पर भी टिकी रही। कुछ दिन बीतने पर श्यामा ने प्रशांत को बताया की वह पेट से है...।

प्रशांत के लिए यह सूचना किसी सुनामी से कम नहीं थी। उसके मन में किन्तु-परंतु का आड़ोलन होने लगा। वह आफिस जाते समय मन ही मन हिसाब लगा रहा था- श्यामा लुल्ले के मरने के 26 दिन बाद ही पेट से हुई। इसका मतलब था कि...कि श्यामा के पेट में प्रशांत की ही औलाद पल रही थी?

वहीं लवी के लिए यह प्रश्न कोई मायने नहीं रखता था। अत: वह इस ऊहा-पोह से तटस्थ रही।

श्यामा के पेट से होने के 9 महीने 7 दिन (संभावित गर्भ-काल की अवधि) बिताने के बाद भी श्यामा में प्रसव के कोई लक्षण नहीं प्रकट हुआ; यह सूचना प्रशांत के लिए होली या दीवाली उत्सव के भाँति थी। उसके मन में श्यामा के पेट में पल रहे बच्चे का जैविक पिता होने की संभावना पुष्ट होने लगी।

गर्भ के दस महीने बीतने के बाद भी जब श्यामा में प्रसव के कोई लक्षण नहीं दिखे तो प्रशांत के साथ लवी भी चिंतित हुई। लवी श्यामा को लेडी डॉक्टर के पास ले गई। प्रशांत तटस्थ होने का नाटक करता हुआ आफिस चला गया।

लेडी डॉक्टर ने अल्ट्रासाउंड करने के बाद बताया कि श्यामा का गर्भ अब पोस्ट मेच्योरिटी (गर्भ की अति-परिपक्वता) स्टेज पर है, जो कि माँ और बच्चे दोनों के लिए घातक हो सकता है।

श्यामा को आपरेशन द्वारा पुत्र-प्राप्ति हुई। चार दिन बाद श्यामा अपने बच्चे के साथ घर लौट आई।

श्यामा के घर लौटने की रात लवी और प्रशांत दोनों को अपने-अपने कारणों से नींद नहीं आ रही थी। प्रशांत जहाँ अपनी औलाद को देखने के लिये व्याकुल था, वहीं लवी बच्चे की सेहत, शक्लों-सूरत देखकर गोद लेने को व्याकुल थी। दोनों ही अपने-अपने कमरे में एक-दूसरे के सो जाने का इंतज़ार कर रहे थे।

अंत में संतान की लालसा में लवी से नहीं रहा गया। वह चुपके से उठी। प्रशांत यदि जाग भी रहा है तो उसे आश्वस्त करने के लिये उसने किचेन में जाकर पानी पीने का अभिनय किया। फिर एकांत पा कर वह श्यामा के क्वार्टर में दाखिल हुई।

प्रशांत को पहले से ही चिंता थी कि कहीं लवी ईर्ष्या में श्यामा के बच्चे को हानि न पहुंचा दे। अत: वह पर्दे की ओट से लवी पर निगाह रख रहा था। श्यामा के कमरे में आधी रात को घुसता देख उसके मन की दुश्चिंता को बल मिला। वह अपने पुत्र की रक्षा हेतु चुपके से श्यामा के कमरे के दरवाजे पर आ खड़ा हुआ।

लवी के चेहरे पर मृदु भाव थे। उसने बड़ी कोमलता से श्यामा के ऊपर से चादर हटाई। श्यामा अपने शिशु को अंक में समेटे बाईं करवट से लेटी थी। उसके सोते हुए चेहरे पर मातृत्व-तुष्टि का भाव था। उसका एक स्तन खुला था। शिशु अभी-अभी स्तन-पान कर सोया था। शिशु के मुँह पर दूध की छींटे सुंदर लग रही थी। शिशु दाहिनी करवट लेकर लेटा था। लवी अभिभूत हो गई। वात्सल्य-रस का इतना सुंदर रूप क्या और भी हो सकता है। लवी का अतृप्त मातृत्व जाग उठा। उसका मन किया वह शिशु को गोद में उठाकर अपने सीने से लगा ले। आखिर वह उसका

भी तो बेटा होने वाला था। आश्वस्त होकर लवी ने बच्चे को उठाने के लिये हाथ बढ़ाया।

प्रशांत पूरी तरह से सतर्क और सचेत था। बच्चे की हानि की थोड़ी सी भी आशंका होने पर वह बच्चे के संरक्षण हेतु तत्पर था।

लवी गोद लेने के लिये बच्चे को छूने वाली ही थी कि उसका हाथ जड़ हो गया। उसके चेहरे पर एकाएक हारर (विस्मय मिश्रित भय) के भाव उत्पन्न हुए।

लवी का चेहरा एकदम कठोर हो गया। उसने पलट कर प्रशांत को देखा। उसके चेहरे पर विद्रूप मुस्कान आ गई। वह धीरे से कमरे के बाहर चली गई। जाते समय उसके मुँह से निकला... बाँझ!

प्रशांत को लवी के चेहरे की बदलती मुद्रा, जाते-जाते कहे शब्द 'बाँझ' का कारण नहीं समझ आया। उसने आगे बढ़कर श्यामा और बच्चे को देखा-

बच्चे का बायाँ लूला हाथ कंधे से नीचे झूल रहा था।

❐❐❐

गोलियाँ हाजमोला की

सूबे में नई सरकार ने आते ही एक बड़े ज़िले की एक बड़ी तहसील को एक स्वतंत्र ज़िला घोषित कर दिया। यह तहसील अपने ओरिजिनल 'तहसील रूप' में भी काफी महत्त्वपूर्ण थी। एक एसडीएम और एक न्यायिक अधिकारी का स्थायी मुख्यालय तहसील पर ही होता था। दोनों अधिकारी तहसील मुख्यालय पर ही निवास करते थे। तहसीलदार और बीडीओ वहाँ के उच्च अधिकारियों में शुमार थे। तहसील पर रुकने की विवशता के चलते कोई भी अधिकारी इस तहसील पर पोस्टिंग से बचना चाहता था। परंतु स्वतंत्र ज़िला घोषित होते ही इस तहसील की पोस्टिंग के भाव बढ़ गए।

कारण- ज़िला घोषित होने के साथ ही बहुत बड़ी धनराशि भी इस ज़िले के लिए निर्गत होने वाली थी। इस विपुल धनराशि का उपयोग, सब-अर्बन जगह को एक शहर के मुख्यालय के रूप विकसित करने के लिए होना था। विकास हेतु आवंटित राशि से सिर्फ तहसील का विकास ही नहीं वरन् 'सबका साथ, सबका विकास' होना था। यही कारण था कि यहाँ की पोस्टिंग 'मलाईदार' पोस्टिंग माने जाने लगी। विकास का नाम अधिकारियों को वैसे आकर्षित करता है जैसे चींटों को चाशनी।

नवनिर्मित ज़िले के एक बीडीओ साहब जो अभी भी उच्च अधिकारियों में गिने जाते थे, के पास उनके एक सहयोगी का फोन आया। सहयोगी ने कहा, ''अरे भई, मेरे ब्लाक से एक बहुत ही अच्छा 'ग' श्रेणी का कार्यकर्ता 'लौटन प्रसाद' आपके आधीन आ रहा है। ज़रा उसका ध्यान रखना।''

मलाईदार पोस्टिंग के टैग लगाने के बाद श्री लौटन प्रसाद जी पहले अधिकारी (ग श्रेणी के ही सही) थे, जिनकी पोस्टिंग इस नए ज़िले में हुई थी। ज़ाहिर है कि श्री लौटन प्रसाद की पहुँच काफी ऊपर तक होगी। अत: बीडीओ साहब सहयोगी के फोन के बगैर भी लौटन प्रसाद का ध्यान रखते। पर अब सेंत-मेंत सहयोगी भी ओब्लाइज़ हो गया।

लौटन जी ने नए बीडीओ को रिपोर्ट किया, ''हें हें सर, मैं लौटन प्रसाद हूँ, मेरे पिछले अधिकारी ने मेरे ही लिए आपसे फोन पर बात की थी।''

कहकर लौटन प्रसाद बड़ी विनम्रता से अधिकारी के सामने हाथ जोड़कर खड़े हो गये। लंबा-चौड़ा कद, काले घुँघराले बाल, दबा हुआ रंग, कुल मिलाकर कार्यकुशलता उनके व्यक्तित्व में कहीं से भी नहीं झलक रही थी। हाँ, उनकी अधखुली छोटी-छोटी आँखे, जिनमें से हँसते समय एक बंद हो जाती थी, उनके शातिर होने का बयाँ कर रही थीं।

फिर भी, बीडीओ साहब ने सोचा, यदि उनके सहयोगी ने उन्हें विशेष रूप से फोन करने का कष्ट उठाया, तो अवश्य ही इस व्यक्ति में कुछ न कुछ खासियत अवश्य होगी। लौटन प्रसाद की ज्वायनिंग हो गई।

खासियत प्रकट करने में लौटन प्रसाद जी ने अधिक समय नहीं लिया। सबसे पहले उन्होंने अपने सेवा-निवृत्ति के मुंडेर पर लटके कार्यालयाध्यक्ष को अपना मुरीद बनाया। उसके बाद लंच टाइम में बीडीओ साहब के चैंबर में पहुंचे। कुछ देर तक बीडीओ साहब की कार्यकुशलता और ऊर्जा की प्रशंसा की। बीडीओ साहब के जींस में भी चापलूसी में किए गुणगान को सत्य मान लेने का वाइरस पहले से ही मौजूद था। लौटन प्रसाद की चापलूसी ने उसे जाग्रत कर दिया। स्तुति से प्रसन्न, उन्होंने मंद-मंद मुस्कराते हुए लौटन प्रसाद को लंच शेयर करने का न्योता दिया। लौटन प्रसाद ने बड़ी ही विनम्रता के साथ मनाकर दिया। उन्होंने बताया की वह मंगलवार को व्रत रखते हैं। लौटन की चापलूसी, जो अधिकारी को खाने में स्वीट डिश का आनंद दे रही थी, जारी रही।

लौटन प्रसाद बोले, ''हुजूर, इतना काम करने के बाद भी आपको थकान नहीं महसूस होती?''

''हाँ भई, थकान लगती तो है, पर क्या करें? सरकारी नौकरी में दौरे आदि से निजात कहाँ? फिर अब आधी उम्र भी निकल गई। थकान क्यों नहीं आएगी''। साहब का अंदाज़ दार्शिकाना हो उठा।

लौटन प्रसाद बोले, ''क्यों हुजूर, अभी तो आप 30-35 के ही लगते हैं। इस उम्र में थकान कैसी?'' लौटन प्रसाद ने लपेटा।

बीडीओ साहब ने गिलगिल होते हुए कहा, ''नहीं भई, मैं अब तक 50 के ऊपर हो चुका हूँ।''

लौटन प्रसाद चौंक कर खड़ा हो गया बोला, ''50! हुजूर क्यों मेरी तफरीह ले रहे हैं'' लौटन प्रसाद के स्वर में विशुद्ध विस्मय था।

हुजूर ने आश्वस्त किया बोले, ''हाँ भाई, सरकारी हिसाब से 50 वर्ष मैं पिछले साल ही पूरा कर चुका हूँ।'' फिर राज़ शेयर करने की टोन में ''वैसे मेरी उम्र हाईस्कूल सर्टिफिकेट में दो साल कम लिखी है। इस प्रकार मैं अब 53 प्लस का हो चुका हूँ।''

''हुजूर, आप अपनी सेहत के लिए कुछ लेते हैं कि नहीं'' लौटन प्रसाद जेनुइनली चिंतित होते हुए बोले।

बीडीओ बोले, ''नहीं भई, बस घर कि दाल-रोटी से ही काम चलता हूँ। वैसे भी मैं प्योर शाकाहारी हूँ।''

''हुजूर, अगर हुकुम करें तो कल ही मैं अपनी पत्नी के स्वर्गवासी नाना जी का बताया हुआ एक नुस्खा आपको लाकर देता हूँ। उसे लेते ही आप अपने को फिर से 25 वर्ष का महसूस करने लगेंगे। इसी नुस्खे की बदौलत उन्होंने 65 वर्ष की उम्र में मेरी सास को पैदा किया था।''

अधिकारी को चुप देख लौटन प्रसाद को लगा कि कहीं वह लक्ष्मण रेखा तो नहीं लांघ गए?

परंतु अधिकारी इसलिए चुप था, कि वह सोच रहा था-65 वर्ष की आयु में औलाद! बीडीओ साहब को आश्चर्य हुआ। उनको याद आया की 45 की उम्र से ही वह और उनकी पत्नी अलग पलंग पर सो रहे हैं।

लौटन प्रसाद मन में राम-राम कर रहे थे कि बीडीओ साहब गंभीरता से बोले, ''ठीक है, यदि इस नुस्खे से थकान आदि कुछ कम होती है तो इसे ट्राई करने में कोई हर्ज़ नहीं। मगर हाँ, इसका सारा खर्चा मुझसे ले लेना।''

''ठीक है साहब! वैसे मुझे कौन बाहर से खरीदना है। मैं तो 40 की उम्र से ही इसका प्रयोग कर रहा हूँ। मेरी पत्नी मेरी 'रात की बेरुखी' से परेशान रहती थी। उसको यह नुस्खा उसकी माँ ने बताया था। तबसे वह स्वयं ही इसे अपने हाथ से घर पर ही बनाती है। आखिर, इस दवा से उसका भी तो फायदा है'' कहकर लौटन प्रसाद हो.. हो.. कर खुशी से हँसे। हँसते समय उनकी आँखे एक बार फिर बंद सी हो गईं।

उस दिन से साहब के लंच में नमक हो या ना हो पर, लंच के वक़्त लौटन प्रसाद अवश्य रहते।

एक सप्ताह बाद एक दिन साहब ने ओजवर्धक दवा के बारे में, इशारे-इशारे में तकादा किया।

लौटन प्रसाद बोले, ''हुज़ूर बूटी को दस दिन तक सूरज की रौशनी में रखा जाता है। उसी से उसमे कूव्वत आती है। कभी सोचा है हुज़ूर भँवरा रात में कली पर क्यों नहीं मँडराता? दिनभर तमाम कलियों का रस चूसने की कूव्वत उसे सूरज से ही मिलती है।''

फिर साहब के कुछ नजदीक आकर बोला, ''आजकल जाड़े के दिनों में यदि आप काले साँप को देखें तो वह मरा सा पड़ा रहेगा; मगर आधा घंटे की धूप पाते ही वह फनफना कर खड़ा हो जाता है। उस समय उसका सामना कोई भी नहीं कर सकता। सरकार, इस बूटी में यह कूव्वत सूरज की रोशनी से ही आती है।'' कहते-कहते लौटन प्रसाद का स्वर ओजस्वी हो उठा। वहीं साहब का शरीर भी सनसना उठा।

सांस को सामान्य करते हुए साहब ने लापरवाही से कहा, ''कोई बात नहीं। मुझे कोई जल्दी नहीं है''

...और एक दिन शाम को सुनहले वर्क में लिपटी 'जिस्मानी ताकत' की गोलियाँ लेकर लौटन प्रसाद बीडीओ साहब के घर पहुँच गए। बहुत डिटेल में अनुपान विधि समझाई और कहा, ''सर, एक हफ्ते बाद ही इसका असर ट्राई करियेगा।'' फिर एकाएक उनके चेहरे पर स्मित मुस्कान तैरी बोला, ''एक हफ्ते बाद बहू जी खुद ही दूसरा पलंग लिविंग रूम से हटा देंगी''। लौटन की आँखें एक बार फिर मुंद गईं।

हफ्ते भर बाद लोगों ने नोटिस किया कि लौटन प्रसाद का क़द आफिस में एकाएक बढ़ने लगा। सारे विकास कार्यों की फाइलें लौटन प्रसाद के माध्यम से ही जाने लगीं। क्यों न हो आखिर, साहब और बड़े बाबू दोनों ही लौटन प्रसाद के मुरीद थे।

मुख्यालय खुलने के बाद ही वहाँ डिप्टी कलेक्टर को भी वहाँ परमानेंट रूप से निवास के लिए आना पड़ा। जिसकी वजह से बीडीओ अब वहाँ के सर्वोच्च अधिकारी नहीं रह गए। उनके हिस्से में कटौती होने लगी। उनका 'कट' एकदम कट न हो, इसके लिए बीडीओ ने अपने अधिकारी पर लौटन प्रसाद का जाल फेंका। जाल अचूक था। लौटन प्रसाद के पंच-शर से एसडीएम भी मुरीद हो गए। अब लौटन प्रसाद का लंच कभी एसडीएम के साथ कभी मुंसिफ़ के साथ भी होने लगा। लौटन

प्रसाद का दबदबा अब सारे नवनिर्मित ज़िले में विस्तार पा चुका था। सभी खुश थे।

एक दिन अल-सुबह बीडीओ अपने अधिकारी के आवास पर ज़िले के विकास पर 'विनिमय' कर रहे थे कि सूचना मिली 'लौटन प्रसाद चार सौ बीसी में अंदर हो गए।'

दोनों अधिकारियों के मुँह से स्वरैक्य में निकला ''क्या लौटन ने 'मार्तंड बूटी' की साहब को सप्लाई बंद कर दी? वरना इतने अच्छे ताल्लुकात के बाद भी लौटन पर एक्शन हो ही नहीं सकता।

'कुछ तो है', सोचकर तय हुआ कि मुंसिफ़ साहब से बात की जाय। कोर्ट का समय हो चुका था सो दोनों सीधे कोर्ट ही पहुँचे। पीठासीन अधिकारी अभी चैंबर में ही थे, और काफी गुस्से में लग रहे थे। परंपरागत शिष्टाचार के बाद लौटन प्रसाद का ज़िक्र आते ही मुंसिफ़ साहब फट पड़े-

''निहायत ही वाहियात आदमी, एक नंबर का सूअर और धोखेबाज़ आदमी है लौटन। मेरा बस चले तो मैं उसे अभी सूली पर लटका दूँ?

बाकी अधिकारियों के लटके हुए मुँह देखकर थोड़ा शांत होकर ''आप दोनों को भी इसने उल्लू बनाया है। आपको जब इसकी करतूत का पता चलेगा तो आपका दिल भी गोली मारने का करेगा।''

आखिर डिप्टी साहब ने पूछा, ''लौटन प्रसाद का क़ुसूर क्या है?''

भड़ास निकलने के बाद मुंसिफ़ साहब कुछ संयत हो चुके थे। बोले, ''कल मेरी इजलास में एक डाइवोर्स सूट फाइल हुआ। यह सूट लौटन प्रसाद की पत्नी ने डाला था। संबंध-विच्छेद के साथ ही उसने 'एलिमनी' की डिमांड की थी।''

'डाइवोर्स सूट में हवालात कैसे?'' प्रश्न उठा

''हवालात तो उसे चार सौ बीसी की दफा में हुई।'' कहकर मुंसिफ़ साहब ने घंटी बजाई। अर्दली से लौटन प्रसाद की पत्नी को बुलाने को कहा।

लौटन प्रसाद की पत्नी को सुंदर तो नहीं कहा जा सकता था पर हाँ, स्वस्थ भरे बदन की महिला अवश्य थी। चेहरे पर तमतमाते आक्रोश ने उसके साँवले चेहरे पर एक अजीब चमक पैदा कर दी थी। उसकी मुद्रा काफी आक्रामक लग रही थी।

''कल तुमने जो मेरे घर पर अपने पति के बारे में अपनी व्यथा बताई थी इन दोनों अधिकारियों को 'सुनाओ...।'', पीठासीन अधिकारी ने लौटन प्रसाद की पत्नी से कहा।

महिला ने तेज़ी से बात काटते हुए कहा, ''लौटन प्रसाद न तो मेरा कभी पति था और न ही अब है। वह पति होने लायक है ही नहीं

''यह लोग तुम्हारी बात मानने को तैयार नहीं हैं। इन्हें पूरी बात तफसील से बताओ।'' पीठासीन अधिकारी ने कहा।

''सर, लौटन प्रसाद शादी लायक है ही नहीं। वह नामर्द है।'' वह बोली।

'नामर्द है!' दोनों अधिकारी चौंक पड़े।

''लौटन प्रसाद नामर्द है! उसका तो कहना है कि आप स्वयं अपनी नानी का बताया नुस्खा अपने हाथों से तैयार कर उसे नियमित रूप से देती हैं जिससे वह आज भी 20 साल का पट्ठा बना है।''

महिला बोली, ''20 साल का पट्ठा नहीं सर, वह उल्लू का पट्ठा है। घर में हमेशा सुअर की तरह डकार लेता है और रात को पलंग पर लेटते ही खर्राटे भरने लगता है। अपनी व्यथा क्या कहूँ सरकार, मैं शादी के पाँच साल बाद भी अक्षत-योनि हूँ।''

''अरे'', तीनों अधिकारियों के मुँह से एक साथ निकला।

''यही नहीं हुज़ूर, मैं इसकी तीसरी बीबी हूँ। इसकी पहली बीबी दूधवाले के साथ भाग गई, दूसरी मुहल्ले के शोहदे की रखैल बन गई। उसने जाते समय इसे चारपाई से बांध कर पीटा भी था। मैं पढ़ी लिखी हूँ इसलिए वह कुकृत्य मैं नहीं कर सकती, इसलिए मैंने इस नीच से हमेशा के लिए अलग होने का निश्चय कर लिया है। कानून इसमें मेरा सहायक होगा।''

''तो यह सब गोलियाँ जो वह हम सबको खिलाया करता था। हम सब तो इसे लगभग दो सालों से खा रहे हैं, वह क्या है।'' कहते हुए एक ने जेब से निकाल कर जादू की गोलियाँ मेज़ पर रख दीं।

मुंसिफ़ साहब ने पुड़िया हाथ में लेते हुए कहा, ''मैं मनोविज्ञान का विद्यार्थी रहा हूँ। फिर भी मैं इसके चक्कर में फंस गया। शादी के कुछ वर्षों के बाद जब हम अपने कैरियर में व्यस्त हो जाते हैं और पत्नी बच्चों की देख रेख में लग जाती है तो उसमें सेक्स की वह उद्दाम

लालसा नहीं रह जाती; उसमे कमी आना स्वाभाविक है। किसी के इंगित करने पर हमारे अवचेतन में शंका जाग्रत हो जाती है, कि कहीं यह 'कमजोरी' तो नहीं है। अवचेतन की इसी भावना को तथाकथित सेक्सोलॉजिस्ट एक्सप्लायट करते हैं (अनुचित लाभ उठाते हैं)। वह कोई भी आलतू-फालतू दवा देकर हमे सेक्स की तरफ पुनः प्रेरित करते हैं; जिससे सेक्स के प्रति हमारी लापरवाही दूर ही जाती है और हम अपने में पुनर्जीवन महसूस करने लगते हैं।''

वे कुछ रुककर बोले, ''यदि यह सलाह किसी हितैषी द्वारा सुझाई गई, तो कोई बात नहीं, यदि किसी चिकित्साकर्मी ने प्रेस्क्राइब किया तो 'अन-एथिकल' है। वहीं यह सलाह किसी ने अन-ड्यू फ़ेवर या अनुचित लाभ प्राप्त करने के उद्देश्य से दी गई तो यह अपराध है। लौटन प्रसाद द्वारा बिन-माँगी सलाह और इसका सेवन करने के लिए लोगों को फाँसना, तथा विभिन्न हथकंडों का प्रयोग करना अपराध है। लौटन प्रसाद के इसी आपराधिक धोखाधड़ी के कृत्य के जुर्म में 'दंड संहिता' की धारा 420 के अंतर्गत दंड का भागी होता है। इसी धारा के तहत लौटन प्रसाद को गिरफ्तार कर मुकदमा चलाया गया है।''

लौटन प्रसाद की पीड़ित पत्नी ने गोलियाँ हाथ में लेकर देखीं; गोलियाँ देखते ही वह ठठाकर हँस पड़ी। हँसते हुए उसने कहा, ''लौटन प्रसाद का हाजमा हमेशा खराब रहता है। वह हमेशा इन्हें खाया करता है। यह कोई ओजवर्धक दवा-सवा नहीं है यह तो हर परचून के यहाँ मिलने वाली गोलियां हाजमोला की हैं!''

❐❐❐

नकली जिलाधीश

पारिवारिक रूप से शिवभक्त होने के नाते जब मैं अपने पुत्र के पास रांची गया, तो एक संस्कारिक पुत्र होने के नाते उसने मुझे झारखण्ड के प्रसिद्ध ज्योतिर्लिंग 'बैजनाथ धाम' के दर्शन करने का प्रस्ताव रखा। तीर्थाटन तो वैसे पुण्यदायक होता है, पर यदि सुपुत्र कराये तो फल द्विगुणित हो जाता है। दुगना पुण्य प्राप्ति का अवसर हम पति पत्नी गंवाना नहीं चाहते थे सो फौरन 'हाँ' कर दी। आनन-फानन में रात की ट्रेन से रिजर्वेशन हो गया। हम लोग रांची से थ्री टायर की बोगी में सवार होकर इस आशा से चले कि सुबह होते ही गिरीडीह पहुँच जायेंगे।

भारतीय रेल से यात्रा करने का एक अलग अनुभव होता है। डिब्बे में घुसते ही धक्का-मुक्की, सीट पर रखे सामान की वजह से वाद-विवाद, ऊपर वाली बर्थ पर न जा सकने के अनेक बहाने व बहस, परंतु गाड़ी चलने के कुछ देर बाद ही इतनी आत्मीयता जैसे हमेशा के संगी हों। हम लोग भी इन सभी प्रक्रियाओं से गुजरे। एक वृद्ध दंपत्ति अपने शिशु पौत्र के साथ थे। उन्होंने अपने उम्र का तकाजा देते हुए हम लोगों से अपने नीचे की बर्थ देने को कहा। हम लोग लगभग सीट छोड़ने वाले थे कि मेरे पुत्र ने हस्तक्षेप किया ''माई पैरेन्ट्स आर आलसो सीनियर सिटीजेन्स'' और हँसते हुए मुझसे बोला, ''पप्पा डू यू स्टिल कंसिडर योर सेल्फ यंग।''

हम लोग निचली बर्थ पर लेटे ही थे कि ऊपर से शिशु पौत्र ने अपना दूध का गिलास गिरा दिया, जिससे नीचे की सीट पर लेटी पत्नी के बाल पूरी तरह भीग गए। सहयात्री भी सन्न। माफ कीजिएगा, अबोध बच्चा है आदि के डायलागों को सहजता से लेते हुए बगैर किसी आक्रोश या परिवाद के पत्नी अपना गीला सिर पोंछकर लेटने का उपक्रम करने लगीं।

एक प्रभावशाली व्यक्तित्व के मेरे हमउम्र सज्जन बड़े गौर से यह क्रियाकलाप देख रहे थे।

सुबह नींद खुली तो पाया कि लाइन की मरम्मत होने के नाते मुरी स्टेशन पर गाड़ी चार घंटे से खड़ी है और काफी लेट चल रही है। खैर,

क्या किया जा सकता है। प्रातः चाय (बेड टी) व नित्य-कर्म के दौरान सभी सहयात्री घुलने मिलने लगे, महिलाएं पारिवारिक वार्तालाप में, पुरुष अपना सामान्य ज्ञान बघारने में और शिशु पौत्र अपनी नटखट शरारतों में व्यस्त हो गये।

पर....संभ्रान्त सहयात्री एक बड़प्पन पूरित मौन के साथ सभी क्रियाकलाप का अवलोकन करते रहे। हाँ, कभी-कभी अपने साथी से कुछ बात अवश्य कर लेते थे।

तभी उनके दो साथी और आ गये और उनसे बोले, ''कलेक्टर साहब आइये साइड सीट पर बैठकर कुछ बतकही की जाय।''

संभ्रान्त व्यक्ति, जिनको लगता था कि पत्रा (पंचांग) देखकर ही मुस्कराते होंगे, गंभीरता से उठ कर साइड सीट पर बैठ गये। उनके साथी बतकही करते रहे पर कलेक्टर साहब मौन श्रोता बने रहे।

कलेक्टर रिटायर्ड ही सही थ्री टायर में नहीं सफर कर सकता। हालांकि, उनका अहम् भरा मौन जिसे घुन्नापन नहीं कहा जा सकता था, उनके वरिष्ठ प्रशासनिक अधिकारी होने का भान अवश्य करा रहा था। मैं इसी ऊहोपोह में था कि कलेक्टर साहब उठकर चले गये। शायद धूम्रपान हेतु।

उनके न होने का फायदा उठाते हुए उनके मित्रों से पूछा, ''क्या यह महोदय जिलाधीश रह चुके हैं ?''

सभी हँसने लगे पर एक जो स्वभाव से कुछ मसखरे प्रतीत हो रहे थे बोले, ''श्रीमान जी, यह गाथा थोड़ी लंबी है। यदि आप जानना चाहते हैं तो तो आपको मेरी बर्थ पर चलना होगा, कलेक्टर साहब के आने पर किस्सा अधूरा रह जाएगा।

समय काटना था, दिलचस्प किस्सागोई कि संभावना थी, सो आँखों-आँखों में ही श्रीमती जी से अनुमति लेकर मैं उनकी बर्थ पर चला गया।

बर्थ पर बैठते ही वह मुझसे बोले, ''सबसे पहले तो आपको बधाई। कलेक्टर साहब आप पति-पत्नी के सहयोगी व्यवहार से प्रभावित हैं। उनका इशारा कल नीचे की सीट के मुद्दे व शिशु की शैतानी पर क्रोध न करने की तरफ था।''

मैंने उत्सुकता में उनके काम्प्लीमेंट को इग्नोर करते हुए कहा कि मैं तो कलेक्टर साहब के बारे में जानने को उत्सुक हूँ।

वार्ताकार महोदय ने यूं प्रारम्भ किया-

''बात आठवें दशक की है जब इमरजेंसी के बाद बहुत बुरी तरह से हारने के बाद समुद्री ज्वार की दूसरी लहर की तरह कांग्रेस पार्टी पुन: सत्ता में लौटी। एक शहर जो कि प्रधानमंत्री के परिवार के अत्यंत निकट था और वर्ष 1977 के चुनाव में जिसे अंतर्राष्ट्रीय ख्याति प्राप्त हो गई, का किस्सा है। उस शहर के लोग लखनऊ को अपनी राजधानी न मान कर दिल्ली को मानते थे। उस शहर में यदि कोई दीवार भी ढहती थी तो उसकी गूंज दिल्ली में सुनाई पड़ती थी। वहाँ का जिलाधीश सीधे पीएमओ से निर्देश प्राप्त करता था और उसका तबादला भी दिल्ली से ही होता था लब्बोलुआब यह कि वहाँ का जिलाधीश वीआईपी होता था। उसका अतिमहत्त्वपूर्ण होना ही इस कहानी में मनोरंजन का तड़का देती है।''

मैं भी उनकी मसखरी शैली पर मुस्करा रहा था पर मन ही मन मूलकथा की प्रतीक्षा भी कर रहा था।

मेरे भावों को पढ़ते हुए उन्होंने किस्सा शुरू किया-

''एक दिन सुबह की परेड के समय जिला पुलिस लाइन में एक बहुत ही प्रभावशाली व्यक्तित्व के एक 30-32 वर्ष के व्यक्ति का आगमन होता है। आत्मविश्वास से परिपूर्ण वह व्यक्ति सीधे आर.आई. के पास पहुंचा और बोला। ''मैं इस जिले का नया डीएम हूँ। आपकी परेड का निरीक्षण करूँगा।''

आर.आई. ने झट सल्यूट मारा और जिलाधीश को परेड का इंस्पेक्शन कराया और कुछ चाय-नाश्ते का आग्रह किया। कलेक्टर साहब बड़ी शालीनता से बोले, ''नहीं, मैं मार्निंग वाक पर निकला था कि इधर आ गया। मुझे बंगले जाने के लिए गाड़ी की व्यवस्था करो। और हाँ, बंगले पर फोन भी कर दो कि मैं पहुँच रहा हूँ।''

आर.आई. ने तत्परता से कहा, ''सर'', और गाड़ी की व्यवस्था कर दी तथा कलेक्टर साहब के बंगले को भी सूचना दे दी कि नए कलेक्टर साहब पहुँच रहे हैं।

कलेक्टर साहब के जाने के बाद अपने माथे का पसीना पोंछते हुए आर.आई. ने सोचा कि कितना कड़क अधिकारी है, बगैर सूचना के मार्निंग वाक पर पैदल ही पुलिस लाइन के मुआयने पर निकल पड़ा। वह तो कहो सब ठीक था वरना... आर.आई. को झुरझुरी आ गई।

उधर डीएम आवास पर अफरा-तफरी का माहौल था। नए कलेक्टर साहब आ रहे हैं। छोटा सा शहर होने के नाते पेशकार का मकान थोड़ी ही दूर पर था, सूचना मिलने पर वह बगैर चेंज किए उसी कुर्ते पैजामे में भागा जिसमें वह सोया था। नए कपड़े तभी बनेंगे जब नौकरी बचेगी (रेवेन्यु विभाग में अभी भी अनुशासन बाकी है)। रास्ते भर पेशकार टेलीफोन अटैंडेंट को मन ही मन गरियाता जा रहा था, ''कलेक्टर साहब ने फोन किया होगा पर यह स्स...स्साले सो रहे होंगे तभी तो कलेक्टर साहब को गाड़ी के लिए पुलिस लाइन फोन करना पड़ा। अबकी मोटी गाली देते हुए बड़बड़ाये...अपनी नौकरी तो गर्क करेंगे ही साथ में मेरी नौकरी भी खा जायेंगे।''

मौलाना हाजी, नमाजी थे, सो सुबह-सुबह इतनी मोटी गाली देने से उन्हें जोर से खाँसी आ गई कि उन्हें साइकिल धीमी करनी पड़ी। ''इस साली...खांसी को भी ऐन इसी वक्त आना था। यह वाक्य मुँह से निकलते ही एक जबरदस्त खाँसी का दौरा फिर आया।''

वह समझ गए कि अल्लाह-ताला उन्हें दुर्वचन बोलने से रोक रहा है। अल्लाह उनके साथ है सोच के उन्हें तसल्ली हुई। दिमाग शांत हुआ।

बंगले पर एक अलर्ट शांति थी। डीएम के अर्दली शुक्ल जी पहले से ही मौजूद थे हालांकि, उन्हें भी नए कलेक्टर के आगमन पर वर्दी में होना चाहिए था पर आकस्मिकता में कार्यकुशलता के लिए ऐसी छोटी-छोटी औपचारिकताओं को दरकिनार करना पड़ता है। पुराने आदमी होने के नाते शुक्ल जी यह जानते थे।

पेशकार को रामजुहार कर शुक्ल जी भी उनके साथ ऑफिस में चले गए और बोले, ''ऐसा भी क्या वीआईपी जिला कि एक कलेक्टर छुट्टी पर जाये फौरन दूसरा कलेक्टर आ जाये। कौन मांछी छींकि गये? कौनो लूक लगाय दीहिस या फिर कोई चूक होइ गय ?''

पेशकार बोला, ''अल्ला जाने! हो सकता है कि ऊपर से फोन आया हो पर...(पेशकार खाँसी के डर से गाली नहीं निकाल पाये) इन मरदूदों ने फोन अटेण्ड ही न किया हो। हद हो गई कलेक्टर साहब को पुलिस लाइन से गाड़ी मंगानी पड़ी। शुक्ल जी, एडीएम सिटी साहब को सूचित करो।''

शुक्ल जी ने एडीएम साहब को फोन लगा कर पेशकार को थमा

दिया। फोन काफी देर तक बजने के बाद उठा। एडीएम साहब की रोबीली आवाज ''हैलो...!''

पेशकार बोला, ''हुजूर फौरन बंगले पर आ जायें। कलेक्टर साहब का तबादला हो गया। नये डीएम चार्ज लेने पहुँच गए हैं।'' फोन पर चाय के प्याले की खड़खड़ाहट आई, साहब का सुर बदल गया। चिंतित स्वर में उन्होंने पूछा, ''अरे, यह कैसे हुआ...?'' पर वह स्वयं जानते थे कि पेशकार के पास इसका उत्तर नहीं था।

तभी ऑफिस की घंटी बजने लगी। पेशकार एडीएम साहब का फोन छोड़ तुरंत डीएम के सामने हाजिर हो गए।

डीएम बोले, ''मेरे चार्ज-सार्टिफिकेट की व्यवस्था करो।''

''जी हुजूर'' कहकर पेशकार अपनी सीट पर लौट आये पर मन ही मन भुनभुनाते जा रहे थे। चार्ज-सर्टिफिकेट बनाओ...हुंह, क्या बनाऊँ अपना सर। कहीं बगैर आर्डर के चार्ज-सर्टिफिकेट बनता है। एडीएम साहब को आने में इतनी देर क्यों हो रही है। फिर एकाएक उनके चेहरे पर मुस्कान आ गई। एडीएम साहब लेट राइजर है। खबर सुनते ही उनको भी मेरी ही तरह बाथरूम जाना पड़ा होगा। पर अगले ही क्षण उनकी मुस्कराहट गायब हो गई। उनके पेशानी पर बल पड़ गये।

इतने साल डीएम के पेशकारी का अनुभव उनकी 'गट-फीलिंग' थी कि ''यार कहीं कुछ गलत हो रहा है।''

पर गलत क्या था ? यही तो समझ में नहीं आ रहा।

तभी अर्दली शुक्ल जी ने बताया, ''साहब अपने रहने के इंतजाम के लिये कह रहे हैं।''

पेशकार को झटका लगा। आज उसे क्या हो गया। पिछले साहब का बंगला खाली नहीं, नये साहब कहाँ रहेंगे, यह उसे पहले ही सोचना चाहिये था। अफसर को खुद पूछना पड़ा...।

उसने तत्काल फील्ड-हॉस्टल फोन पर कमरा नंबर चार जो अमूमन प्रधानमंत्री के लिये ही रिजर्व था, तैयार करने को कहा। आखिर, जिले का कलेक्टर भी तो जिले के लिए प्रधानमंत्री से कम नहीं था।

फील्ड हॉस्टल का कमरा नंबर चार...मतलब सुपर वीआईपी। तत्काल उसे उसने तहसीलदार को फोन किया। तहसीलदार को नये अधिकारी के आगमन की सूचना मिल चुकी थी। वह बगैर प्रश्न किये फील्ड हास्टल रवाना हो गये।

नये डीएम साहब अपनी नीली बत्ती की गाड़ी से फील्ड हॉस्टल रवाना हो गये। पेशकार ने देखा साहब के पास कोई लगेज नहीं था। सोच कर मुस्कराया, यह भी रेवेन्यू विभाग की ही जिम्मेदारी थी। अफसर बहुत कड़क है सोचते हुए उन्होंने एडीएम को फोन किया, ''साहब चेंज करने फील्ड हॉस्टल गये हैं। बेहतर होगा कि आप उनसे वहीं भेंट कर लें।''

एडीएम साहब ने जीप फील्ड-हॉस्टल की ओर मोड़ दी। पर फील्ड हॉस्टल पहुँचने पर साहब का संदेश मिला कि सभी अधिकारियों को आफिस में ही मिलने का हुक्म हुआ।

एडीएम साहब आफिस को चल पड़े।

ठीक दस बजे कलेक्टर साहब ऑफिस पहुंचे, सभी ने उनका सत्कार किया। उन्होंने धीरे से मुंडी हिला कर सभी का अभिवादन स्वीकार किया और ऑफिस में प्रवेश कर गये।

घंटी बजी। शुक्ल जी को आदेश हुआ सभी अधिकारियों को अंदर भेजो।

सभी अधिकारी अंदर पहुंचे। औपचारिक परिचय हुआ। सभी अधिकारियों ने विनम्र मुस्कान के साथ अपना परिचय दिया। जिसे साहब ने आँखें झपका कर स्वीकारा।

बड़ा कड़क अधिकारी है। कैसे गुजरेगी नौकरी इसके साथ। सभी सोच रहे थे।

तभी पेशकार ने आकर सलाम कर अर्ज किया, ''हुज़ूर! चार्ज सर्टिफिकेट के लिये स्थानांतरण आदेश के नंबर के लिये आदेश की जरूरत थी...।''

कुछ क्षण लगातार उन्हें घूरने के बाद कहा, ''टेलीफोन आदेश में नंबर बताया जाता है क्या?'' डीएम ने प्रतिप्रश्न किया।

पेशकार मौन।

डीएम साहब ने कहा, ''अब तक टेलीप्रिंटर पर आया नहीं?''

''इतने छोटे शहर में टेलीप्रिंटर कहाँ?'' कहकर पेशकार सलाम कर जाने लगे कि थोड़ा रुक कर एडीएम साहब के कान में कुछ कहा, वे तुरंत विजिटर्स रूम में आ गये।

''साहब चार्ज सर्टिफिकेट मांग रहे हैं।''

एडीएम - ''तो?''

''मुझे कुछ ठीक नहीं लग रहा है, न कोई सूचना, न कोई आदेश,

न लखनऊ से न ही दिल्ली से और ऐन इतवार के दिन ही नया अधिकारी चार्ज लेने भी आ गया ऐसा पहले तो कभी हुआ नहीं। सर, क्या आप लखनऊ या दिल्ली से बात कर सकते हैं?''

दिल्ली पीएमओ व लखनऊ के लिए हाट लाइन मौजूद थी। पर उसे इमरजेंसी के अलावा कलेक्टर साहब भी इस्तेमाल नहीं करते थे।

एडीएम साहब हाट लाइन का नाम सुनते ही टेंशनियाय गये। भरसक शांत रहने का प्रयास करते हुए बोले, ''मेरा बात करना ठीक होगा?''

पेशकार समझ ही नहीं पाया कि साहब का यह प्रश्न है कि उत्तर। फिर कुछ सोचते हुए बोला, ''ठीक है, मैं ही कुछ करता हूँ।'' कहकर चला गया। एडीएम साहब वापस मीटिंग में चले गये।

थोड़ी देर बाद पेशकार हाथ में डिक्टेशन लेने वाली कॉपी और पेंसिल लेकर हाजिर हुआ और बड़े अदब से कलेक्टर साहब से बोला ''हुजूर ट्रांसफर आर्डर संख्या के न होने पर हुजूर का बैच लिखने की जरूरत होगी, सो सरकार अपना आईएएस का बैच बताएँगे?''

सभी देख रहे थे पर केवल पेशकार ने नोटिस किया कि साहब का आत्मविश्वास कुछ क्षण के लिए डगमगाया। कुछ सोचने के बाद उन्होंने अपना बैच ईयर बताया और पुनः अधिकारियों से मुखातिब हो गये।

मीटिंग चलती रही। पेशकार दो कागज लेकर दाखिल हुआ। ''यह तो सर्टिफिकेट है और यह डीएम...के स्थानांतरण का घोषणापत्र है जिस पर आप दस्तखत कर दें तो यह मेरे लिए ट्रान्सफर आदेश के समान हो जाएगा।''

डीएम ने पढ़ा ''प्रमाणित किया जाता है कि डीएम रायबरेली का ट्रांसफर केंद्र सरकार/उ0प्र0 सरकार के टेलीफोनिक आदेश पर...।

डीएम ने घोषणा-पत्र पर दस्तखत किए फिर चार्ज सर्टिफिकेट पर दस्तखत करने के बाद रोब से मीटिंग लेना शुरू कर दिया।

फील्ड हॉस्टल से सूचना आ गई कि लंच तैयार है। अर्दली शुक्ल जी ने साहब को सूचना दी कि लंच तैयार है। लंच के बाद कुछ आराम भी कर लें आज छुट्टी के दिन भी हुजूर सुबह से व्यस्त हैं।

यह सुनकर साहब ने अनुपालन करने वाली दृष्टि से सभी को देखा। सभी यन्त्रवत उठ खड़े हुए। साहब नीली बत्ती की गाड़ी पर बैठ लंच के लिए निकल गये। सभी ने रिलैक्स होकर खुल कर सांस ली।

और एक दूसरे से बगैर बात किए अपनी गाड़ी से घर चले गये। सभी के मन में 'न भूतो न भविष्यति' का वाक्य घूम रहा था। ऐसा तो कभी नहीं हुआ।

सब तो अपने घर चले गये पर पेशकार साहब अभी भी आश्वस्त नहीं थे। पर कुर्सी पर ही आँखें बंद करके अधलेटे होकर बैठ गये और सुबह से अबतक की घटनाओं का सिंहावलोकन करने लगे। सबसे पहले जो चीज उनके दिमाग में आई वह यह थी कि सुबह से आज उन्होंने खैनी तो खाई नहीं। तत्काल उन्होंने खैनी बनाकर खाई। उनका दिमाग फिर से ताजा हो गया। यह सोचकर कि अब यहाँ फालतू टाइम क्यों बर्बाद करें, इतवार होने की वजह से साहब दुबारा नहीं आयेंगे। साहब उन्हें फिर कुछ खटका फिर 'ऊँह' करते हुए उन्होंने कहा मैंने अपनी तरफ से पूरी पेशबंदी कर ली आगे देखा जायेगा। पुराने डीएम दक्षिण भारत के थे, उन्हें सूचना मिली कि नहीं?

वह थोड़ी देर के लिए ठिठके, फिर पीक थूक कर चलने को उद्यत हुए। ऑफिस के दरवाजे पर पहुंचे ही थे कि टेलीफोन की घंटी घनघनाने लगी। बेमन से उन्होंने फोन उठाया। फोन पर दूसरी तरफ की आवाज सुनते ही उनका चेहरा आफताब हो गया।

दूसरी तरफ से पुराने डीएम साहब बोल रहे थे। उनकी आदत थी कि हेड ऑफिस से बाहर रहने पर वह एक बार जिले में फोन अवश्य करते थे। वीआईपी जिला ! कब क्या घट जाए सो रोज एक बार फोन जरूर करते थे।

पेशकार साहब ने सारी बातें एक सांस में बता डाली। उन्होंने यह भी बताया कि शक पर ही उन्होंने आगंतुक डीएम का बैच पूछा जिस पर वह लड़खड़ाये, तभी उनके लिखित घोषणा-पत्र देने के बाद ही चार्ज-सर्टिफिकेट भरा गया। असली डीएम साहब शांति से सुनने के बाद बोले, ''आपने अपनी तरफ से पूरा प्रयास किया। उसे किसी प्रकार भी शक न होने पाये कि उसका पर्दाफाश हो गया है। बड़े कप्तान से कहकर सिक्योरिटी के नाम से पहरा लगवा दो। मैं सुबह ही फ्लाइट से पहुँच रहा हूँ।...और 'हाँ' यह खबर किसी प्रकार भी लीक नहीं होनी चाहिए। सभी अधिकारियों को तुरंत सूचित करो।''

एडीएम साहब खाना खाने बैठे ही थे कि पेशकार का अर्जेन्ट फोन

आ गया। उन्हें खाना छोड़कर तुरंत ही बंगले जाना पड़ा।

अबकी बार एडीएम साहब के लिए डीएम आफिस खोल कर रखा गया था। आखिर, वह ही आफिशियेटिंग थे। साइड पर चेयर पर बैठे एडीएम साहब ने पूरी बात सुनी तो चौंक कर उछल गये। तुरंत अपना कोम्पोजर रिगेन (गरिमा को प्राप्त) करते हुए बड़े कप्तान को सूचित किया। आधे घंटे बाद फील्ड-हास्टल में जाकर डीएम साहब की 'सुरक्षा' का मुआयना करने के बाद घर लौटकर खाने के बाद लंबी तान कर सो गये। सुबह से तनाव में जो थे।

इतना कह कर मसखरे वक्ता कॉफी वेंडर को देखते हुए कुछ देर के लिए रुके। हम लोगों की उत्सुकता चरम सीमा पर थी। असली डीएम के आने के बाद क्या हुआ...? जानने को सभी उत्सुक थे। इसके लिए कॉफी का पेमेंट बहुत क्षुद्र शुल्क था। सो मेरे खर्चे पर कॉफी पीने के बाद वक्ता बगैर धन्यावद दिए पुनः चालू हो गए।

''फिर क्या हुआ, अगले दिन साहब ठीक दस बजे जब आफिस पहुंचे तो देखा कि बड़े कप्तान शहर कोतवाल के साथ उनके आफिस में मौजूद थे। यह भी एक्स्पेक्टेड था। हैंड शेक के बाद सभी बैठ गये। पर...? शहर कोतवाल ने सैल्यूट क्यों नहीं किया?''

डीएम साहब सोच ही रहे थे कि असली डीएम साहब का प्रवेश हुआ। सभी उठ खड़े हुए, कोतवाल ने सैल्यूट भी किया।

कोतवाल ने आगे बढ़कर नकली डीएम साहब को कुर्सी से जबरन हटा कर पड़ोस की कुर्सी पर लगभग पटक ही दिया। असली डीएम ने अपनी कुर्सी पर बैठते ही कोतवाल साहब को वर्जित किया वरना वह तत्काल ही थर्ड डिग्री पर आने वाले थे।

काफी देर हुई वार्ता के बाद भी नकली डीएम के आत्मविश्वास में कमी नहीं आई। लोगों को लगा कि वह मानसिक रूप से स्वस्थ नहीं है। सीएमओ साहब को भी जिला अस्पताल के फिजीशियन के साथ बुलाया गया। निष्कर्ष निकला कि वह महोदय एक ऐसे मनोरोग से ग्रसित थे जिसमें व्यक्ति कोई दूसरा व्यक्तित्व धारण कर लेता है और वैसा ही व्यवहार करने लगता है। सीएमओ ने समझाया, विशेषकर कोतवाल को, कि यह व्यक्ति दंड नहीं दया का पात्र है। डीएम ने भी स्ट्रिक्ट-कॉन्फीडेन्शियल्टी मेंटेन रखने की हिदायत दी।

खबर फैल चुकी थी पत्रकार एकत्र हो गये परंतु डीएम ने सभी को समझा बुझा कर मामला शांत करने की अपील की। जिले का नाम खराब होगा, प्रशासन की बदनामी होगी आदि आदि।

कलेक्टर साहब की पत्रकार बंधुओं से अच्छी ट्यूनिंग काम आई। कुछ छुटभइये अखबारों में खबर भी छपी पर उनकी पाठक संख्या कितनी होती है।

पूछ-ताछ के दौरान पता चला कि नकली डीएम दर्शन और अंग्रेजी से एम.ए. और बिहार के किसी विश्वविद्यालय में लेक्चरार थे।

डीएम साहब के कहने पर दो कांस्टेबल की सुरक्षा या अभिरक्षा में उन्हें ट्रेन में बैठाकर उनके वतन रवाना कर दिया गया।

मित्र-मंडली तभी से इन्हें कलेक्टर साहब पुकारती है और यह कोई ऐतराज भी नहीं करते। शायद अंदर से ही संतुष्टि महसूस करते हैं।

❐❐❐

नवम् रात्रि

महाभारत अभी तक का सबसे बड़ा ग्रंथ है। जब शासक निरंकुश हो जाता है तो राज्य में अनाचार बढ़ने लगता है। प्रजा ही नहीं वरन् राजपरिवार के सदस्य भी पीड़ित होने लगते हैं। यह पीड़ा और अनाचार व्यक्तिगत और सामूहिक आक्रोश का रूप धारण कर लेता है। अजेय प्रतीत होने वाला राजतंत्र भी इस आक्रोश के आगे टिक नहीं पाता और कुछ ही दिनों में नष्ट हो जाता है। धर्म की विजय और अधर्म का नाश होने के साथ ही महाभारत में कृष्णार्जुन संवाद के रूप में धर्म, कर्म की व्याख्या हुई, जो 'श्रीमद्भगवद्गीता' के नाम से प्रसिद्ध हुई।

हर संविधान में निहित होता है कि 'कानून सभी के लिए समान है।' यह जहां समाज के कमजोर लोगों को संरक्षण प्रदान करता है, वहीं अत्याचारियों व संविधान का उल्लंघन करने वालों के लिए दंड का भी प्रावधान करता है। पालन और दंड देने का दायित्व शासक का होता है।

जहाँ शासक न्याय और दंड कि व्यवस्था में 'मैं और मोर, तोर और मोरा' का विभाग (पक्षपात) करने लगता है उसी को मोह और अज्ञान कहा जाता है। यह 'मैं और मोर...' की भावना ही समस्त अनाचारों की जड़ है।

पूरी महाभारत और गीता का संदेश यही है।

धृतराष्ट्र युद्ध में अपनी विजय के बारे में आश्वस्त था। वह वास्तव में अंधा था अथवा पुत्र प्रेम में अंधा होने के कारण उसे अंधा दिखाया गया है- यह गंभीर विमर्श का विषय हो सकता है। परंतु यह सत्य है कि वह युद्ध में अपनी विजय के प्रति पूर्णरूप से आश्वस्त था। उसके आश्वासन के मूल में केवल दो व्यक्ति- भीष्म और कर्ण थे। भीष्म अपने समय के सर्वश्रेष्ठ योद्धा होने के अलावा 'इच्छा-मृत्यु' का वरदान प्राप्त थे। कौरव पक्ष में कर्ण ही मात्र एक व्यक्ति था जिसका दुर्योधन के

प्रति अटूट अनुराग था। केवल कर्ण ही था जो कि धनुर्धारी अर्जुन का सामना करने का सामर्थ्य रखता था। दुर्योधन के प्रति कर्ण का प्रेम जितना प्रबल था उतना ही अर्जुन के प्रति उसकी प्रतिहिंसा उग्र थी।

वेद व्यास से दिव्य दृष्टि का वरदान पाया संजय दसवें दिन के युद्ध में भीष्म के पराभव के उपरान्त पहली बार धृतराष्ट्र के सम्मुख उपस्थित होकर रोते हुए बताता है-

'भीष्म का पराभव...' सुनकर धृतराष्ट्र तत्काल ही मूर्च्छित हो गया। वह जान गया कि कौरवों का अंत निकट है।

× × × × ×

आज युग के सबसे भीषण महासमर का नवां दिन सूर्यास्त के उपरांत समाप्त हो चुका था। दोनों दलों में शत्रुता मात्र मन में सीमित हो चुकी थी। नियमों के अनुसार शत्रु-दल सूर्यास्त के बाद एक दूसरे पर आक्रमण नहीं करते थे। एक पक्ष का सदस्य दूसरे शिविर में आसानी से आ-जा सकता था। हर पक्ष के चिकित्सा कर्मी घायलों को शिविर पहुंचाने में व्यस्त थे। नायकों को उनके शिविर में ही चिकित्सकीय उपचार उपलब्ध था। कृष्ण, युधिष्ठिर के साथ घायलों से मिल कर उनकी चिकित्सा व्यवस्था का हाल लेकर अपने शिविर की ओर बढ़ चले।

दोनों पक्षों में अभूतपूर्व हलचल थी। आज की घटना अद्भुत थी। भीष्म आज कृष्ण को शस्त्र-ग्रहण करने की प्रतिज्ञा लेकर समर में उतरे थे। गंगा पुत्र ने पांडव सेना को लगभग तहस-नहस कर दिया। कृष्ण ने देखा अर्जुन पूरे मनोयोग से पितामह का सामना नहीं कर रहे थे। अंततः कृष्ण अपनी प्रतिज्ञा तोड़ कर हाथ में सुदर्शन चक्र लेकर कूद पड़े। पार्थ ने कृष्ण को रोकना चाहा, पर कृष्ण को रोक नहीं सका। दोनों सेनाएँ स्तब्ध हो गईं। युद्ध रुक गया सभी चित्र लिखित से यह दृश्य देख रहे थे। कृष्ण की प्रतिज्ञा टूट चुकी थी।

कृष्ण के शस्त्र उठाते ही भीष्म रथ छोड़कर कृष्ण के सम्मुख प्रणत हो गए। कृष्ण का रोष खत्म हो गया; वह शांत हो गये। तभी द्रोणाचार्य ने युद्ध समाप्ति का शंख बजा दिया। सभी सैनिकों के अस्त्र-शस्त्र जहां जिस अवस्था में थे वहीं रुक गए। युद्ध समाप्ति की घोषणा के उपरांत

कोई भी एक दूसरे पर वार नहीं कर सकता था। सेनाएँ अपने शिविर को लौट पड़ीं। कौरव पक्ष में उत्साह था। भीष्म अपने को अजेय सिद्ध कर चुके थे। केवल कर्ण और शकुनि अपने शिविर में चिंताग्रस्त बैठे थे। कर्ण पितामह के सेनापतित्व काल में युद्ध से विरत रहने का निर्णय तो ले चुका था, परंतु रणांगन की गतिविधियों से अनभिज्ञ नहीं था। वह दुर्योधन के शिविर को चल पड़ा।

शकुनि

पूरी महाभारत का सूत्रधार गांधार-कुमार शकुनि अपने शिविर में चिंतामग्न था। उसे पहली बार शीतऋतु का एहसास हुआ। आज तक उसे अपने लक्ष्य पर केन्द्रित होने के कारण माघ की सर्दी का पता ही नहीं चला। परंतु आज पहली बार असफल होने की आशंका से वह काँप उठा। उसका मन हुआ कि वह शिविर में जलती हुई मशाल के निकट खड़ा हो जाये, परंतु यह उसकी मर्यादा के अनुकूल न होगा। उसने सैनिक को आवाज़ देकर अग्नि-पात्र लाने को कहा। अग्नि-पात्र में हाथ सेंकने के बाद ही उसका मस्तिष्क कार्य करने योग्य हुआ। उसे पूर्ण विश्वास था कि युद्ध में कृष्ण ही भीष्म का वध कर सकते हैं। शकुनि के लगातार उकसाने पर ही भीष्म ने कृष्ण को शस्त्र उठाने को विवश करने प्रतिज्ञा की थी। उसका मानना था कि यदि कृष्ण ने शस्त्र उठाया तो भीष्म का वध करके ही शांत होंगे, और... भीष्म के बाद कौरव पक्ष में कोई भी ऐसा वीर नहीं बचेगा जिसे अर्जुन और भीम पराजित न कर सकें। इस प्रकार भीष्म और सम्पूर्ण हस्तिनापुर का विनाश आज नवें दिन ही हो सकता था। पर आज तो अंत में सब कुछ उलट गया। कृष्ण ने शस्त्र तो उठाया, परंतु भीष्म को जीवित छोड़ दिया। कृष्ण इतना मूर्ख कैसे हो सकता है? इतने सुनहरे अवसर को यूं ही गवां दे-

...कितने हर्ष से गांधार नरेश की कन्या गांधारी के विवाह के लिए स्वयंवर आयोजित किया गया था। गांधारी की सुंदरता की ख्याति दूर-दूर तक फ़ैल चुकी थी। ऊंचा कद, गौर वर्ण और नीली आँखें ऊपर से बुद्धिमती कस्तूरी-कांचन योग। कहा जाता था कि गांधार राज स्वयं उतने सक्षम नहीं थे। परंतु उनकी बेटी राज्य के आंतरिक मामलों में अपने पिता

की सलाहकर थी, वहीं उनका पुत्र कुमार शकुनि अपनी नीतियों से सेना और आसपड़ोस के राजाओं से संबंध सुधार कर व्यापार को बढ़ावा दे रहा था। गांधार का भविष्य अत्यंत उज्ज्वल था।

वहीं हस्तिनापुर में भीष्म को गांधारी सरीखे गुणों वाली ही कन्या की खोज थी, जो नेत्रहीन धृतराष्ट्र की आँखें बन सके और साथ ही साथ उसकी सलाहकार भी बन सके। भीष्म गांधार-राज से अपने भ्रातृज धृतराष्ट्र के लिए उनकी कन्या का हाथ मांगने चल पड़े। उन्हें आशा थी धृतराष्ट्र के नेत्रहीन होने का समाचार संभवत: गांधार तक न पहुंचा हो। यदि पहुँच भी गया हो तो आर्यावर्त में कौन शासक है जो हस्तिनापुर से संपर्क का उत्सुक न हो। विवाह भी राजनीति का ही एक हिस्सा है।

गांधार कुछ ही दूर रह गया होगा कि भीष्म को सूचना मिली कि गांधार में राजकुमारी का स्वयंवर आयोजित हुआ है। पहले तो भीष्म ठिठके पर बाद में उन्होंने अपने प्रस्ताव के साथ आगे बढ़ना ही ठीक समझा।

सभा में गंधर्वराज के बाईं ओर गांधारी वरमाला लिए खड़ी थी और गांधार कुमार शकुनि दाहिनी ओर खड़ा होकर अपनी बहन का स्वयंवर घोषित कर चुका था। पूरी सभा में रोशनी का समुचित प्रबंध था, फिर भी सभा गांधारी के सौन्दर्य से ही प्रदीप्त दिख रही थी। दूर-दूर देशों के राजकुमार आए थे वह मंत्रमुग्ध होकर राजकुमारी को निर्निमेष देख रहे थे। गांधारी वरमाला के साथ चलने को हुई ही थी, कि अचानक बीच में तूफान की तरह भीष्म प्रकट होता है। वह पूरी युद्ध वेषभूषा में था। उसके साथ कुछ अंगरक्षक भी थे। बादलों के समान गंभीर स्वर में भीष्म ने अपना परिचय दिया, फिर सभी राजाओं का मान-मर्दन करते हुए ऊंचे स्वर में घोषणा की कि वह गांधारी को हस्तिनापुर राज्य के ज्येष्ठ कुरु कुमार धृतराष्ट्र के निमित्त ले जा रहा है। किसी भी क्षत्रिय राजा में यदि उसे अपने शस्त्रों से रोक सकने में समर्थ हो तो वह द्वंद्व-युद्ध हेतु प्रस्तुत है।

उपस्थित राजाओं में से किसी का भी साक्षात्कार भीष्म से नहीं हुआ था। उन्होंने मात्र उसके शौर्य की गाथाएँ ही सुन रखी थीं। अपनी कुठार से कई बार क्षत्रियों का विनाश करने वाले भगवान् परशुराम भी

भीष्म को युद्ध में झुका नहीं पाये थे। ऐसे बलशाली से साधारण राजा क्या, स्वयं गांधारराज भी मुकाबला नहीं कर सकते थे। भीष्म के सभा में प्रवेश करते ही स्वयंवर समाप्त हो चुका था। शकुनि ने अपनी बहन को अंत:पुर भेज दिया। गांधारराज इतने किंकर्तव्य विमूढ़ हो चुके थे कि ऐसे दुर्धर्ष योद्धा का उठकर स्वागत करना भी भूल गए। बदली हुई परिस्थितियों में तत्काल निर्णय लेकर नीतिकार कुमार शकुनि ही आगे बढ़ा बोला,

''गांधारराज की सभा में आपका स्वागत है गंगापुत्र भीष्म।''

धीरे-धीरे सभा में उपस्थित सभी राजा भीष्म को प्रणाम करके चुपचाप सभाग्रह से बाहर निकल गए। बाहर आकर भीष्म पर सामूहिक रूप से आक्रमण करने पर विमर्श करने के लिए सभी राजा एक बार फिर से एकत्र हुए। सभी राजाओं की सेनाएँ नगर परिधि के बाहर बनी छावनियों में रोक दी गई थीं। उन्हें अपने राजाओं के पास आने में समय लगता। वहीं हस्तिनापुर के मुट्ठी भर सेनानियों ने बाहर से आने वाले सभी मार्गों को अपने बाण के निशाने पर ले रखा था। सेनाओं का यहाँ तक पहुँचना काफी कठिन था। सभी राजा सामूहिक रूप से भीष्म और उनके अंगरक्षकों का मिलकर भी मुक़ाबला नहीं कर सकते थे। अत: सभी सिर झुकाकर अपने-अपने देश को प्रस्थान कर गए।

राजसभा में अब भीष्म के अलावा वहाँ मात्र गांधारराज और कुमार शकुनि ही रह गए थे। गांधारराज को इस प्रकार विवशता में भी अपनी बेटी को हस्तिनापुर की पुत्रवधू बनाने में कोई कठिनाई नहीं थी। परन्तु उन्हें अवगत हो चुका था कि ज्येष्ठ कुरु कुमार दृष्टिहीन है। यही कारण था की स्वयंवर में हस्तिनापुर आमंत्रित नहीं था। अब दुविधा थी कि क्या कुमारी एक दृष्टिहीन पुरुष से ब्याहना स्वीकार करेगी?

यह विचार कर गांधारराज ने भीष्म से कहा, ''वीर-शिरोमणि देवव्रत, मेरी पुत्री के लिए हस्तिनापुर की पुत्रवधू बनना गांधार के लिए गर्व का विषय होगा। पर...यदि आप गांधार से संबंध करना चाहते हैं तो फिर आपने कुमार पांडु के लिए मेरी बेटी का हाथ क्यों नहीं मांगा।''

वह भीष्म की उपस्थिति में धृतराष्ट्र को अंधा कहने का साहस नहीं कर सके। सो वही बात उन्होंने कुछ घुमाकर कही।

भीष्म ने बड़ी शालीनता से कहा, ''महाराज, संभवत: आप भूल रहे हैं कि मैं ज्येष्ठ कुमार का प्रस्ताव लाया हूँ। इस प्रस्ताव से आपको प्रसन्न होना चाहिए''। भीष्म ने धृतराष्ट्र को भावी सम्राट होने की संभावना की ओर इंगित किया। फिर कुछ रुककर बोले, ''बड़े भाई के रहते छोटे भाई का विवाह शास्त्रोक्त होगा क्या?'' इस बार भीष्म के स्वर में पर्याप्त कठोरता थी।

अपने पिता और बहन की पीड़ा को स्मरण कर राजकुमार शकुनि के सारे शरीर से मानो ज्वालायें निकलने लगीं। उसे अग्नि-पात्र का ताप असह्य हो उठा। उसने एक ही चरण प्रहार से अग्नि-पात्र को दूर फेंक दिया। तप्त अग्नि-पात्र से उसका पैर भी अवश्य जला होगा, परंतु मन में उमड़ते ज्वालामुखी के सम्मुख वह कुछ भी नहीं था। उसे जलन का आभास भी नहीं हुआ। जबतक सेवक धधकते हुए अंगारों को समेटे, शकुनि बड़ी व्यग्रता से लंगड़ाते हुए दुर्योधन के शिविर को चल पड़ा।

उसने पाया कि दुर्योधन के शिविर में कर्ण और द्रोणाचार्य पहले से ही मौजूद थे। वह आश्वस्त हुआ, क्योंकि दुर्योधन के बाद अपने लक्ष्य सिद्धि के लिए उसे कर्ण पर ही भरोसा था। इसलिए जब भी अवसर होता वह कर्ण के अर्जुन विद्वेष को भड़काता रहता था। परंतु कृष्ण के पाँच गाँव वाले संधि-प्रस्ताव की पहल के बाद कर्ण अर्जुन की आलोचना पर पहली सी हिंसक प्रतिक्रिया नहीं देता था। शकुनि इसे भी कृष्ण की माया का प्रभाव मानता था और सशंकित था। पर कर्ण की दुर्योधन के प्रति अटूट आस्था देख वह पुन: संतुष्ट हो जाता था।

आखिर, भीष्म और समस्त हस्तिनापुर के विनाश में उसका ज्येष्ठ भांजा ही तो उसका अमोघ शस्त्र था।

दुर्योधन

दुर्योधन के शिविर में आज की विजय का उल्लास था। मद्यपान का दौर चल रहा था। सभी आज की घटना का अपने-अपने दृष्टिकोण से बखान कर रहे थे। कुछ कह रहे थे की आज पितामह ने अपनी श्रेष्ठता सिद्ध कर दी। कुछ के अनुसार पितामह के सम्मुख 'पारथ बिचारो पुरुषारथ करैगो कहा' की उक्ति चरितार्थ हो चुकी थी। अर्जुन का

सर्वश्रेष्ठ धनुर्धर होने का मोह भंग हो चुका था। विवशता में कृष्ण को अपनी प्रतिज्ञा भंग कर सुदर्शन उठाना पड़ा पर फिर भी वह भीष्म का पराभव नहीं कर सके।

दुर्योधन लड़खड़ाती वाणी में बोला, ''अब पांडवों के विनाश में कुछ दिन ही बाकी हैं।'' फिर कर्ण को आया देख उसे गले लगा कर बोला, ''मित्र, आज तुम पांडवों की दुर्दशा नहीं देख पाये। आज पितामह ने आधी से ज्यादा शत्रु सेना का नाश कर दिया। कृष्ण अपनी प्रतिज्ञा तोड़ कर भी पितामह का बाल भी बांका नहीं कर पाया। अब युद्ध कुछ दिन का ही शेष रह गया है। इस निश्चित विजय के उपरांत भी मुझे केवल एक ही दु:ख शेष है। युद्ध से विरत होने के कारण तुम्हारे हाथों से अर्जुन का वध न हो सकेगा। वह पितामह का ही लक्ष्य बनेगा। यह भी संभव है कि अर्जुन की रक्षा में कृष्ण भी मारा जाये। उस ग्वाले की मृत्यु हमारे लिए बहुत सुखदायी होगी। उसे बचना भी नहीं चाहिए वरना वह आगे भी हमारे विरुद्ध कुचक्र रचता रहेगा।''

कर्ण ने बड़े दुखी मन से अपने मद्यप मित्र को पुन: उसके आसन पर बैठाया। वह सोच रहा था कि दुर्योधन मात्र एक घटना को लेकर उत्साहित हो रहा है। युद्ध में कभी एक और कभी दूसरा पक्ष प्रबल होता जान पड़ता है, पर वह पल निर्णायक नहीं होता। विजय उसी की होती है जो युद्ध के उतार-चढ़ाव को समभाव से देखकर आगे की ब्यूह रचना करते हैं; सुरा पीकर मदहोश नहीं होते। कर्ण ने दुर्योधन को प्रबोध करने की मुद्रा में कहा, ''राजन, आज की विजय की बधाई। तुमने कृष्ण की प्रतिज्ञा भंग होते तो देखी परंतु संभवत: कृष्ण के सम्मुख भीष्म की प्रणति तुम नहीं देख पाये। यदि पितामह शस्त्रधारी ही रहते और युद्ध समाप्ति का शंख-घोष न हुआ होता तो संभवत: युद्ध आज ही समाप्त हो गया होता।'' कुछ रुककर कर्ण बोला, ''इसलिए हे मित्र, तंद्रा से बाहर निकलो और कल की सोचो। कृष्ण को क्या तुम नहीं जानते? आज कृष्ण की प्रतिज्ञा भंग हो चुकी है। कल यदि कृष्ण सारथी का वेश त्याग कर पांडवों के सेनापति के रूप में उतर पड़ा तो विषम स्थिति उत्पन्न हो सकती है। इस समय कृष्ण को वर्जने में सक्षम तुम्हारे गुरु बलराम

भी यहाँ नहीं हैं। यदि कृष्ण पूर्ण रूप से युद्ध करने उतर पड़ा तो, विचार करो, क्या यादवों की विपुल सेना कौरवों का साथ देगी?...नहीं!

कहाँ विजय का उल्लास और कहाँ कर्ण की बातों का यथार्थ। वह आज की जिस घटना को अपनी पूर्ण विजय की ध्वनि समझ रहा था वह आने वाले कल को कौरवों के पूर्ण विनाश की भूमिका हो सकती है। उसके स्वर और चाल से मद्यप लड़खड़ाहट एकदम गायब हो गई। वह कर्ण की बातों का मनन कर रहा था कि...।

''राजन, जीवन में पहली बार मैं राधेय से सहमत हूँ।'' गुरु द्रोणाचार्य शिविर में प्रवेश कर चुके थे। उन्होंने कर्ण की पूरी बात सुन ली थी।

'राधेय'...कर्ण का मन कडुवा हो गया। प्रशंसा में भी द्रोण उसे आहत करना नहीं भूले। कर्ण ने इस अपमान पर कोई प्रतिक्रिया नहीं व्यक्त की।

''गुरुदेव, अब आप ही हस्तिनापुर को बचा सकते हैं। पितामह ने तो अपने अहंकार से उस दुष्ट चरवाहे को युद्ध में उतरने का मौका दे दिया। कल कृष्ण अपने चक्र से हमारे सेनापतियों का विनाश करेगा, वहीं हमारे ही व्यूह में सन्नद्ध उसकी यादवी सेना हमारी ही कौरव सेना का संहार करेगी। हस्तिनापुर को बचा लीजिये गुरुदेव, बचा लीजिये।'' कहकर दुर्योधन द्रोणाचार्य के चरणों में लिपट गया।

कर्ण यह सब निर्विकार भाव से देख रहा था, उसने दुर्योधन को उठाने का कोई प्रयास नहीं किया। वह जानता था कि दुर्योधन बालकों की भांति गिड़गिड़ा कर अपनी बात मनवाने की कला में माहिर था। यह कला उसने अपने अंधे पिता से सीखी थी।

वहीं गुरु द्रोणाचार्य इस बिलइया-दंडवत से प्रभावित हुए बिना नहीं रह सके। उन्होंने दुर्योधन को उठाते हुए कलके युद्ध की नीति निर्धारित की कहा- ''देखो, युद्ध नीति निर्धारण का कार्य तो सेनापति भीष्म का है, परंतु तुम राजा के रूप में अपनी तरफ से भीष्म की सुरक्षा बढ़ा दो। मात्र एक दो नहीं कई महारथियों को भीष्म के चारों ओर सुरक्षा का घेरा बनाने को कहो। और यदि फिर भी कृष्ण की वजह से भीष्म का पराभव

होता है तो...तुम...तुम कर्ण तत्काल ही युद्धभूमि में उतर पड़ना।

दुर्योधन गुरु की इस रणनीति से कुछ आश्वस्त हुआ, परंतु उसके मन में शंका बैठ चुकी थी। 'क्या इच्छा-मृत्यु का वरदान पाये भीष्म का भी पराभव संभव है...?'

× × × × ×

द्रौपदी

जिन नारियों की वजह से इतिहास में सबसे अधिक उलट फेर हुए हैं उसमें सीता और द्रौपदी का स्थान सर्वोच्च है। परंतु द्रौपदी ने अपने जीवन में जितने उतार चढ़ाव देखे वह संभवत: सीता की परिस्थिति से अधिक कठिन थे। सीता अनुसूया और बेहुला की पथगामिनी होकर सती कहलाईं, वही द्रौपदी पाँच-पाँच पतियों की पत्नी होते हुए भी प्रात:स्मरणीय कन्यायों में सम्मिलित हुई। जन्म से ही वह हस्तिनापुर विरोध की घुट्टी पीकर बढ़ी, राजनीतिक कुचक्र में तपी, पर अंत में हस्तिनापुर की कुलवधू बनी। दुर्योधन के प्रचंड विरोध के चलते हस्तिनापुर से अलग यमुना पार खांडव वन प्रदेश में पांडवों को एक नया राज्य मिला। यह निर्णय शकुनि की इच्छा के विरुद्ध था। वह चाहता था की बारूद और आग की भांति कौरव-पांडव जितने समीप आयेंगे, विस्फोट की संभावना उतनी ही प्रबल होगी। उसे विश्वास था कि पांचाली उसके इस प्रयास में अग्नि में घी के समान सहायक सिद्ध होगी। परंतु युधिष्ठिर ने इस प्रस्ताव को बगैर प्रतिरोध के स्वीकार कर लिया। शकुनि के प्रतिशोध को सिद्ध होने में अभी वर्षों का अंतराल था।

खांडवप्रस्थ इंद्रप्रस्थ बना, मगध का जरासंध भीम के हाथों मारा गया, पांडव चक्रवर्ती सम्राट बने। लगा कि अब दोनों परिवारों का वैमनस्य समाप्त हो गया है। जहाँ भीष्म इस शांति से आश्वस्त हुए वहीं शकुनि निराश। परन्तु तभी पांचाली के जिह्वा-दंश ने घुमड़ते हुए ज्वालामुखी को उत्तेजित कर दिया। द्रौपदी निर्वसन हुई पांडवों का निर्वासन हुआ, धनंजय को किन्नर बनना पड़ा; तब कहीं द्रौपदी के खुले बालों को सवंरने का समय आया। पर राह में गंगा पुत्र भीष्म अडिग थे।

वहीं अर्जुन जिस पर पांडवों की आशाएँ टिकी थीं, वह वीर आज पितामह मोह से ग्रसित था। शकुनि और पांचाली दोनों ही निराश हो गए। अब दोनों को ही सिर्फ एक का ही सहारा था- और वह थे वासुदेव कृष्ण जिन्हें लोग अवतारी पुरुष या भगवान् मानने लगे थे।

लोग चाहे अच्छे हों या बुरे; भगवान् तो सभी का होता है।

आज की पराजय से द्रौपदी का हृदय विषाक्त हो गया। उसे भीष्म से अधिक क्रोध अर्जुन पर था। उसकी जिह्वा एक बार फिर लपलपाई। वह कृष्ण के पास गई। कृष्ण पांडवों के साथ विमर्श कर रहे थे। कृष्ण ने कहा कि इसका निराकरण तो स्वयं गंगापुत्र भीष्म ही कर सकते हैं। इसके बाद सब भीष्म के शिविर की ओर चल पड़े।

× × × × ×

आज की घटनाओं के बाद गंगापुत्र भीष्म अपने शिविर में बैठे आत्मविवेचन में डूबे थे। आज की घटना से वह स्वयं स्तब्ध थे। उन्हें विश्वास ही नहीं हो रहा था कि आज कृष्ण ने उनका प्रण रखने के लिए स्वयं अपनी प्रतिज्ञा भंग कर दी!

कृष्ण वैसे तो वय में उनके पौत्र पांडवों के समकक्ष थे पर भीष्म उसका बहुत सम्मान करते थे। बहुत ही विलक्षण व्यक्ति था कृष्ण। उसका व्यक्तित्व ही नहीं उसका कृतित्व भी अद्‌भुत था। इस उम्र में ही वह लोक-कथाओं में महमानव और अवतारी पुरुष बन चुका था। कृष्ण जब स्वयं उनके समक्ष प्रस्तुत होता था तब भीष्म अभिभूत हो जाते थे। आज यह सोचकर उन्हें पछतावा हो रहा था कि कहाँ आयु में सबसे वरिष्ठ होते हुए भी भी उन्होंने अपने पौत्र के समान कृष्ण की प्रतिज्ञा तोड़ने का प्रण ले लिया; वहीं कृष्ण ने उनके हठ को रखने के लिए अपना प्रण तोड़ दिया।

फिर उन्हें याद आया कि ऐसी घटनाएं उनके साथ पहले भी घट चुकी हैं। युग के सबसे प्रचंड योद्धा माने जाने वाले श्री परशुराम से युद्ध में गुरु ने भीष्म के प्रति वात्सल्य भाव बनाए रखा था। गुरु परशुराम ने भी युद्ध में उनका ही मान रखा था। उनका मन कृतज्ञता से भर आया। गुरु की भाँति कृष्ण ने उनका मान रखा।

उन्हें लगने लगा कि वह स्वयं केवल कुरु वंश के ही नहीं युग के सबसे हठी व्यक्ति हैं। वह कितने आत्म-केन्द्रित हो गये थे। उनके पुत्र समान भाइयों की असमय मृत्यु के बाद जब कुरु वंश निर्मूल होने के कगार पर था, तब उनकी माता ने उनसे सिंहासन पर आरूढ़ होने को कहा ही नहीं बल्कि आदेश भी दिया था। पर उन्होंने पहली और अंतिम बार अपने हठ के चलते माता की आज्ञा का निरादर किया। आज भी कभी-कभी गृहकलह से कुरु वंश के आसन्न विनाश को देख द्रोणाचार्य दबे स्वर में यह अवश्य इंगित कर देते हैं कि काश! गंगा पुत्रभीष्म माता की आज्ञानुसार विवाह कर हस्तिनापुर के सिंहासन पर आरूढ़ हो जाते तो विश्व आज के महासमर से बच गया होता। वेदोक्त कार्य के पहले संकल्प लेने की परिपाटी, लोक कल्याण के लिए निश्चित की गई थी। परंतु जिस संकल्प से जनसाधारण या परिवार का अपकार हो, ऐसे संकल्प को त्यागना ही श्रेष्ठ है।

और संभवत: कृष्ण ने युद्ध में अपनी प्रतिज्ञा तोड़कर भीष्म को यही संदेश दिया था।

उन्हें याद आया कि पितामह होते हुए भी वह अर्जुन के ऊपर तीक्ष्णतम बाणों से प्रहार कर रहे थे वहीं विश्व का सर्वश्रेष्ठ धनुर्धर उनके प्रति सम्मान के चलते उसका उतना कठोर प्रति-उत्तर नहीं दे रहा था। वह स्वयं घायल हो चुका था। उसका सखा, सारथी रूप में निहत्था कृष्ण, जिसे वह अपना आराध्य मानता था, वह भी घायल हो गया। फिर भी न तो उन्होंने अपना प्रहार रोका और न ही अर्जुन ने उग्र रूप धारण किया। उस समय मात्र कृष्ण की प्रतिज्ञा भंग कराना ही उनका ध्येय रह गया था। वह इतने पाषाण हृदय कैसे हो गए! यह उनका अहंकार नहीं तो क्या था...?

वहीं उनका प्रण रखने और लोककल्याण के लिए कृष्ण ने अपनी प्रतिज्ञा तोड़ दी। कृष्ण की प्रतिज्ञा भंग होते ही दोनों पक्षों में हाहाकार मच गया। पांडव दल में कृष्ण की प्रतिज्ञा टूटने पर, वहीं कौरव दल में कृष्ण का रौद्र रूप देखकर पितामह की कुशल को लेकर घबरा गये। परंतु भीष्म की प्रणति ने कृष्ण का क्रोध एकाएक शांत कर दिया।

एक बार तो भीष्म ने सोचा कि अच्छा होता यदि कृष्ण ने उनका वध ही कर दिया होता। उनके पराभूत होते ही कुरु पक्ष के सारे योद्धा पलायन कर जाते। द्रोणाचार्य युद्ध बंद कर देते। पांडव विजयी हो जाते। भीषण रक्तपात और नरसंहार टल जाता। परंतु दुष्टदलन... जो कृष्ण का ध्येय है, न पूरा हो पाता।

भीष्म ने सोचा, जो होता है, अच्छा ही होता है।

और फिर...एकाएक शताधिक वर्षों के जीवन व्यतीत होने के बाद, आज पहली बार उन्हें अपने 'भीष्म' संबोधन से वितृष्णा हुई।

उन्होंने निश्चय कर लिया कि उनका समय आ गया है। उन्हें अब प्रयाण करना चाहिये; पुरातन को नवीनता के लिए स्थान देना चाहिये।

तभी शिविर द्वार पर दस्तक हुई...कृष्ण के पीछे द्रौपदी और पांचों पांडवों ने प्रवेश किया।

भीष्म आत्मलीनता में मुस्कराये। कृष्ण सर्वज्ञ है क्या...।

देवकीनन्दन कृष्ण का प्रणाम स्वीकार करें पितामह!

वासुदेव कृष्ण के स्थान पर आज कृष्ण ने देवकी पुत्र नाम से अपना परिचय क्यों दिया? आज भीष्म हर छोटी से छोटी बात में कोई गूढ़ निहतार्थ ढूँढ़ रहे थे। यह सम्बोधन कृष्ण ने संभवत: उन्हें याद दिलाने के लिए प्रयोग किया कि कृष्ण ने अपनी दूसरी माँ के स्नेह और भक्ति को कर्तव्य पालन करने में आड़े नहीं आने दिया। वहीं वह स्वयं दूसरी माँ की प्रत्येक सही-गलत आज्ञाओं को बगैर विचारे, पालन करते गए।

कृष्ण के चेहरे पर हमेशा की तरह शांत आश्वस्त करने वाली मुस्कान थी। कृष्ण के आभा-मण्डल से पूरा शिविर प्रदीप्त हो उठा था। कृष्ण के साथ सभी पांडवों ने भीष्म को प्रणाम किया। द्रौपदी जब प्रणाम करने सामने आई तो भीष्म ने देखा कि द्रौपदी के लंबे बाल जिन्हें वह हमेशा कंधे के पीछे रखती थी, आज आगे कर रखे हैं! बालों के माध्यम से वह भीष्म को कुछ स्मरण कराना चाहती है?

फिर भीष्म की निगाह अपने प्रिय पौत्र अर्जुन पर पड़ी। वह सकुचाया सा खड़ा था। संभवत: कृष्ण की प्रतिज्ञा भंग होने का विषाद अभी भी उसके मन को साल रहा था।

गंगापुत्र ने उठ कर कृष्ण का स्वागत किया बोले, ''आओ मोहन, मैं तुम्हारा ही ध्यान कर रहा था। आज तुमने मेरा संकल्प रखने के लिए अपना संकल्प क्यों तोड़ा?'' भीष्म के स्वर में श्रद्धायुक्त जिज्ञासा थी।

पर कृष्ण अकेला नहीं था उसके पीछे पाँचों पांडव भी थे। पांडवों को देख भीष्म का चित्त प्रसन्न हो गया... तभी उन्होंने देखा पांडवों के पीछे द्रौपदी भी थी और द्रौपदी के खुले एड़ी तक लहराते बाल...संभवत: उन्हें कुछ स्मरण करा रहे थे!

भीष्म ने एकाएक निर्णय किया कि उनके प्रयाण का समय आ चुका है।

उन्होंने कृष्ण से मंत्रणा कर युधिष्ठिर को विजयी भव और द्रौपदी को सौभाग्यवती भव का आशीर्वाद देकर शिविर से विदा किया।

युद्ध के दसवें दिन जब दोनों सेनाएँ आमने सामने खड़ी हुईं तो सबने देखा- आज पांडव दल का सेनापति शिखंडी था...।

❐❐❐